संत शिरोमणि आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के
51वें आचार्य पदारोहण दिवस (मार्गशीर्ष कृष्ण द्वितीया) एवं **अर्हं योग प्रणेता**
पूज्य मुनि श्री 108 प्रणम्य सागर जी महाराज के रजत दीक्षा वर्ष
(माघ सुदी पूर्णिमा वीर नि. सं. 2548, सन् 2022) के पावन अवसर पर प्रकाशित

ग्रंथांक : 15

स्त्री को मोक्ष क्यों नहीं?

मंगल देशना
मुनि श्री प्रणम्य सागर

आर्हत विद्या समिति, गोटेगाँव

कृति : **स्त्री को मोक्ष क्यों नहीं?**

आशीर्वाद : परम पूज्य सन्त शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

मंगल देशना : अर्हं योग प्रणेता मुनि श्री 108 प्रणम्य सागर जी महाराज

अधिकार : सर्वाधिकार सुरक्षित किसी को भी प्रकाशित करने का अधिकार है। किताब का स्वरुप, ग्रन्थ नाम, लेखक संपादक एवं स्तर परिवर्तन न करें। प्रकाशन से पहले लिखित अनुमति आवश्यक है।

पुन्यर्जक : **श्री वीरेन्द्र कुमार कमल नयनी जैन, आयुष-दीप्ति-देवयश जैन, दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२**

संस्करण : प्रथम, नवंबर 2023

प्रतियाँ : 1000

आईएसबीएन : 978-81-959068-7-1

मूल्य : रुपये 150/- मात्र

प्रकाशक : आर्हत विद्या समिति, गोटेगाँव
मोबाइल: 9425837476

प्राप्ति स्थान : आर्हत विद्या समिति, गोटेगाँव,
मोबाइल : 9425837476 (नवीन जैन)

प्रस्तावना

महामनीषी कौटिल्य ने अपने एक शतक में लिखा है कि शास्त्र और विद्यायें अनेकानेक हैं, किन्तु मनुष्य के पास समय का अभाव है। अपनी लौकिक व्यस्तताओं से वह ध्यान और अध्ययन के लिए बड़ी मुश्किल से थोड़ा सा समय निकाल पाता है। ऐसी स्थिति में तत्त्व जिज्ञासुओं के लिए परामर्श देते हुए कहा है - **"यत्सारभूतं तदुपासनीयम्"** अर्थात् जो सारभूत है उसे जाने, पढ़े और उसकी उपासना करें।

श्री भगवान महावीर की तीर्थ परम्परा में आज तक बहुत से लोगों ने अपनी आत्मा का प्रक्षालन करके यथायोग्य स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त किया है। आत्मा की शुद्धि करने के लिए अत्यन्त पवित्र भावना की आवश्कता होती है। भावना भी स्वयं ही उत्पन्न नहीं होती है किन्तु उपदेश और साहित्य पढ़ने से होती है। जैन दर्शन में आचार्यों, मुनियों और विद्वानों द्वारा समय की आवश्यकतानुसार समय-समय पर न्याय-ग्रन्थ, सिद्धान्त शास्त्र, कथा, चारित्र, शिक्षण साहित्य आदि का प्रणयन हुआ है।

साहित्य की प्रीति के बिना जीवन और धर्म की उन्नति कभी भी संभव नहीं है। मन की विशुद्धि और एकाग्रता भी साहित्य में रुचि रखनेवालों की ही देखी जाती है और अनुभव की जाती है। वही साहित्य हितकर है, जिससे आत्माओं में वैराग्य, शांति, कर्तव्य निष्ठा और तत्त्व श्रद्धान प्रतिदिन बढ़ता है। शासन की प्रभावना किस समय किस रूप में हुई है यह अनुमान भी उस समय के साहित्य अवलोकन से ही लगाया जाता है।

प्रातःस्मरणीय, परमश्रद्धेय, परमपूज्य, कुशाग्रबुद्धि, बहुभाषाधिकारी, रसनाग्रनर्तकीविद्या, आदर्श महाकवि श्रमणरत्न सरस्वतीपुत्र, जैन साहित्य जगत के कोहिनूर **मुनिश्री प्रणम्यसागरजी महामुनिराज** जो स्वयं ज्ञानपिपासु हैं। उन्होंने अपनी स्वाध्याय की मथानी से पूर्वाचार्यों के द्वारा रचित आगम-सिंधु के मन्थन द्वारा ज्ञानामृत निकाल कर विशाल साहित्य का सृजन कर एक ज्ञानामृत कलश का निर्माण किया है, जिसका आचमन कर सुधी जिज्ञासु वृन्द जैन धर्म में वर्णित तत्त्वों के सार को सहजता से हृदयगम कर सकते हैं। निःसंदेह पूज्य श्री का यह ज्ञानामृत कलश के सृजन का कार्य सर्वोपयोगी एवं श्रमसाध्य अनुष्ठान है। इसके माध्यम से पूज्यश्री ने जैन दर्शन के तत्वों पर प्राचीन तथा अर्वाचीन दृष्टिकोन से प्रकाश डालने का बहुत ही प्रशंसनीय, सराहनीय और सफल प्रयास किया है।

पूज्य मुनिश्री प्रणम्यसागरजी महाराज मुनिचारित्र के आदर्शभूत, विश्वविश्रुत आचार्य परम पूज्य विद्यासागरजी महामुनिराज के सुयोग्य शिष्य हैं। मुनिश्री ने अल्पायु में ही चारों अनुयोगों की शिक्षा अपने गुरु से विधिवत् ग्रहण कर अभीक्ष्णज्ञानोपयोग से उसे आत्मसात किया है। फल स्वरूप महाकवि श्री हर्ष की राजा नल के विषय में कही गई बात **'अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी'** यह उक्ति मुनिश्री पर अक्षरश: घटित होती है।

पूज्यश्री की लेखनी से अनेकानेक ग्रंथों का भण्डार प्रसूत हुआ है। प्रस्तुत कृति **"स्त्री को मोक्ष क्यों नहीं ?"** में आचार्य कुंदकुंद देव रचित **'प्रवचन-सार ग्रंथ की स्त्रियों के सम्बन्धी लगभग 11 गाथाओं पर पूज्यश्री की देशनाओंका संकलन है।** विषय बहुत संवेदनशील है। पूज्यश्री ने बहुत ही सुझबुझ और रोचकता के साथ इस विषय का सैद्धान्तिक प्रस्तुतीकरण एवं सर्वांगीण विवेचन किया है। स्त्रियों के सम्बन्ध में वर्णन करनेवाली ये 11 गाथायें बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। फिर भी कई प्रवचनसार की प्रतियों में यह ग्यारह गाथाएँ उपलब्ध नहीं होती हैं। इन ग्यारह गाथाओं को **आचार्य अमृतचंद्र जी महाराज** ने अपनी टीका का विषय नहीं बनाया। केवल **आचार्य जयसेन महाराज** और **आचार्य प्रभाचन्द्र महाराज** ने इसकी टीका की हुई है।

वर्तमान समय में एक बहुत बड़ी विडंबना दृष्टिगोचर होती है। वह यह कि आजकल स्त्रियों के मन में स्त्री-पुरुष बराबर की संकल्पना बहुत जोर-शोर से घर कर बैठी हुई दिखाई देती है। 'हम भी पुरुषों से कुछ कम नहीं' इस प्रकार की भावना को मन में संजोये हुए वे हर क्षेत्र में पुरुषों की बराबरी करना चाह रही हैं और कुछ हद तक करती हुई भी दिखाई दे रही हैं । आजकल अनेक कार्य क्षेत्र ऐसे हैं उनमें इन स्त्रियों ने पुरुषों को भी पीछे छोड़कर अपनी प्रतिष्ठा को स्थापित किया हुआ है। सामान्यता से यदि विचार करें तो नर और नारी दोनों का समान महत्व है। उनमें कोई बड़ा या छोटा नहीं है। दोनों की अपनी-अपनी भूमिका है। एक-दूसरे के अभाव में दोनों अधूरे और एकांगी हैं। दोनों को परस्पर में समन्वय बनाकर ही रहना चाहिए। लेकिन आज स्त्रीयों में समानता का व्यवहार नहीं बल्कि समाधिकार की होड़ दिखाई देती है।

आज के समय में तो हर नारी नर बनने जा रही है। नारी नर बनने के प्रयास में लगी है। यह भारतीय संस्कृति के लिए बहुत बड़ा खतरा है। नारी को नारी रहना चाहिए उसे नर बनने का प्रयास नहीं करना चाहिए। नारी यदि नर बनने को उत्सुक होती है तो वह प्रकृति के विरुद्ध जाती है; क्योंकि नारी और नर की संरचना में बहुत अंतर है, दोनों की चाल-ढाल सब कुछ अलग है। भारतीय परम्परा में नर को व्यायाम और नारी को नृत्य बताया है। नारी हृदय- प्रधान होती है, नर मस्तिष्क

प्रधान होता है। दोनों में बड़ा अंतर है। नारी के अंदर करुणा, प्रेम, आत्मीयता अधिक होती है, नर के अंदर अपेक्षाकृत इन बातों की कमी होती हैं। आज की नारियाँ स्वयं को नर बनाने की होड़ में लगी हुई हैं। हो उल्टा रहा है, नर वह बन नहीं पा रही है और नारी वह रह नहीं पा रही हैं , क्योंकि नर का जो कार्य है वह नर ही कर सकता। नारी का जो कार्य है वह नर नहीं कर सकता। जबसे नारियाँ नर के काम करने की होड़ में आगे बढ़ने लगी हैं, अनेक प्रकार की विसंगतियाँ और सामाजिक विकृति बढ़ने लगी है। नारी में जब वात्सल्यमयी भावनाएँ, करुणा, दया, ममत्व की कमी होती है, तब क्रूरता उभरती है। क्रूरता अनुकरणीय नहीं है। इसलिए इस विचार धारा पर अंकुश लगाने की जरूरत है। इस प्रकार की विचार धाराओं पर कुठाराघात करने का सफल प्रयास पूज्य मुनिश्री ने प्रकृत प्रकरण में किया है।

हमारे शरीर में जितना नाड़ी का महत्व है उतना ही समाज में नारी का महत्व है। शरीर की नाड़ी अगर ठीक-ठीक काम करती है तो शरीर ठीक रहता है और इनमें कोई भी गड़बड़ हो जाती है तो स्वास्थ्य बिगड़ जाता है । समाज में अगर नारी ठीक है तो समाज ठीक है। नारी समाज की नाड़ी है। इतना सम्मान नारी को समाज में हमेशा प्राप्त होता रहता है । लेकिन मोक्षमार्ग में उसे उसकी पर्यायगत असमर्थता के कारण इस प्रकार का सम्मान प्राप्त नहीं हो सकता है। उसकी अपनी कुछ मर्यादायें है। कुछ शारीरिक, कुछ मानसिक साथ-साथ सबसे महत्वपूर्ण कुछ सैद्धान्तिक मर्यादायें होती है।

प्रकृत प्रसङ्ग में हमें आचार्य कुन्दकुन्द की इस उद्घोषणा के तरफ भी हमारा ध्यान केंद्रित करना

आवश्यक है -

"ण वि सिज्झइ वन्थधरो जिणसासणे जइ वि होई नित्थयारो।

णग्गो विमोकरखमग्गो सेसा उम्मगया सव्वे"

-(सूत्रपाहुड - 23)

अर्थात् जिनशासन में कहा है कि वस्त्रधारी पुरुष, सिद्धि को प्राप्त नहीं होता चाहे वह तीर्थंकर भी क्यों न हो। नग्नभेष ही मोक्षमार्ग है, शेष सभी उन्मार्ग है - मिथ्यामार्ग है।

"**सम्यग्दर्शन ज्ञानचरित्राणि मोक्षमार्ग: ।**" अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक चरित्र इन तीनों की एकता का नाम मोक्षमार्ग है।

कोई भी स्त्री कभी नग्नभेष धारण नहीं कर सकती। अपने जीवन में कभी तीन काल में दिगम्बरत्व को अपना नहीं सकती। साथ में वह पंचम गुणस्थान से आगे नहीं जा सकती। चारित्र की शुरुआत छठे गुणस्थान से नीचे नहीं होती। स्त्री भले ही आर्यिका पद को प्राप्त करें लेकिन वह पंचम गुणस्थान अर्थात् संयमासंयम भाव को लिए हुए ही रहती है। **जब स्त्री मोक्षमार्गी बनने की ही पात्र नहीं है तब वह मोक्ष को कैसे प्राप्त कर सकती है।**

केवल यही दो कारण हैं ऐसा नहीं है। यह तो प्रमुखता से सिद्धान्त बताया गया है। इसको पुष्ट करने की दृष्टि से और भी बहुत सारे निमित्तों की, बाधक कारणों की चर्चा पू. मुनि श्री ने इस कृती में विषयानुसार वर्गीकरण करते हुए विविध प्रमुख शीर्षकों के अन्तर्गत की है। जैसे कि मोक्ष के लिए आवश्यक संहनन और स्त्रीयों में विद्यमान संहनन, क्षपक श्रेणी के लिए योग्यता, मोक्ष की अपनी एक व्यवस्था, केवलज्ञान उत्पन्न करने के लिए कारण बनने वाला ध्यान, स्त्रियों के लिंग की जिनलिंग से पृथक् व्यवस्था, स्त्री के शरीर से मुक्ति की व्यवस्था का अभाव, मनुष्य होते हुए भी स्त्री और पुरुष की अलग शारीरिक व मानसिक संरचना, प्रमाद की बहुलता के कारण स्त्री का 'प्रमदा' सार्थक नाम, सावरण लिंग का निषेध, स्त्री और पुरुष में प्रकृति और स्वभाव से भेद, स्त्री पुरुष की अलग मर्यादा, स्त्रीयों में स्वभाव से निर्भिकता का अभाव, स्त्रीयों के चित्त में मायाचारी की बहुलता - परिणामस्वरूप निर्विकल्पता का अभाव, स्त्रीयों- में पर्यायजनित दोषों की बहुलता, स्त्रियों का मनोविज्ञान, स्त्री में निर्वाण की योग्यता का अभाव, स्त्रीयों में मोक्ष प्राप्ती के साधनभूत सामग्री का अभाव, स्त्रीयों में चित्त स्थिरता एवं शुद्धी का अभाव।

पूज्य मुनि श्री ने इन शीर्षकों- उपशीर्षकों के अन्तर्गत आचार्य कुंदकुंद की स्त्री मोक्ष के संबंधित 11 गाथाओं में संकेतित विषय का सर्वांगीण, सर्वपक्षीय निरूपण करने के लिए जिन-जिन तथ्यों की जानकारी अपेक्षित है, वह सब जानकारी मुनि श्री ने प्रस्तुत की है जो अत्यंत श्लाघनीय है। प्रस्तुति कुछ ऐसी है कि एक बार पढ़ते ही हृदयंगम हो जाती है। पुरुष और स्त्री को समान मानने की ऐकान्तिक अवधारणा का निराकरण करते हुए मुनि श्री ने आगमिक- सैद्धान्तिक आधार के साथ मोक्षमार्ग में पुरुष की उपादेयता को समुचित ढंग से सिद्ध किया है । साथ में मुनि श्री ने आधुनिक मतवादी स्त्रीयों के अन्दर की पुरुष के साथ बराबरी की होड़ एवं तत् सम्बन्धी लोक प्रचलित अनेक भ्रान्तियों का निराकरण भी किया है। केवल इस एक कृती के पठन-पाठन - अध्ययन से इस विषय

सम्बन्धी केवल स्त्रीयों की ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण जैन जगत की तमाम भ्रान्तियाँ समाप्त हो सकती हैं। इतनी लोकोपकारी कृति प्रदान करने के लिए पूज्य मुनि श्री प्रणम्यसागरजी शतशः प्रणम्य हैं । नमोऽस्तु !

व्रती श्राविका (सप्तम प्रतिमाधारी)

डॉ. उज्ज्वला जैन, गोसावी

औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

अनुक्रमणिका

स्त्री मोक्ष क्यों नहीं जा सकती?	1
स्त्री को मोक्ष मिलने योग्य निमित्त नहीं	12
प्रवचनसार गाथा - 243	21
प्रवचनसार गाथा - 244	26
प्रवचनसार गाथा - 245	32
प्रवचनसार गाथा - 246	42
प्रवचनसार गाथा - 247	45
प्रवचनसार गाथा - 248	61
प्रवचनसार गाथा - 249	70
प्रवचनसार गाथा - 250	90
प्रवचनसार गाथा - 251	93
प्रवचनसार गाथा - 252	111
प्रवचनसार गाथा - 253	116

स्त्री मोक्ष क्यों नहीं जा सकती?

स्त्री पर्याय से मोक्ष नहीं

इसी तरह की चर्चा भगवान की दिव्य ध्वनि में और भी बनती है कि स्त्रियाँ कभी भी स्त्री पर्याय से मोक्ष प्राप्त नहीं करती हैं। सुन रहे हो? आजकल की स्त्रियों को थोड़ा सा यह बातें बताना जरूरी है क्योंकि आजकल की स्त्रियों के भाव थोड़े ज्यादा बिगड़ गए। जब से दुनिया में secularism चलना शुरू हुआ है, ये communist लोग आए हैं और इसके माध्यम से स्त्री-पुरुष बराबर का यह नारा लगने लगा है तब से जो है इन स्त्रियों के दिमाग ज्यादा खराब हो चुके हैं और इन स्त्रियों ने हर जगह पर अपना एक धावा बोल रखा है कि हर काम मैं कर सकती हूँ, मैं किसी से कम नहीं हूँ, मैं पुरुष के बराबर हूँ। कोई भी कार्य जो पुरुष कर सकता है वह मैं भी कर सकती हूँ और इनकी चोट धीरे-धीरे हमें लगता है तीर्थंकर भगवान की वाणी तक भी पहुँचने वाली है। क्यों? प्रश्न आते हैं, कई बेटियाँ प्रश्न करती हैं।

किन कारणों से स्त्रियों के लिए मोक्ष नहीं होता है?

स्त्रियों को मुक्ति क्यों नहीं? स्त्रियों को मोक्ष क्यों नही? स्त्री पर्याय को इतना निंदनीय क्यों कहा जाता है? हममें ऐसा क्या बुरा है, जो पुरुष में ही अच्छा होता है हम में बुरा होता है। इस तरह की बातें आपके लिए नासमझी से हो सकती हैं लेकिन अगर आप समझदारी से समझना चाहेंगे तो आपको समझ आएगा कि स्त्रियों में क्या कमियाँ होती हैं? किन कारणों से स्त्रियों के लिए मोक्ष नहीं होता है? यह कोई partiality नहीं है, यह एक स्वभाव है। यह nature होता है और nature में बहुत ज्यादा arguments नहीं किए जाते हैं। हमें उसको समझना पड़ता है कि हर चीज का अपना अपना स्वभाव है। जैसे दिन का अपना स्वभाव होता है तो रात्रि का अपना स्वभाव होता है। दिन में खिलने वाले गुलाब अलग होते हैं तो रात्रि में खिलने वाले रजनीगंधा फूल अलग होते हैं। वे रात में ही खुशबू देते हैं, वे दिन में नहीं खिलेंगे। दिन वाले रात में नहीं खिलेंगे। दिन की प्रकृति अलग होती है, रात्रि की प्रकृति अलग होती है। समझ आ रहा है?

स्त्रियों की प्रकृति vs पुरुषों की प्रकृति

इसलिए आपने देखा होगा कि रात्रि के नाम पर स्त्रियों के नाम तो मिलेंगे लेकिन रात्रि के नाम पर पुरुष के नाम नहीं मिलेंगे। रजनी, निशा, रात्रि यह नाम कभी भी आपको पुरुषों के नाम नहीं मिलेंगे। रात्रि किस को पसंद है? एक रात्रि की प्रकृति है, चंद्रमा की प्रकृति, शशि मुखी, शशि किस को कहा जाएगा? यह स्त्रियों के नाम के आगे लगता है। कोई-कोई पुरुष ने भी लगा दिया हो तो बात अलग है भले ही कोई शशि कपूर हो लेकिन यह नाम वस्तुतः रहते तो स्त्रियों के ही हैं, उनको पता नहीं होगा। लेकिन स्त्रियों के नाम रात्रि के नाम के ऊपर आधारित आपको मिलेंगे, चंद्रमा के नाम के ऊपर आधारित आपको मिलेंगे। इस तरह के नामों के पीछे भी एक कारण है। स्त्रियों की प्रकृति अलग है, पुरुषों की प्रकृति अलग है। पुरुषों को अपने नाम सूर्य की तरह प्रतापी नाम रखने चाहिए। दिन के नाम रखने चाहिए, दिनकरों की तरह नाम उनके चुनने चाहिए और स्त्रियों के नाम अपनी प्रकृति के अनुसार अलग रहते हैं। अगर हम एकांत रूप से इस तरह का सोचेंगे कि स्त्री और पुरुष में कोई अंतर नहीं है तो आपकी यह बहुत बड़ी भूल होगी।

सैद्धांतिक तथ्य क्या कहते हैं?

यह भूल आपकी व्यावहारिक रूप से भी होगी और सैद्धांतिक रूप से भी होगी। हम अगर जिनेंद्र भगवान की वाणी का विचार करें तो जिनेंद्र भगवान की वाणी में हम पहले सैद्धांतिक तथ्यों का विचार करते हैं। सैद्धांतिक तथ्य यह कहते हैं कि स्त्री के लिए मोक्ष क्यों नहीं होता? सबसे पहली बात यह बताई जाती है कि स्त्री में उस तरह का संहनन नहीं होता। उसके शरीर में उस तरह की शक्ति नहीं होती, जो उसे मोक्ष के लायक बनाए। क्या कहा? शरीर की ताकत शरीर का बल gym में जाने से नहीं बनता। Protein की दवाइयाँ, डिब्बे में बंद Protein को खाने से नहीं बनता। शरीर में बल संहनन से बनता है। संहनन कहाँ से मिलता है? संहनन हमें कर्म के फल से मिलता है।

स्त्रियों के शरीर में किस तरह का संहनन नहीं होता?

स्त्रियों के शरीर में कभी भी इस तरह का संहनन नहीं होता। खासतौर से जो कर्मभूमि की स्त्रियाँ

उनके लिए बात की जा रही है कि वह उस संहनन, उस बल के साथ में बहुत ऊपर के स्वर्गों में भी जा सके, बहुत नीचे के नरकों में भी जा सके और संसार से परे मोक्ष की यात्रा कर सकें। ये सब चीजें शक्ति पर निर्भर करती है। शक्ति जिस तरह का हमें संहनन कर्म के उदय से मिलता है, उससे आती है और संहनन उस स्त्री की प्रकृति के अनुसार स्त्री के शरीर में वही होगा जो सिद्धांततः जिनेंद्र भगवान ने कहा है।

आचार्यों ने लिखा है:

अंतिमतियसंहणणस्सुदओ पुण कम्मभूमिमहिलाणं।
आदिमतिगसंहडणं णत्थित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं॥

कर्म भूमि की महिलाओं के कौन से संहनन का उदय नही होता?

क्या कहा? कर्म भूमि की महिलाओं के आदि के तीन संहनन का उदय नहीं होता। अंतिम तीन संहनन का उदय होता है। अंतिम और आदि क्या होते हैं? छह प्रकार के संहनन होते हैं। पहला कहलाता है- वज्रवृषभ नाराच संहनन। कुछ आता जाता तो है नहीं बस आंदोलन करने बैठ जाते हैं। स्त्री पुरुष के बराबर है, स्त्री पुरुष के बराबर है। कितनी बराबर है? अभी आपको मैं height नाप कर बताता हूँ, आपको भीतर की strength नाप कर बताता हूँ।

पहले संहनन के नाम सुनो:

पहला संहनन कहलाता है- वज्र वृषभ नाराच संहनन,

दूसरा कहलाता है- वज्रनाराच संहनन,

तीसरा कहलाता है- नाराच संहनन,

चौथा कहलाता है- अर्धनाराच संहनन,

पांचवा कहलाता है- कीलिक संहनन और

छठवां कहलाता है- असंप्राप्तासृपाटिका संहनन।

ये छह संहनन होते हैं। अगर समझ नहीं आ रहा रहा तो पढ़ लेना! कहीं नाम लिखे हुए मिल जाएँगे।

संहनन के नाम :

- वज्रवृषभनाराच संहनन
- वज्रनाराच संहनन
- नाराच संहनन
- अर्धनाराच संहनन
- कीलिक संहनन
- असंप्राप्तसृपाटिका संहनन

उत्कृष्ट संहनन

अब शुरू के तीन संहनन कौन से? वज्रऋषभनाराच संहनन, वज्रनाराच संहनन और नाराच संहनन, ये तीन संहनन बड़े उत्कृष्ट संहननो में आते हैं। इस तरह के संहनन हड्डियों के बल, हड्डियों के जुड़ाव जिनके अन्दर होंगे उनमें ही कुछ योग्यता होती है जो शुक्ल ध्यान आदि के योग्य वह अपने अन्दर इस योग्यता को लाते हैं। माने संहनन का संबंध हमारे ध्यान से है और ध्यान के उपरांत मिलने वाला फल वो हमारे संहनन पर निर्भर करेगा आचार्यों ने कहा जिनके अन्दर यह शुरू के तीन संहनन नहीं होते उन्हें कभी शुक्ल ध्यान नहीं हो सकता।

कर्म भूमि की महिलाओं के लिए कौन से तीन संहनन का उदय होता है?

कर्म भूमि की महिलाओं के अन्दर ये तीन संहनन नहीं होते। जब भी होंगे अंत के ही तीन संहनन होंगे। **'अंतिमतियसंहणणस्सुदयो पुण कम्मभूमि महिलाणां'** यह आचार्यों ने सिद्धांत ग्रंथों में स्पष्ट लिखा है- कर्म भूमि की महिलाओं के लिए अंतिम तीन संहनन का उदय होता है। यानी अर्धनाराच संहनन, कीलिक संहनन, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन। ये तीन संहनन का उदय निश्चित रूप से होगा। किस के लिए? कर्मभूमि की महिलाओं के लिए। **'जिणे णिद्दिट्ठो'** यह जिनेंद्र भगवान ने कहा है। शांतिनाथ भगवान हो, चाहे आदिनाथ भगवान हो, चाहे महावीर भगवान हो, हर जिनेंद्र भगवान के काल में, चतुर्थ काल में, पंचम काल में हर जिनेंद्र भगवान के समय जो देशना होती है

वह सैद्धांतिक देशना अचल होती है, अटल होती है। वह कभी भी परिवर्तित नहीं होती है।

सिद्धांत कभी भी बदलता नहीं

सिद्धांत कभी भी काल के प्रभाव में बदलता नहीं है। चतुर्थ काल में भी यही देशना थी और इसी तरह से स्त्रियों की व्यवस्था थी। कर्म भूमि की जो महिलाएँ होंगी उनके अन्दर यही तीन संहनन होगे। चाहे वह आदिनाथ भगवान की माँ हो जिनका नाम मरू देवी हो, चाहे शांतिनाथ भगवान की माँ हो जिनका नाम एरा देवी हो और चाहे महावीर भगवान की माँ हो जिनका नाम त्रिशला देवी हो। समझ आ रहा है? चाहे वे चक्रवर्ती की 96000 पटरानियाँ हों। मैं चक्रवर्ती की रानी हूँ तो चक्रवर्ती को व्रज वृषभ नाराच संहनन मिलेगा लेकिन रानी को वह संहनन नहीं मिलेगा। यह सिद्धांत है और सिद्धांत कोई जिनेंद्र भगवान ने बनाया नहीं है। यह स्वभाव से कर्मों के जो बंध होते हैं वह स्त्री वेद के साथ में, स्त्री नामकर्म के साथ में, स्त्री की प्रकृति के साथ में जो कर्म के बंध होंगे, वह इन्हीं संहनन के साथ होंगे और इसी तरह के और भी नामकर्म उसके साथ में जुड़ते चले जाते हैं। यह स्वभाव भाव है! यूँ नही समझना कि भगवान ने एकाधिकार स्थापित कर रखा है। लोग यह समझते हैं, अनजाने लोग नासमझ लोग न जाने कितने तरह से समझ सकते हैं। लेकिन अगर आप पूरे प्रवचन को ढंग से सुनेंगे, पढ़ेंगे, समझेंगे तो आपकी बुद्धियाँ खुलेंगी। आपको सब समझ में आएगा। जिनेंद्र भगवान ने कोई संसृति का, संसार का कोई नियम नहीं बनाया लेकिन जो नियम नियम से चलेगा वही बताया जाएगा।

कर्म किसी के द्वारा बांधे नहीं जाते

कोई भी स्त्री अपने लिए कर्म पूर्व जन्म में बांध करके आएगी, जो स्त्री पर्याय के साथ में उसके पूर्व जन्म में कर्म बंधे हुए होंगे तो वह इसी रूप में बंधेगे क्योंकि वह कर्म भी किसी के द्वारा बांधे नहीं जाते। वे स्वयं अपने द्वारा बांधे जाते हैं और वह कर्म इसी रूप में बंधेंगे की स्त्री पर्याय अगर उसे मिल रही है तो उसके साथ में वज्र वृषभ नाराच संहनन, आदि ये उत्कृष्ट 3 संहनन कभी भी उसके पास में नहीं मिलेंगे।

अंतिम तीन संहनन के साथ में कभी भी शुक्ल ध्यान नहीं हो सकता।

जब यह संहनन अंत के तीन होते हैं तो आचार्य कहते हैं स्त्रियों के लिए एक कर्म भूमि की स्त्रियों के लिए इन अंतिम तीन संहनन के साथ में कभी भी उनके अंदर शुक्ल ध्यान नहीं आ सकता। धर्म ध्यान भी इतनी पराकाष्ठा के साथ नहीं हो सकता कि वह उन्हें सोलह स्वर्ग से ऊपर ले जाए। स्त्री कभी भी सोलहवें स्वर्ग से ऊपर जा नहीं सकती। देव स्त्रियों को नीचे के स्वर्गों से ऊपर तक ले जाते हैं लेकिन सोलहवें स्वर्ग से ऊपर किसी रुप में नहीं ले जा सकते। न विहार करा कर के और न उत्पत्ति के रुप में। 16 स्वर्ग से ऊपर के देवों में नवग्रैविक, नव अनुदिश जो देव होंगे, पंच अनुत्तर विमानों में जो देव होंगे, वे नियम से पिछले जन्म में भी पुरुष पर्याय के साथ रहे होंगे और वहाँ पर भी वह पुरुष देव ही बनते हैं। वहाँ स्त्रियों के रुप में कोई उत्पन्न नहीं होते। स्त्री पर्याय के साथ में इतना पुण्य भी नहीं हो सकता कि वह अनुदिश, ग्रैवेयक और अनुत्तर विमानों में जन्म ले सके। सुन रहे हो? यह सिद्धांत है! आप इतना निर्विकल्प ध्यान, धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान कभी नहीं कर सकते। आप अपने ध्यान को अच्छे ढंग से समझ ले। चाहे वह पंचम काल हो, चाहे चतुर्थ काल हो और स्त्रियों के लिए तीव्र कषाय का उदय आए, पाप का बंध हो तो भी छठवें नरक से नीचे, सातवें नरक में स्त्रियों का जीव कभी वहाँ उत्पन्न नहीं हो सकता। स्त्री पर्याय से इतना पाप भी नहीं हो सकता कि वह सातवें नरक जा पाएँ।

सिद्धांत की व्यवस्था: समानता है, partiality नहीं

SCAN TO WATCH

सिद्धांत की व्यवस्था समझोगे तो आपको समझ में आएगा कोई partiality नहीं है। समानता है, संहनन के आधार पर अगर पुरुष तीव्र पाप कर्म के साथ में नरक आयु का बंध कर लेता है तो वह सातवें नर्क तक जा सकता है। अगर पुण्य का बंध करता है तो ऊपर अनुत्तर विमानों में, सर्वार्थसिद्धि विमानों में भी उत्पन्न हो सकता है और जो वहाँ उत्पन्न होने की क्षमता रखेगा वही तो मोक्ष जाने की क्षमता रखेगा। जो स्त्रियाँ सोलहवें स्वर्ग से ऊपर भी उत्पन्न होने की सामर्थ्य नहीं रखती हैं तो वह भला मोक्ष कैसे जाएँगी? सोचने की बात है! यह अपने आप में जो सिद्धांत है यह सिद्धांत हमारी प्रकृति को समझने के लिए है और इसी को यथार्थ रुप में जब हम समझ लेते हैं उसी को आचार्यों ने सम्यग्ज्ञान कहा है।

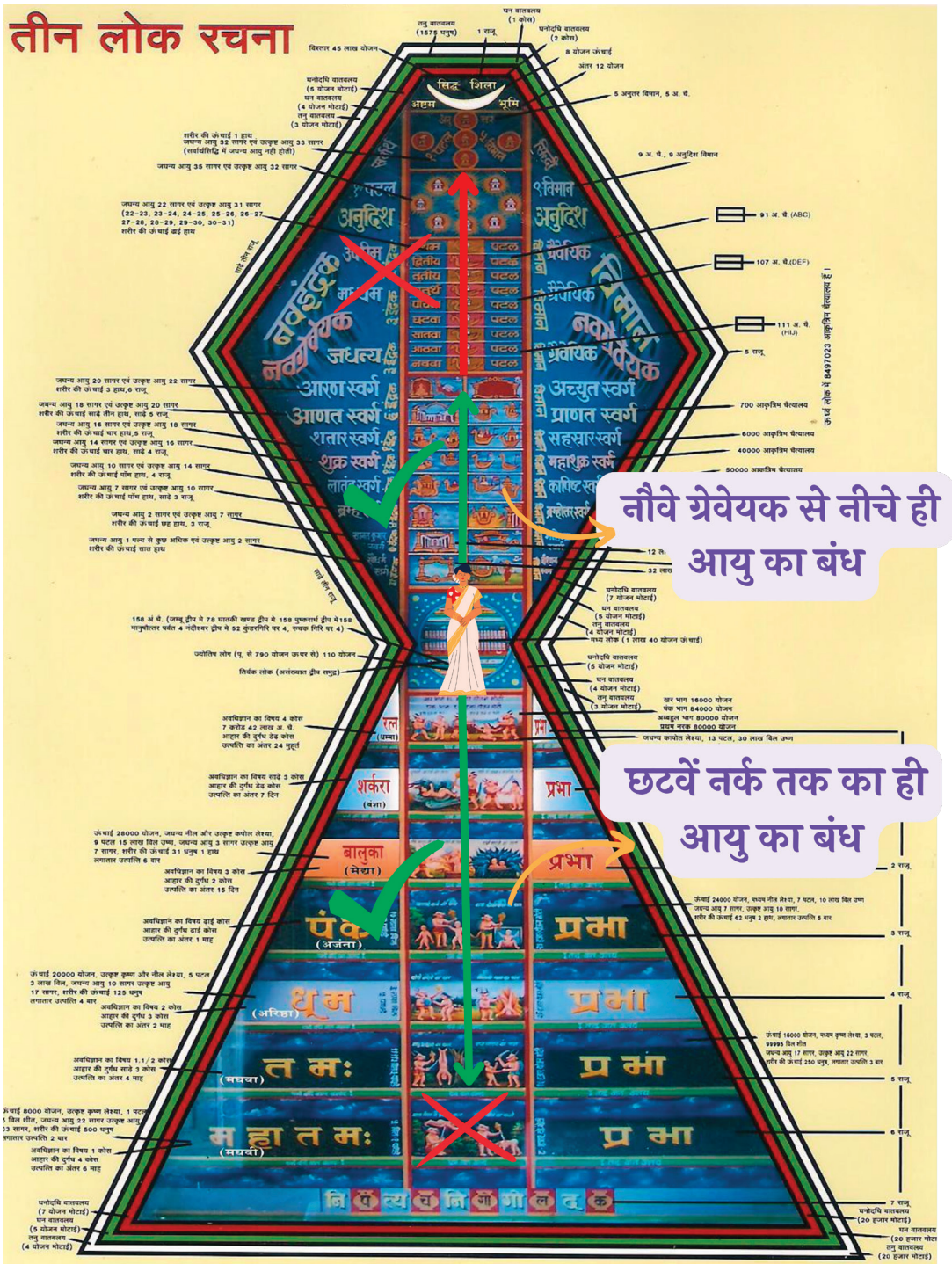
तीन लोक रचना
नौवे ग्रेवेयक से नीचे ही आयु का बंध
छटवें नर्क तक का ही आयु का बंध

सम्यग्ज्ञान क्या?

सम्यग्ज्ञान का मतलब जो चीज जैसी है, जिस रूप में है, जिस स्वभाव के साथ में है उसको आप वैसा ही स्वीकारोगे तो आप सम्यग्ज्ञानी बनोगे। **'यथार्थ ज्ञानं, सम्यक ज्ञानं'** सम्यग्ज्ञान की परिभाषा है। यथार्थ का ज्ञान होना, यथार्थ का ज्ञान होना, जो चीज जैसी है, जिस स्वभाव के साथ में है उसको वैसा ही मानो। हर चीज का अपना-अपना स्वभाव है। दिन का अपना स्वभाव है, रात्रि का अपना स्वभाव है। सूर्य का अपना स्वभाव है, चंद्रमा का अपना स्वभाव है। कमल का अपना स्वभाव है, रात्रि में खिलने वाले फूलों का अपना स्वभाव है। दूध में भी बकरी के दूध का अपना स्वभाव है, गाय के दूध का अपना स्वभाव है, भैंस के दूध का अपना स्वभाव है। हर दूध का अपना-अपना स्वभाव है। जो चीज जिस रूप में है उसको उसी रूप में जो मानता है उसके लिए सम्यग्ज्ञानी कहा जाता है। यह सम्यग्ज्ञान की बहुत अच्छी defination है। जो चीज जिस स्वभाव की है उसको उसी स्वभाव में मानो। आप अगर किसी भी स्वभाव को जबरदस्ती किसी के ऊपर आरोपित करोगे तो यह आपका ज्ञान सम्यग्ज्ञान नहीं होगा, यह मिथ्याज्ञान में आएगा। तब आचार्य कहते हैं- यह स्वभाव है! क्या है?

कर्म सिद्धांत के अनुसार स्त्रियों के लिए मोक्ष नहीं है

स्त्रियों में कभी भी इतना संहनन, इतना बल नहीं हो सकता कि वह शुक्ल ध्यान कर पाएँ। शुक्ल ध्यान करके वह अहमिन्द्रों में उत्पन्न हो पाए। जब शुक्ल ध्यान की संभावना नहीं है तो फिर मोक्ष जाने की संभावना तो कहीं से कहीं तक बनती नहीं है। यह सिद्धांत जैसे दिगम्बर शास्त्रों में है वैसे ही श्वेतांबर शास्त्रों में भी हैं। कर्म सिद्धांत भी श्वेतांबर शास्त्रों में इसी तरह से कहा गया है कि वहाँ पर भी सिद्धांततः देखा जाए कर्म सिद्धांत के अनुसार तो स्त्रियों के लिए मोक्ष नहीं है।

दिगंबर और श्वेतांबर दो संप्रदाय में कुछ मतभेद

लेकिन यह पंचम काल की विडंबना जब से यह दिगंबर और श्वेतांबर ये दो संप्रदाय अलग बने तो उनमें कुछ मतभेद, कुछ नए सिद्धांतों के आरोपों के कारण से आ गए। वह एक सिद्धांत आपको बताया था कि केवली भगवान कवलाहारी होते हैं। यह भी एक विभाजन का सिद्धांत है और दूसरा सिद्धांत स्त्री की मुक्ति मानने लग गए। स्त्रियों को अच्छा लग सकता है लेकिन सिद्धांततः उन

श्वेतांबर संप्रदायों के बीच जो ग्रंथ हैं, 'प्रवचन सारोद्धार' उनके जो संग्रहणी सूत्र हैं, उन सूत्रों में भी यह लिखा हुआ है कि स्त्रियाँ कभी भी वज्रऋषभनाराच संहनन को धारण करने वाली नहीं होती और इस संहनन के बिना कभी भी बड़े-बड़े इंद्र, अहमिन्द्र आदि ऊँचे पदों की प्राप्ति हो नहीं सकती है।

सिद्धांत: पूर्ण रुप से दोनों संप्रदायों में मान्य है

यह प्रथम संहनन के साथ होती है ऐसा उनके सिद्धांतों में भी लिखा हुआ है। सिद्धांततः देखें तो जिनेंद्र भगवान का यह जो सिद्धांत है, वह पूर्ण रुप से दोनों संप्रदायों में मान्य है। लेकिन फिर भी एक नई कल्पना के रुप में एक नई बात जब सामने आती है तो उसकी पुष्टि सिद्धांत से नहीं होती है। ऐसे सिद्धांतों को अगर हम ध्यान में रखेंगे तो हम समझ पाएँगे की शक्ति हमारे अन्दर कितनी है? शरीर की शक्ति से ध्यान होता है। ध्यान की निश्चलता कहाँ से आएगी? निश्चल पना शरीर की शक्ति से आएगा। इसलिए एकांत में ध्यान करना, श्मशान में ध्यान करना, कायोत्सर्ग से ध्यान करना, यह स्त्रियों के लिए बन नहीं पाता। यह बुराई नहीं है, स्वभाव है, इसे स्वभाव के रुप में स्वीकार करना चाहिए। जो ध्यान में व्यग्रता रहती है, ध्यान में अनेक तरह की चंचलता रहती है, यह स्वभाव है और इस स्वभाव के कारण से उन्हें कभी इतनी एकाग्रता नहीं हो सकती कि वह इतना दुर्ध्यान भी कर ले, दुर्ध्यान मतलब आर्त ध्यान और रौद्र ध्यान। वह इतना भी रौद्र ध्यान नहीं कर सकती कि वह सातवें नर्क के लिए योग्य आयु का बंध कर ले और इतना शुभ ध्यान भी नहीं कर सकती कि नौवें ग्रेवेयक तक पहुँच जाएँ। यह नियम है! नौवें ग्रेवेयक में वही पहुँचेगा जो दिगंबर रुप को धारण करने वाला होगा।

दिगंबर रुप की महिमा

SCAN TO WATCH

दिगंबर रुप धारण किए बिना कभी भी नौवें ग्रैवेयक में उत्पत्ति, अनुदिश आदि में उत्पत्ति हो नहीं सकती। यह सिद्धांत है। अगर आपके शरीर पर कपड़ा है, किसी भी रुप में हो। चाहे वह स्त्री के शरीर पर हो, चाहे पुरुष के शरीर पर हो, वह चाहे कितना ही उत्कृष्ट चर्या का धारक क्षुल्लक हो, ऐलक हो। अगर वह वस्त्र सहित है निर्ग्रन्थ रुप उसका नहीं है तो वह कभी भी ग्रैवेयक, अनुदिश, अनुत्तर विमानों में उत्पन्न नहीं हो सकता। यह स्वभाव सब

के लिए है। हर चीज बड़े अच्छे ढंग से यथार्थ ज्ञान में निर्धारित है। दिगंबर रूप के साथ ही इतना पुण्य कमाया जा सकता है कि वह ग्रैवेयक तक पहुँच सकता है। भले ही मिथ्या दृष्टि हो कोई बात नहीं। सम्यग्दृष्टि भी ग्रैवेयक में जाते है, मिथ्या दृष्टि भी जाते हैं। लेकिन शर्त क्या है? दिगंबर रूप होना चाहिए। दिगंबरत्व के बिना इतनी सामर्थ्य, इतना शक्ति, इतना संहनन, इतना ध्यान नहीं लग सकता कि वह नौवें ग्रैवेयक के योग्य पुण्य का अर्जन कर ले। यह दिगंबर रूप की महिमा है।

सम्यग्दर्शन कैसे आएगा?

स्त्रियाँ कभी भी दिगंबर रूप धारण नहीं कर सकती। जो पुरुष दिगंबर रूप धारण नहीं कर सकते वह भी कभी उन ग्रैवेयक आदि में उत्पन्न नहीं हो सकते, यह सिद्धांत है। इसलिए जो सिद्धांत होता है वह सर्वज्ञ भगवान के द्वारा देखा गया ज्ञान होता है और उस ज्ञान को अगर हम यथार्थ रूप में स्वीकार करेंगे तो आपके अन्दर सम्यग्दर्शन आएगा। स्त्रियाँ कहती हैं- हम सम्यग्दर्शन कैसे धारण कर सकते हैं? जैसा भगवान ने कहा है वैसा स्वीकार करोगे तो सम्यग्दर्शन आएगा। यथार्थ का श्रद्धान करना, यथार्थ का ज्ञान करना अगर हम उसमें अपने मन से कुछ भी नूनच करेंगे, नहीं! ऐसा नहीं! तो यह आपकी श्रद्धान की कमी होगी आपके अन्दर सम्यग्दर्शन का भाव उत्पन्न नहीं हो सकता। श्रद्धा इसी रूप में आनी चाहिए।

पंचम काल में मोक्ष किसी को नहीं है

पंचम काल में मोक्ष किसी को नहीं है। न स्त्रियों को है, न पुरुषों को है। दिक्कत किस बात की है? जब होगा तब होगा! अभी तो किसी को कुछ नहीं है न। अतः हम ज्ञान को यथार्थ रूप से क्यों नहीं स्वीकार करें जैसा ज्ञान कहा गया है। पंचम काल में किसी को मोक्ष नहीं है, सबको स्वर्ग है। सब बराबर से स्वर्ग में जा सकते हैं। पंचम काल में पूरी बराबर समानता है। जिस स्वर्ग तक पुरुष जा सकता है उस स्वर्ग तक पंचम काल में स्त्री भी जा सकती है। चलो इस अपेक्षा से पूरी समानता है। मुनि महाराज भी पंचम काल में नौवें ग्रैवेयक तक नहीं जा सकते। दिगंबर रूप हो करके भी इतना संहनन नहीं होता कि वह वहाँ तक के लिए पुण्य अर्जित कर सकें। सोलहवें स्वर्ग तक सब के लिए last होना है। क्या दिक्कत है? अब आप को स्वीकार करना है। जिस किसी भी जन्म में मोक्ष होगा वह मोक्ष

हमें जब भी होगा, हमें पुरुष पर्याय के साथ ही होगा क्योंकि उस तरह का शुक्ल ध्यान, उस तरह की विशुद्धि, वह केवल पुरुष पर्याय के ध्यान में ही संभव है, स्त्री पर्याय के ध्यान में संभव नहीं है। इसलिए जो बड़े-बड़े पदों के धारी होते हैं, चाहे वह तीर्थंकर हो, चाहे चक्रवर्ती हो, चाहे बलदेव हो, ये पद अरिहंत केवली के पद या नारायण प्रति नारायण के पद, ये पद कभी स्त्री जाति को नहीं मिलते। यह पद पर कभी स्त्री पर्याय के साथ में पद नहीं होते हैं। यह सारे के सारे पद पुरुष पर्याय के साथ ही मिलते है। क्या करना है आपको? आंदोलन करना है! करो किसके साथ करोगे? कैसे करोगे आंदोलन? बताओ दुनिया के किसी भी शास्त्र में लिखा हो, नारायण, प्रति नारायण कभी कोई स्त्री बना हो। समझ आ रहा? कोई बलभद्र केवली भगवान, अरिहंत भगवान कोई स्त्री बना हो। सिद्धांततः कहीं पर भी, कोई भी भगवान स्त्री के रूप में नहीं है। न जैनों में, न हिंदुओं में! कोई भी नहीं, कहीं भी नहीं। कोई भी जगह पर आपको चाहे वह इस्लाम हो, अल्लाह खुदा सब मिलेंगे, अल्लाह ही खुदाई तो नहीं है, खुदी तो नहीं है कहीं। स्त्री के रूप में कभी भी भगवत सत्ता प्राप्त नहीं होती। किसी को नहीं होती, पूरे विश्व के अन्दर किसी भी दर्शन में स्त्री को भगवान नहीं माना।

यथार्थ को जो स्वीकार करेगा वह भीतर से मजबूत होगा

देवी-देवियाँ होना अलग बात है। भगवान की सत्ता, भगवत्ता यह स्त्रियों को कहीं नहीं मिलती। पूरी जाति की स्त्रियाँ एक साथ आंदोलन करें, एक साथ supreme court में एक साथ अर्जी लगाएँ। यथार्थ को स्वीकार करने की शक्ति जब तक नहीं होगी तो सबसे बड़ी शक्तिहीनता आपकी यही कहलाएगी। यथार्थ को जो स्वीकार करेगा, वह भीतर से मजबूत होगा। वह सत्य को सत्य के रूप में स्वीकार करेगा तभी उसके लिए सम्यग्दर्शन का भाव उत्पन्न होगा। इसलिए तीर्थंकर भगवान ने अपने उपदेशों में यह कहा है स्त्रियाँ कभी भी सर्वोत्कृष्ट जो उच्च पद होते हैं, उन उच्च पदों पर आसीन नहीं हो पाती। यह उनकी निंदा नहीं है यह उनके स्वभावगत कमजोरी है और इस स्वभाव के साथ उन्हें अपने उस स्वभाव को स्वीकार कर लेना चाहिए। आगे की बात फिर आगे करेंगे। इन स्त्रियों के बारे में भी अच्छे ढंग से समझाना तभी संभव होगा जब यह स्त्रियाँ समवशरण में भरपूर ढंग से बैठ करके दिव्य ध्वनि सुनने के लिए लालायित रहेंगी। यही एक समय होता है जब इन स्त्रियों के दिमाग भी अच्छी ठंडे किए जा सकते हैं और वह भगवान समवशरण में ही बोलते हैं। बोलिए शांतिनाथ भगवान की जय।

स्त्री को मोक्ष मिलने योग्य निमित्त नही

ईश्वर क्या करता है?

ईश्वर को कर्ता मानने वाले लोग ईश्वर कर रहा है, ईश्वर कर रहा है इस पर लगे रहते हैं। समझें! कोई भी चीज हो रही है उसको जैसी संगति मिलेगी उस रूप में ढल जाती है। निमित्त जैसा मिलेगा वैसा उसमें कार्य हो जाता है। एक बूंद पानी की विष भी बन सकती है, अमृत भी बन सकती है। एक बूंद पानी की! अगर वही बूंद सर्प के मुख में गिरती है तो जहर बन जाती है और वही बूंद जब स्वाति नक्षत्र में सीप के मुख में गिरती है तो मोती बन जाती है। जैसी संगति मिलती है, वह बूंद वैसी बन जाती है। अगर उसको अमृत में मिलाओगे तो अमृतमय बन जाएगी। मिठास में मिलाओगे तो मीठे में मिल जाएगी और नीम के पेड़ में डाल दोगे तो वही बूंद कड़वी हो जाएगी या नीम के काढ़े में मिला दोगे तो वही पानी काढा हो जाएगा। काढा भी कड़वा हो जाएगा।

आत्मनिर्भर कौन होता है?

क्या करेगा इसमें ईश्वर? सब काम ईश्वर कर रहा है? यह ईश्वर के ऊपर निर्भर रहने वाले लोग कभी भी आत्मनिर्भर नहीं बन सकते हैं। समझ आ रहा है? चाहे हम कितनी आत्मनिर्भर की योजनाएँ चला ले, उन योजनाओं से कुछ नहीं होगा। जब तक दुनिया का व्यक्ति ईश्वर के ऊपर इस तरह के कर्ता मानकर के ईश्वर के ऊपर निर्भर रहेगा तब तक वह आत्मनिर्भर कभी भी हो नहीं सकता इसलिए सही मायने में आत्मनिर्भर वह होता है जो ईश्वर के ऊपर निर्भर नहीं होता है। अपनी आत्मा, अपने पुरुषार्थ पर निर्भर रहता है। जैसा वह अपने आपको ढालना चाहेगा वैसे ढल जाएगा। जैसी संगति, जैसे निमित्त उसको मिलेंगे उस रूप में उसके लिए कार्य की परिणति दिखाई देगी और यही एक अटल सिद्धांत है।

हर चीज में परिणमन कैसे होगा?

जिस वस्तु के लिए जिस तरह के संयोग बन जाते हैं उसमें वैसा ही परिणमन होने लग जाता

है। किसी भी पदार्थ में, अचेतन में, हर पदार्थ में, अगर यह लकड़ी भी आपके सामने रखी है और यहाँ पर आप अगर एक अगरबत्ती लगा दोगे तो यह जो अभी लाल लाल दिख रही है, काली पड़ जाएगी। हर चीज में परिणमन किस से होगा? रोज-रोज उस पर अच्छा paint करते रहोगे तो चमकता रहेगा और वहीं पर आप मोमबत्ती और अगरबत्ती लगा कर के चले गए, वह जल कर काला हो जाएगा। हर चीज में परिणमन जैसा उसके लिए संयोग मिलेगा वैसा उसके अन्दर होता रहता है। इसलिए आप यह ध्यान रखें प्रति वस्तु में यह नैसर्ग की परिणति, स्वाभाविक परिणति, natural change उसके अन्दर अपने आप जैसे उसके लिए सहयोग मिलते हैं उसके अनुसार आता रहता है।

जैसे निमित्त मिलेंगे वैसा परिणाम होगा

SCAN TO WATCH

यही बात भगवान ने बताई है कि हर पदार्थ दो नय की अवधि, अवधि मतलब मर्यादा में टिका हुआ है। दो नयों के बीच में मतलब दो प्रकार के परिणमन के बीच में एक द्रव्य और एक पर्याय। हर पदार्थ द्रव्य को भी और पर्याय को भी दोनों रूपों में हमारे लिए देखने में, जानने में आता है और इसी तरह से वस्तु व्यवस्था हमेशा बनी रहती है, चाहे स्त्री हो, चाहे पुरुष हो। अब इस वस्तु व्यवस्था में जैसे निमित्त मिलेंगे वैसा परिणमन होगा।

स्त्री को मोक्ष के लिए कौन से निमित्त नहीं मिलते?

स्त्री के लिए मोक्ष नहीं होता तो उसको उस तरह के निमित्त नहीं मिलते। कौन से निमित्त? आपको पहले बताया था। उस तरह की उसके लिए शरीर की शक्ति नहीं मिलेगी, संहनन नहीं मिलेगा, यह उसके लिए एक निमित्त है। वह नहीं मिलता क्योंकि वह पिछले जन्म से इस तरह के कर्म को बांध करके आ रहा है। स्त्री वेद के साथ में यह नहीं हो सकता। इसलिए उसके लिए ध्यान की एकाग्रता नहीं बन सकती, मोक्ष नहीं मिल सकता।

स्वर्ग और नरक में जाने के नियम

स्वर्ग में, नरक में जाने के नियम संहनन के आधार पर भी बनते हैं और वह बताए गए हैं।

संहनन के आधार पर जो 6 प्रकार के पहले संहनन बताए थे उनमें जो छ: संहनन है, उनके साथ में जो अंतिम संहनन है- असंप्राप्त सृपाटिका संहनन उसके साथ में चौथे युगल तक जाया जा सकता है। चौथा युगल मतलब क्या हुआ? सौधर्म, ऐशान, सानत कुमार, माहेन्द्र, बह्म, बह्मोतन्द्र, लांतव, कापिष्ठ। आठवां स्वर्ग एक तरह से कह सकते हैं। यह असंप्राप्त सृपाटिका संहनन के साथ यहाँ तक गति हो सकती है। आगे का संहनन, कीलक संहनन! उसके साथ में दो युगल और आगे चल लो। 9, 10, 11, 12 मतलब सहस्त्रार स्वर्ग तक चले जाओगे। और ऊपर का संहनन आया, अर्धनाराच संहनन दो युगल और आगे चल लो, 13-14-15-16 बस! जो यह last के 3 संहनन थे इनके साथ में सोलहवें स्वर्ग तक ही जाया जा सकता है, इसके ऊपर नहीं।

संहनन के अनुसार क्या-क्या होता है?

- देवों में गति संहनन के अनुसार होगी। पुण्य आप के अंदर संहनन के अनुसार आएगा।
- विशुद्धि आपके अन्दर संहनन के अनुसार बढ़ेगी।
- ध्यान से कर्म की निर्जरा संहनन के अनुसार होगी।

उत्कृष्ट जो तीन संहनन वाले हैं, वही जीव उपशम श्रेणी पर चढ़ सकते हैं। मोक्ष जाने वाले जीव के लिए प्रथम संहनन चाहिए, वज्रऋषभनाराच संहनन चाहिए।

उत्तमसंहननस्यैकाग्र-चिन्ता-निरोधो ध्यान-मान्तर्मुहूर्तात्

उत्तम संहनन वाला मतलब उत्कृष्ट जो वज्रऋषभनाराच संहनन है उसी के लिए अंतर्मुहूर्त का ध्यान टिकेगा, वही केवल ज्ञान को प्राप्त करेगा। यह वज्रऋषभनाराच संहनन के साथ ही घटित होगा। लेकिन वज्रऋषभ नाराच संहनन, वज्रनाराच संहनन, नाराच संहनन वाले इन संहनन वाले ये छपक श्रेणी पर नहीं चढ़ सकते। व्रज नाराच और नाराच संहनन वाले, उपशम श्रेणी पर चढ़ सकते है। उस तरह का ध्यान नहीं लगा सकते कि ये कर्म का क्षय कर ले। सिद्धांत है! यूँ नही कहना कि यह सिद्धांत स्त्रियों के लिए ऐसा क्यों? पुरुषों में भी तो भेद है।

छपक श्रेणी पर कौन नहीं चढ़ सकते?

पुरुषों में भी जो पुरुष वज्रऋषभनाराच संहनन वाले नहीं हैं, व्रज नाराच संहनन वाले हैं, नाराच संहनन वाले हैं वे कभी छपक श्रेणी पर चढ़ नहीं सकते। वे कभी मोह का क्षय नहीं कर सकते, उपशमन कर सकते हैं।

भेद योग्यता से बनता है

भेद के बिना तो कभी कोई चीज बनती ही नहीं। एक जैसा तो दुनिया में कभी कुछ होता ही नहीं। भेद व्यवहार तो सब जगह रहता ही है लेकिन यह भेद योग्यता से बनता है। हर द्रव्य की अपनी-अपनी योग्यता जो उसके अपने-अपने कर्म के उदय से बन रही है उसके कारण से है। यह भेद कोई कर नहीं रहा है। यह कर्म के कारणों से अपनी आत्म शक्तियाँ उतनी उद्घाटित हो सकती हैं जितने हमें कर्म हमें फल दे रहे हैं। यह हमारी कर्म संगति के कारण से होने वाला परिपाक है, फल है।

कर्म के फल से होने वाली परिणतियाँ

कर्म की संगति ऐसी बनी कि हमें ऐसा व्रजनाराच संहनन तो मिला, वज्र वृषभ नाराच संहनन नहीं मिला देखो! इतना सा रह गया। फिर क्या होगा? अब वह पुरुष मुनि बन सकता है। खूब अच्छा संहनन होने के साथ भी वह अच्छा ध्यान कर सकता है मतलब कि उपशम श्रेणी के परिणाम भी बहुत बड़े परिणाम होते हैं। नौवें, दसवें, ग्यारहवें गुणस्थान तक पहुँच सकता है लेकिन 12वें में नहीं पहुँच सकता और वहाँ से वह मरण भी कर सकता है, मोक्ष नहीं जा सकता। क्योंकि मोक्ष तो बारहवें गुण स्थान में जाएगा, केवल ज्ञान होगा तभी मोक्ष होगा। मोह के क्षय के बिना मोक्ष नहीं होता तो वह उपशम करके उसे नियम से फिर से स्वर्ग जाना ही पड़ेगा क्योंकि उस संहनन के साथ मोक्ष है ही नहीं, होता ही नहीं। अभी किसी ने रोका नहीं, यह स्वभाव है। कर्म के फल से होने वाली परिणतियाँ हैं।

मोक्ष की अपनी एक व्यवस्था है

इस व्यवस्था को हम ध्यान में रख कर के अपने अन्दर यह ज्ञान पैदा करें कि स्त्रियाँ यह

कहती है कि मोक्ष क्यों नहीं है तो मोक्ष की अपनी एक व्यवस्था है। यह कोई job नहीं है तुम्हारी, जो चार किताबें पढ़ ली है और जो कोई भी exam दे दिया और पास हो गए तो वह फूल गए कि हाँ भाई! तुम भी IAS बन सकते तो हम भी IAS बन गए, तुम भी IITian बन सकते तो हम भी IITian बन गए। यह वह exam नहीं है यह कुछ और दूसरे level की चीज है। हर एक चीज को एक ही level से मत देखा करो। हो सकता है कि स्त्रियाँ, पुरुष से ज्यादा कमा ले, हो सकता है! कोई बड़ी कंपनी में job लग गई, कोई अच्छी तुम्हारे लिए post मिल गई लेकिन पुरुष को न मिले तो इसका मतलब यह नहीं है कि मैं स्त्रियाँ पुरुष से बड़ी हो गई। पैसा कमाने से बड़े छोटे नहीं हो जाते हैं। कोई भी job छोटी-बड़ी मिल गई तो उससे बड़े छोटे नहीं हो जाते हैं। बड़े छोटे होने की योग्यताएँ दूसरे तरीके के विचारों पर निर्भर करती हैं। मोक्ष जाने की योग्यताएँ हर एक जीव की अलग-अलग हैं। जो स्त्रियों में नहीं है तो स्त्रियों में नहीं है, तो बहुत से पुरुषों में भी नहीं है। पंचम काल में तो किसी में नहीं है तो यह विचार करके हमें यथार्थ को स्वीकार करना चाहिए।

Partiality नहीं यह Reality है

SCAN TO WATCH

आचार्यों ने कितनी बड़ी बातें चाहे वह दिगंबर संप्रदाय हो, चाहे वह श्वेतांबर संप्रदाय हो सर्वत्र यह लिखा है कि स्त्री चाहे कितनी ही पुरानी दीक्षित हो, 100 वर्ष पुरानी दीक्षित आर्यिका भी आज नवजात मुनि के लिए वह नमोस्तु बोलेगी। जो मुनि आज बने हैं, अभी-अभी बने हैं, 8 वर्ष अंतर मुहूर्त के बाद भी अगर बन गए हैं तो 100 साल पुरानी आर्यिका भी उनके चरणों में नमोस्तु बोलेगी। क्यों? यह partiality है। यह partiality नहीं है, यह reality है। partiality को reality के रूप में स्वीकार करना सीखो। क्या reality है? जो भीतर की विशुद्धि है वह गुण स्थानों से नापी जाती है और गुण स्थान स्त्री का कभी भी पाँचवा से ऊपर होता नहीं। चाहे कितना ही तप कर ले। वह कितनी ही बड़ी आर्यिका बनी रहे। कितनी पुरानी आर्यिका हो। यह बात पूरे जैन दर्शन में मान्य है चाहे दिगंबर हो चाहे श्वेतांबर हो सब सिद्धांत में यह मान्य है।

दिव्य भगवान की दिव्य वाणी का नियम

पाँचवे गुण स्थान से ऊपर की विशुद्धि उसके लिए नहीं हो सकती और मुनि महाराज झट से पहले ही क्षण जैसे ही उनके लिए दीक्षा हुई, वह सातवें गुण स्थान की विशुद्धि उनके अन्दर आ जाती है। अप्रमत्त गुणस्थान उनके अन्दर आ जाता है। अब आप कहो कैसे? यही इस शरीर गत स्वभाव की ये विशेषताएँ हैं। आप कभी भी बिल्कुल निर्विकल्प, निर्द्वंद नहीं हो सकते जो स्त्रियाँ हैं क्योंकि उन्हें अपने वस्त्रों के माध्यम से अपने को ढाँकना पड़ता है। यह बहुत बड़ी उनके अन्दर एक बैचेनी, एक आकुलता रहती है। हमेशा अपने शरीर को ढाँकने के लिए उन्हें शरीर पर ध्यान देना पड़ता है। उनका ध्यान शरीर से हटकर के अप्रमत्त अवस्था में केवल आत्मा की विशुद्धि तक जा ही नहीं पाता। यह बहुत बड़ी चीज है, यह शरीरगत चीज है। आप छोड़ नहीं सकते इसको, निर्लज्ज भी नहीं हो सकते हो। कोशिश करो कि मैं निर्लज्ज हो करके ऐसा कर लूँ कि मैं शरीर पर वस्त्र न डालूँ तो भी आपके लिए वह परिणति नहीं आएगी, आप में डर बना रहेगा, भय बना रहेगा, आपके अन्दर संकोच बना रहेगा। एकांत में भी अगर आप कभी बैठ कर के, नग्न हो करके बैठ कर के अगर आप ध्यान लगाने की कोशिश करेंगे तो भी आपके अन्दर की विशुद्धि नहीं आएगी, करके देख लेना। ये चीजें अपने आप में उस शरीरगत स्वभाव से जुड़ी हुई हैं। शरीरगत संहनन से जुड़ी हुई हैं। इसलिए यह कहा गया कि 100 वर्ष पुरानी आर्यिका भी नव दीक्षित मुनि को नमोस्तु करती है, करेगी, यह शास्त्र का नियम है। दिव्य भगवान की दिव्य वाणी का यह नियम है। तीर्थंकर भगवान ने अपनी वाणी से ये नियम बताएँ हैं। क्यों? क्योंकि वह जिंदगी भर तप करने के बाद भी उस विशुद्धि को प्राप्त नहीं कर सकती। अप्रमत्त गुण स्थान की जो विशुद्धियाँ हैं वे उसे नहीं मिल सकती। वे मुनि महाराज को क्षण में मिल जाएगी। इसलिए उसे वह नमस्कार करके उन विशुद्धियों की प्राप्ति करने के लिए, उस सामायिक चारित्र की प्राप्ति करने के लिए उनके चरणों में नमोस्तु करना है क्योंकि उसका चारित्र वह सामायिक चारित्र नहीं कहलायेगा। वह कहलाएगा तो एक तरह का पाँचवे गुण स्थान का ही संयमासंयम भाव कहलाएगा। पाँचवे गुण स्थान की उत्कृष्टता है लेकिन वह अभी सामायिक चारित्र की परिणति नहीं आएगी जो सामायिक चारित्र की परिणति अप्रमत्त-प्रमत्त गुण स्थानों के साथ बनती है।

कौन सा ध्यान केवल ज्ञान उत्पन्न करेगा?

ये व्यवस्थाएँ सबके लिए हैं और यह व्यवस्थाएँ depend करती हैं कि वह जीव किस

तरह के कर्म के संयोग से क्या बना है? क्या उसके लिए पर्याय मिली है? आचार्य कहते हैं कि हमेशा यह ध्यान में रखना है कि स्त्रियों को जब 16 स्वर्ग से आगे ही जाने को संहनन नहीं मिलता तो मोक्ष जाने के लिए, केवल ज्ञान प्राप्त करने के लिए वह उत्तम संहनन कहाँ से आएगा? नहीं समझे? लिखा है न! **'उत्तमसंहननस्यैकाग्र-चिन्ता-निरोधो ध्यान-मान्तर्मुहूर्तात्'** यह ध्यान उत्तम संहनन के साथ होगा जो केवल ज्ञान उत्पन्न करेगा। यह ज्ञान जब उत्पन्न नहीं होगा केवल ज्ञान ही नहीं होने का तो मोक्ष कहाँ से होने का? मोक्ष तो केवल ज्ञान होने के उपरांत होता है। 16 स्वर्ग से ऊपर जाने की क्षमता नहीं तो केवल ज्ञान को उत्पन्न करने की क्षमता कहाँ से आ गई? नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश में जाने वाला मनुष्य ही पुरुष ही होता है और दिगंबर रूप को धारण करने वाला मुनि ही होता है और वहाँ से जो उतर करके आता है वहाँ से भी जो जीव चय करके यहाँ पर आकर के जन्म लेगा तो वह नियम से पुरुष ही होगा। नौवें ग्रैवेयक, आनत आदि स्वर्गों से ऊपर से जो उतर करके आते हैं वे नियम से मनुष्य ही बनते हैं। अब देखो कितनी बड़ी बात है। एक सिद्धांत है! दिगंबर श्वेतांबर सब संप्रदाय में यह माना जाता है कि सम्यग्दृष्टि जीव कभी भी सम्यग्दर्शन के साथ में अगर मरण किया है तो उत्पन्न होने के बाद में वह :

- स्त्री पर्याय को प्राप्त नहीं करेगा।

- नपुंसक पर्याय को प्राप्त नहीं करेगा।

नियम से वह मनुष्य या देव कुछ भी बनेगा तो वह पुरुष वेद ही बनेगा। क्या सुना? देव अगर मनुष्य बने, मनुष्य देव बने नियम से सम्यग्दृष्टि होगा तो वह पुरुष वेद ही होगा। स्त्री वेदी नहीं हो सकता, यह नियम है, सर्वत्रमान्य है। यह अब आप कहो पुरुष और स्त्री बराबर हैं। ये partiality क्यों हो, तुम्हें कुछ आता-जाता तो है नहीं। अपने job के fun में उछलते रहते हो और उसी थोड़े से ज्ञान और अहंकार से इधर-उधर की बातें करते रहते हो। जब सम्यग्दृष्टि जीव के लिए ही केवल पुरुष वेद के साथ पर्याय मिलेगी मतलब यहाँ से अगर कोई, अब देखो! कितनी अच्छी बात है! सुन रहे हो कि नहीं?

सम्यग्दर्शन के साथ में कभी भी स्त्री पर्याय का बंध नहीं होता

सिद्धांत की बातें भी थोड़ा ध्यान रखा करो, सुना करो। अगर कोई स्त्री भी है और यहाँ सम्यग्दर्शन के साथ में मरण को प्राप्त हो रही है तो वह नियम से देव पर्याय में देवी नहीं बनेगी,

देव ही बनेगी। पुरुष वेद के साथ देव बनेगी। अगर यहाँ से सम्यग्दर्शन के साथ मरण को प्राप्त कर रही है तब इसमें क्या partiality रही? सिद्धांत है! सम्यग्दर्शन के साथ में कभी भी स्त्री पर्याय का बंध नहीं होता। स्त्री पर्याय उसके साथ नहीं मिलेगी।चाहे वह देवियों में भी जाएगी तो वहाँ स्त्री नहीं बनेगी। मनुष्य है पुरुष के रूप में यहाँ पर है। सम्यग्दर्शन के साथ है तो वह भी देव बनेगा और देव जब वहाँ से उतर कर के अगर सम्यग्दर्शन के साथ में वहाँ से चय करके आएगा तो नियम से पुरुष वेद ही बनेगा, पुरुष बनेगा स्त्री नहीं बनेगा। सिद्धांत से पुरुष वेद अपने आप में उत्कृष्ट सिद्ध होता है कि नहीं होता? आवाज ही नहीं आ रही है, सब मरी मरी सी बैठी है। बोलो तो? पुरुष वेद उत्कृष्ट होता है कि नहीं होता? स्त्री वेद उत्कृष्ट नहीं होता है यह किस से सिद्ध होता है? यह इसी सम्यग्दर्शन के सिद्धांत से सिद्ध होता है। स्वर्ग में ऊपर जाने वाले सिद्धांतों से ही सिद्ध होता है कि नव ग्रैवयक और अनुदिश में, अनुत्तरो में स्त्रियाँ क्यों नहीं जाती? कोई भी स्त्री यहाँ पर सम्यग्दृष्टि भी बनी रहे तो भी वहाँ नहीं जा सकती। क्यों नहीं? संहनन भी नहीं और स्त्री वेद के साथ में वहाँ उत्पत्ति भी नहीं। क्या समझ आ रहा है? यह स्वीकार करना होगा आपको कि पुरुष वेद उत्कृष्ट वेद है। स्त्रियों से पुरुष उत्कृष्ट है। मैं यह स्त्रियों से ही स्वीकार करवाऊंगा। कैसे भी बनेगा मैं करवाऊँगा। नहीं तो तब तक डंडा चलाता रहूँगा जब तक बोलोगी नहीं। अतः बोलो स्त्रियों से पुरुष उत्कृष्ट हैं क्योंकि वह सप्तम गुण स्थान को प्राप्त कर सकता है।

मोक्ष का competition सबसे अलग होता है

वह उपरिम ग्रैवेयक आदि में जन्म ले सकता है और उसी के लिए अष्टम नौवें आदि गुण स्थान में ध्यान आदि करने की योग्यता बन सकती है। ये चीजें कभी भी स्त्री पर्याय में नहीं आ सकती हैं और सम्यग्दर्शन के साथ अगर उत्पत्ति होती है तो स्त्री वेद के साथ नहीं, पुरुष वेद के साथ ही उत्पत्ति होती है। इन सब चीजों से यह सिद्ध होता है कि स्त्री वेद से पुरुष वेद प्रशस्त है, पुण्यात्मक है और उत्कृष्ट है। बोलो है कि नहीं? अब बजाई ताली। अब समझ में आ जाएगा तो बजाएँगी। इतनी जिद्दी भी नहीं होती समझदार तो होती है। होती हैं कि नहीं होती? अब यह समझ में आ गया कि स्त्री पुरुष के बराबर, बराबर मतलब अब बराबर की job कर लो, बराबर की कोई भी तुम्हारे लिए मतलब classes मिल जाए, बराबर का कोई competition fight कर लो ये अलग चीज है लेकिन मोक्ष का competition सबसे अलग होता है। ऐसी स्थिति से ही हमें समझ लेना है कि स्त्रियाँ पुरुषों से क्या होती हैं? उत्कृष्ट नहीं होती, हीन होती हैं लेकिन उनमें जितनी योग्यता है उस योग्यता के अनुसार

वह सर्वोत्कृष्ट दशा को प्राप्त कर सकती हैं। वह योग्यता उनके पास में उन्हें बढ़ानी चाहिए इसका मतलब यह नहीं है कि आप बिल्कुल तीर्थंकर की तरह उनके समवशरण में बैठ जाओ। बताओ आज तक किसी तीर्थंकर के गणधर कभी कोई स्त्री बने, कोई तीर्थंकर स्त्री बने। कोई तीर्थंकर भी स्त्री नहीं हैं, कोई भी तीर्थंकर के गणधर भी स्त्री नहीं हैं और कोई भी बड़े-बड़े इंद्र आदि जो होते हैं वे भी स्त्री नहीं होते। इन्द्रों की शचियाँ होंगी, उनकी आयु तो 55 पल्य से ज्यादा कभी हो ही नहीं सकती। जो बड़े इंद्र होंगे उनकी जो मतलब सोलहवें स्वर्ग तक जाने वाली जो देवियाँ होंगी, उनकी 55 पल्य आयु होती है बाकी तो सबकी और कम होती है और इन्द्रों की आयु तो दो सागर, एक सागर इतनी बड़ी-बड़ी आयु होती है तो इससे भी सिद्ध होता है कि बड़ी आयु बड़े पुण्य वाले जीवों को ही मिलती है। इसलिए स्त्रियों से पुरुष, बोलो! श्रेष्ठ हैं। बोलो! स्त्रियों से पुरुष श्रेष्ठ हैं। यह तुम लोगों का दिमाग ज्यादा खराब हो चुका है। दुनिया की एक convent स्कूलों में पढ़-पढ़ कर के इन लड़कियों ने अपने दिमाग ज्यादा खराब कर रखे हैं तो इनके दिमाग थोड़ा सा ऐसे प्रवचन सुना करके ठीक करो। यह काम आपका है घर में जाकर के करना। बोलो आज शांतिनाथ भगवान की जय।

प्रवचनसार गाथा नंबर - 243

पेच्छदि ण च इह लोकं परं च समणिंदेसिदो धम्मो।
धम्मम्हि तम्हि कम्हा वियप्पियं लिंगमित्थीणं॥२४३॥

लोकेषणा न सुरलोकन की अपेक्षा, मोक्षार्थ धर्मपथ है सबकी उपेक्षा।
तो शास्त्र में कथित क्यों पर आर्यिका का, सो पूछना यह रहा इस कारिका का॥

अन्वयार्थ- (समणिंददेसिदो) श्रमणों के स्वामी जिनेन्द्रदेव के द्वारा उपदिष्ट (धम्मो) धर्म (ण च) न तो (इह लोकं) इस लोक की (च) और न ही (परं) परलोक को (पेच्छदि) देखता है अर्थात् उभयलोक की इच्छा से रहित है (तम्हि) उस (धम्मम्हि) धर्म में (कम्हा) फिर जिस कारण से (इत्थीण) स्त्रियों का (लिंगं) लिङ्ग (वियप्पियं) पृथक् रूप से कहा है।

आचार्य कहते हैं- **'समणिंददेसिदो धम्मो'** जो श्रमणों के इन्द्र हैं यानी जिनेन्द्र भगवान, उनके द्वारा उपदेशित यानी कहा हुआ **'धम्मो' अर्थात्** धर्म जो है वह **'पेच्छदि' अर्थात्** देखता है। **'ण' मतलब** नहीं, जो नहीं देखता है। क्या देखता है? **'इस लोक परं च'** इस लोक को भी नहीं देखता और परलोक को भी नहीं देखता। जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म इस लोक की भी इच्छा नहीं करता और परलोक की भी इच्छा नहीं करता, यह इसका अर्थ है। ऐसे **'तम्हि धम्मम्हि' अर्थात्** ऐसे इस धर्म में **'कम्हा' मतलब** किसलिए **'वियप्पियं लिंगमित्थीणं'** स्त्रियों का जो लिंग है, वह विकल्पित क्यों है? मतलब पृथक रूप से उसे क्यों स्थापित किया गया है? एक प्रश्न यहाँ पर स्वयं आचार्य कुन्दकुन्द देव ने उठाया है। उसी को आचार्य महाराज ने पद्यानुवाद में लिखा है।

लोकेषणा न सुरलोकन की अपेक्षा, मोक्षार्थ धर्मपथ है सबकी उपेक्षा।
तो शास्त्र में कथित क्यों पर आर्यिका का, सो पूछना यह रहा इस कारिका का॥

आचार्य कुन्दकुन्द देव ने अष्टपाहुड में तीन ही लिंग बताए हैं

क्या कहना चाह रहे हैं? यहाँ से कुछ नया सा प्रकरण शुरू हो गया है। यह प्रकरण स्त्रियों के संबंध में है। इस प्रकरण की इसमें लगभग ११ गाथाएँ हैं। इन ग्यारह गाथाओं को आचार्य

अमृत चन्द जी महाराज ने अपनी टीका का विषय नहीं बनाया। यह जो स्त्री सम्बन्धी ग्यारह गाथाओं का प्रकरण है, इन 11 गाथाओं को केवल आचार्य जय सेन महाराज ने इसकी टीका की और प्रभाचन्द्र महाराज ने इसकी टीका की। कई प्रवचनसार की प्रतियों में यह ग्यारह गाथाएँ उपलब्ध नहीं होती हैं। ये स्त्रियों सम्बन्धी ग्यारह गाथाएँ हैं। स्त्रियों का लिंग मतलब होता है- जिससे स्त्रियों की एक विशेष पहचान होती है कि यह धर्म के मार्ग पर चलने वाली हैं, उन्हें स्त्री लिंग कहते है। जैसे जिन लिंग कहा जाता है मतलब जिनेन्द्र भगवान के मार्ग पर चलने वाले जो साधु श्रमण हैं वे जिन लिंग को धारण करने वाले हैं। हर एक व्यक्ति के लिए यह जो आचरण के अनुसार व्यवस्था बनती है, उसको लिंग के रूप में कहा जाता है। आचार्य कुन्दकुन्द देव ने सबसे पहला लिंग, जिन लिंग कहा। सबसे प्रथम जिन लिंग होता है, जिसे हम श्रमण लिंग कहते हैं और उसी को हम मुनि महाराज का स्वरूप कहते हैं, जो दिगम्बरत्व के रूप में हमें सामने दिखाई देता है। फिर आचार्य कुन्दकुन्द देव ने अष्टपाहुड ग्रन्थ में दूसरा लिंग कहा **'उक्कट्ठ सांयाणं'** जो उत्कृष्ट श्रावक है उनका लिंग दूसरा लिंग है और फिर तीसरा लिंग कहा **'अवरट्ठियाणं'** जो तीसरा पुनः अपर स्थान पर स्थित है, उसे तीसरे लिंग के रूप में कहा। अब तक इस गाथा की व्यवस्था के अनुसार जब हम आचार्य कुन्दकुन्द देव के अभिप्राय को देखते हैं जो अष्ट पाहुड की गाथा है तो पहला लिंग, जिन लिंग मुनि महाराजों का हो गया है। दूसरा लिंग उत्कृष्ट श्रावकों का हो गया। उत्कृष्ट श्रावक कौन से होते हैं? जिन्हें हम दसवीं-ग्यारहवीं प्रतिमा के धारक कहते हैं, वे उत्कृष्ट श्रावक होते हैं। जिन्हें हम छुल्लक, ऐल्लक के रूप

लिंग - प्रत्येक व्यक्ति के लिए आचरण के अनुसार जो व्यवस्था बनती है, उसे लिंग कहते हैं।

स्त्री लिंग- धर्म के मार्ग पर चलने वाली स्त्रियों की एक विशेष पहचान होती है। उन्हें स्त्री लिंग कहते है।

जिन लिंग - जिनेन्द्र भगवान के मार्ग पर चलने वाले जो साधु श्रमण हैं वे जिन लिंग को धारण करने वाले हैं।

पहला लिंग	दूसरा लिंग	तीसरा लिंग
जिन लिंग, श्रमण लिंग, मुनि महाराज का स्वरूप।	उत्कृष्ट श्रावक, दसवीं-ग्यारहवीं प्रतिमा के धारक कहते हैं,	मध्यम श्रावक, जघन्य श्रावक,
यह लिंग दिगम्बरत्व के रूप में हमें दिखाई देता है।	छुल्लक, ऐल्लक	अपर स्थान पर स्थित है

में कहते हैं, वे उत्कृष्ट श्रावक होते हैं। फिर तीसरा लिंग उन्होंने कहा **'अवरद्दिठयाणं'** और जो अपर स्थान मतलब उससे भी जो जघन्य स्थान में स्थित हैं, तीसरे लिंग वाले हैं। अब यहाँ पर कई लोग अपनी उस व्याख्या में आर्यिकाओं को भी जोड़ लेते हैं और स्त्रियों के लिंग की व्यवस्था बना करके उस व्यवस्था को चलते हैं लेकिन अगर अष्टपाहुड के उस ग्रन्थ का अभिप्राय देखा जाता है तो उससे यह समझ में आता है कि जो उत्कृष्ट श्रावक के अलावा अन्य जो श्रावक हैं, मध्यम श्रावक, जघन्य श्रावक उनका लिंग अपर स्थान में रखा मतलब वह तृतीय लिंग के रूप में वहाँ व्यवस्थापित किया। फिर आगे कहते हैं- **'चौथं पुणलिंग दंसणे णत्थि' जिनेन्द्र** भगवान के दर्शन में कोई चौथा लिंग नहीं है। मतलब यह तीन प्रकार के लिंग कहे जाते हैं- व्यवस्था, चिन्ह जिसके माध्यम से हम साधुओं की category को पहचान सकते हैं।

स्त्रियों के लिंग की जिनलिंग से पृथक व्यवस्था

SCAN TO WATCH

अब यहाँ पर उस अभिप्राय को देखते हुए पढ़ा जाए, सीखा जाए तो यहाँ कहा जा रहा है कि जिनेन्द्र भगवान के धर्म में स्त्रियों के लिंग की व्यवस्था पृथक रूप से क्यों कही गई है? मतलब जिन लिंग के अलावा स्त्रियों का लिंग अलग से व्यवस्थापित किया गया है। स्त्रियों की व्यवस्था अलग है। पृथक रूप से जिन लिंग से अलग उसकी व्यवस्था की गई है तो यहाँ आचार्य कुन्दकुन्द देव ने स्वयं ही मानो प्रश्न उठाया कि जब स्त्रियों के लिए उस भव से मोक्ष नहीं होता और स्त्रियों के लिए इस भव से उन्हें शुक्ल ध्यान आदि के माध्यम से सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती तो इनके लिए यह अलग से लिंग की व्यवस्था ही क्यों बनाई है? उसी प्रश्न का उत्तर में यहाँ पर आगे की गाथा में कहा जाएगा और ये गाथाएँ एक साथ ग्यारह गाथाएँ हैं। अब यह स्त्रियों का प्रकरण बहुत समय तक कितना चलेगा तो उस उत्तर को भी आगे अभी पढ़ते हैं।

स्वयं को धर्म में प्रतिष्ठित ख्याति पूजा लाभ से निरपेक्ष हो कर करना

एक खास बात जो इस ग्रन्थ में अभी जो दिख रही है, वह यह है कि भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म इस लोक और परलोक की अपेक्षा नहीं रखता है या इस लोक और परलोक को नहीं देखता है। इस लोक का मतलब हो गया इस लोक में ख्याति-पूजा-लाभ की इच्छा नहीं करना। ख्याति-पूजा-लाभ की इच्छा के बिना इस लोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करने

की इच्छा के बिना धर्म करना, ऐसा जिनेन्द्र भगवान का धर्म कहता है। मतलब यह है कि जिनेन्द्र भगवान के धर्म को करने वाला जीव प्रतिष्ठा की इच्छा न करे, अपनी प्रभावना की इच्छा न करे। ख्याति पूजा लाभ की इच्छा न करे। यह जिनेन्द्र भगवान के धर्म का कहना है। देखो! कितनी बड़ी बात है! दुनिया में हर कोई व्यक्ति, हर कोई अपने-अपने धर्म की प्रतिष्ठा करता है और धर्म की प्रतिष्ठा करने वाला भी कहता है कि तुम हमारे धर्म की प्रतिष्ठा करना। लेकिन यहाँ आचार्य देव कहते हैं- स्वयं तीर्थंकर महावीर भगवान ने कहा कि आप हमारे धर्म की कहीं प्रतिष्ठा मत करना। आप हमारे धर्म की प्रतिष्ठा करके कोई भी हमारे धर्म के ऊपर उपकार मत करना। क्या समझ आ रहा है? हमने जो धर्म बताया है, आप उसकी अपने में प्रतिष्ठा कर लेना। क्या कहा? हमने जो धर्म बताया उसकी अपने में प्रतिष्ठा कर लेना क्योंकि अगर आप दूसरे के लिए धर्म की प्रतिष्ठा करने में अपना भाव रखोगे तो हो सकता है कि तुम्हारा धर्म भी छूट जाए। इसलिए मुख्य प्रयोजन है अपने धर्म की प्रतिष्ठा करना। स्वधर्म को पहले पालन करना, स्वधर्म को जानना और स्वधर्म का पालन करते हुए जो अपने आप लोगों के द्वारा धर्म जानने में आ जाएगा, वह आपके द्वारा दूसरे के प्रति भी धर्म का प्रतिष्ठापन कहलाएगा। दूसरे के लिए आपने धर्म की प्रभावना कर दी वह भी हो जाएगा। लेकिन ख्याति पूजा लाभ की इच्छा किए बिना आप अपने धर्म को बचा करके रखना। यह जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म है। मतलब इतनी बड़ी condition है भगवान के धर्म में कि धर्म करने वाला धार्मिक व्यक्ति धर्म करे, ख्याति पूजा लाभ की इच्छा न करे। अपने आप उसे सब यह चीजें मिले तो उन पर भी ध्यान न दे और उनकी अगर प्राप्ति न हो तो उसकी प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ भी न करे।

क्या नहीं करता जिनेन्द्र भगवान के धर्म को करने वाला जीव-

- लोक और परलोक की अपेक्षा नहीं रखता।
- लोक में ख्याति-पूजा-लाभ की इच्छा नहीं करता।
- प्रतिष्ठा की इच्छा नहीं करता।

क्या करता है जिनेन्द्र भगवान के धर्म को करने वाला जीव-

- धर्म की अपने में प्रतिष्ठा करता है।
- स्वधर्म का पालन करता है।
- स्वधर्म को जानता है।

लोक-परलोक की इच्छा के बिना ही आत्मकल्याण संभव है

पुरुषार्थ किसके लिए करे? अपने आत्मधर्म की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ करें। समझ में आ रहा है? यह इतना आत्मा से जुड़ा हुआ धर्म है। उस धर्म को जो इस लोक में भी किसी की इच्छा नहीं करता कि लोग हमारे भक्त बने, लोग हमारी पूजा करे, लोग हमको बड़ी-बड़ी उपाधियों से नवाजे, लोग हमारे लिए बड़े-बड़े उत्कर्ष hoarding लगा करके हमारी महिमा बढ़ाएँ। यह सब कोई भी इच्छाएँ इस जिनेन्द्र भगवान के धर्म में नहीं आती हैं। इसको बोलते हैं- इस लोक को नहीं देखना। इस लोक में जो हो रहा है उसकी ओर मत देखो। अपनी ओर देखो। इस लोक में कौन क्या कर रहा है करने दो। आप क्या कर सकते हो? बस! अपने लिये, अपने धर्म के लिए वह आप करें। यह इतना अपने ऊपर एक तरीके से आत्मनियंत्रण रखने वाला धर्म है कि इस धर्म की हम भीतरी इस शक्ति को समझ ले और भीतरी भावना को समझ ले तो हमारे अन्दर अपने आप आत्म-कल्याण की भावना बढ़ती चली जाएगी और पर कल्याण की भावना गौण हो जाएगी। फिर आचार्य कहते हैं- परलोक की भी इच्छा नहीं करना। मतलब परलोक में स्वर्ग का सुख मिले, चक्रवर्तियों का सुख मिले, राजाओं का सुख मिले, ऐसी कोई भी कोई इच्छा मत करना। जहाँ पर न इस लोक की कोई इच्छा है, न परलोक की भी कोई इच्छा है, ऐसा यह धर्म है और उस धर्म में जब मुनि महाराज ही मुख्य रूप से ऐसा धर्म कर पाते हैं क्योंकि जिन के लिए परलोक नहीं चाहिए, स्वर्ग भी नहीं चाहिए मतलब जिनको मुक्ति ही चाहिए तो वह मुक्ति कौन प्राप्त कर सकेगा? वह केवल जिन-लिंग को धारण करने वाला व्यक्ति ही मुक्ति प्राप्त कर सकेगा। ऐसी स्थिति में आपने यह स्त्रियों का लिंग अलग से क्यों बनाया, जब उन्हें मुक्ति होती ही नहीं है और मुक्ति उनको उस भव से होना ही नहीं है तो उनके लिए स्त्रियों का लिंग, ये आर्यिका का लिंग, ये आर्यिकाऐं हैं ऐसा क्यों अलग से लिंग स्थापित किया? ऐसा प्रश्न यहाँ आचार्य कुन्दकुन्द देव ने उठाया। अब उसी का उत्तर वे आगे की गाथाओं में देते हैं आप लोग पढ़ने की कोशिश करें।

प्रवचनसार गाथा नंबर - 244

णिच्छयदो इत्थीणं सिद्धी ण हि तेण जम्हणा दिट्ठा।
तम्हा तप्पडिरूवं वियप्पियं लिंगमित्थीणं॥२४४॥

न मोक्ष हो नियम से गृह वासियों को, पैसा उसी जनम से श्रमणीजनों को ।
औचित्य सावरण लिंग कहा इसी से, सत् शास्त्र में रुचि सभी धर लो सुधी से॥

अन्वयार्थ- (णिच्छयदो) निश्चय से (इत्थीणं) स्त्रियों की (सिद्धी) मुक्ति (तेण जम्हणा) उसी भव से (ण हि) नहीं (दिट्ठा) सर्वज्ञदेव ने नहीं देखी हैं (तम्हा) इस कारण से (इत्थीणं लिंग) स्त्रियों का लिङ्ग (तं पडिरूवं) उन्हीं के योग्य (वियप्पियं) पृथक् रूप से कहा है।

सर्वज्ञ ने स्त्रियों की मुक्ति उसी भव से नहीं देखी है

देखो! क्या कहते हैं? **'णिच्छयदो'** निश्चय से **'इत्थीणं सिद्धि ण हि'** स्त्रियों को सिद्धि नहीं होती है। **'तेण जम्हणा दिट्ठा'** उसी जन्म से स्त्रियों की सिद्धि नहीं देखी गई है। **'तम्हा' मतलब** इसलिए **'तप्पडिरूवं'** उनका प्रतिरूप **'वियप्पियं'** यानी स्थापित किया गया है, विकलपित किया गया है। **'लिंगमित्थीणं'** वही स्त्रियों का लिंग के रूप में स्थापित है। क्या कहा? अब यहाँ आचार्य स्वयं कह रहे हैं कि स्त्रियों की मुक्ति उसी भव से नहीं देखी गई है। किसने नहीं देखी? सर्वज्ञ भगवान ने नहीं देखी। समझ में आ रहा है? यह विषय ऐसा नहीं जैसा लोग समझते हैं। आगे बहुत सी चीजें clear होने वाली हैं। स्त्रियाँ विशेष इस रूप से इस पक्ष को सुने, समझे और इस पक्ष को समझ कर के शास्त्रोक्त बात को दूसरों को बताने की हिम्मत भी रखें।

जैसी योग्यता होगी उतना ही कार्य होगा

आचार्य कहते हैं कि जिनेन्द्र भगवान ने अपने ज्ञान में स्त्रियों की मुक्ति देखी ही नहीं। क्या समझ आ रहा है? लोग कहते हैं कि जैनियों के यहाँ पर स्त्रियों को पीछे क्यों रखा गया? स्त्रियों को मुक्ति क्यों नहीं दिलाई जाती है? भैया जबरदस्ती दिलाई दी जाएगी क्या? ढकेल के पहुँचा दिया जाएगा क्या। जैनियों के यहाँ कोई ऐसा भगवान तो है

नहीं जैसे आप लोगों ने अपने भगवान के बारे में सोच रखा है कि भगवान ही हमें उठा कर के स्वर्ग पहुँचा देता है और भगवान ही हम को उठाकर के नरक पहुँचा देता है। जैनियों के यहाँ तो ऐसा कोई भगवान है ही नहीं तो जैनी कैसे करेंगे। जो चीज होना ही नहीं है वह नहीं होना। जो होना है वह होना है। यह भी एक law of nature कहलाता है और इसको भी हम बहुत अच्छे ढंग से समझ सकते हैं जिसके अन्दर जितनी योग्यता होती है, वह उतनी ही योग्यता को प्राप्त कर सकता है। जिसके अन्दर जो योग्यता नहीं है, वह उस योग्यता को प्राप्त नहीं कर सकता। यही तो कहा है कि जिनेन्द्र भगवान ने नहीं देखा। क्यों नहीं देखा? क्योंकि ऐसा होता ही नहीं है। भगवान वही देखते हैं जो होता है। हमारे यहाँ भगवान ऐसा नहीं कि वह कर रहे हैं कि पुरुषों को तो मुक्ति पहुँचा रहे हैं और स्त्रियों को पीछे ढकेल कर रहे हैं कि नहीं! नहीं! तुम मुक्ति मत जाना। ऐसा तो नहीं है। भगवान तो कुछ करने वाले है ही नहीं। आपके पास में कितनी योग्यता है, आप अपनी उस योग्यता के अनुसार जो करोगे वह उनके ज्ञान में दिखाई देगा और जो उनके ज्ञान में दिखाई देगा वैसा ही कहेंगे। यह सर्वज्ञ भगवान का कार्य है।

जो होता है वही सर्वज्ञ की वाणी में आता है

SCAN TO WATCH

क्या समझ आ रहा है? यहाँ भगवान कोई कर्ता नहीं है, न doer है, न preserver है, न ही destroyer है। ऐसा कोई भगवान नहीं होता जो इस विश्व का कुछ करने वाला हो या उसकी रक्षा करने वाला हो या उसको नष्ट करने वाला हो। भगवान तो केवल जगत में देखने वाला होता है, वह यहाँ कहाँ जा रहा है। सर्वज्ञ का मतलब 'who see only this world' जो केवल इस संसार को देखता है। जो देखता है और केवल जानता है, उसको सर्वज्ञ कहा जाता है। सर्वज्ञ भगवान ने जो देखा, वही देखा जो हुआ। past में भी कभी ऐसा हुआ नहीं, present में भी नहीं हो रहा है और future में भी नहीं होगा। यह भगवान ने तीनों कालों में देख रखा है। स्त्री की मुक्ति न पहले कभी हुई है, न अभी है और न भविष्य में होगी। स्त्री के मुक्ति से मतलब क्या है? **'तेणं जम्हणा'** उसी जन्म के द्वारा, बस! उसी जन्म में उसकी मुक्ति नहीं है, यह कहा गया है। क्या समझ आ रहा है? direct उसके पास में इतनी योग्यता नहीं है कि वह अपने उस स्त्री के शरीर से मुक्ति को प्राप्त कर सके, यह कहा गया है। इसलिए यह भगवान ने जो कहा है, वह उन्होंने अपने ज्ञान में देखा है तब कहा है। लोग यह समझते हैं जैनियों के यहाँ यह व्यवस्था क्यों नहीं है?

अरे भाई! व्यवस्था तो वह होती है, जैसा होता है वैसा कहा जाता है। जैनियों ने कोई विश्व पर अपना साम्राज्य स्थापित नहीं कर रखा है। जैनियों ने कोई भगवान को कर्ता नहीं मान रखा है और भगवान को कर्ता मानकर के कोई व्यवस्था नहीं बना रखी है। जैसा हमने कह दिया वैसा ही होगा। जैसा दुनिया में दूसरे भगवानों ने कर रखा है। दुनिया में हर भगवान ने अपनी व्यवस्था बना रखी है- मैं जैसा कहूँगा वैसा ही होगा। मैंने जैसा किया है वैसा ही होगा, मैंने जैसा कर दिया वैसा ही दुनिया में देखने में आएगा तो यहाँ वह व्यवस्था नहीं है। यह कितनी बड़ी व्यवस्था है?

सर्वज्ञ भगवान क्या करते हैं	सर्वज्ञ भगवान क्या नहीं करते
सर्वज्ञ भगवान केवल देखते हैं।	सर्वज्ञ भगवान विश्व के कर्ता नहीं।
सर्वज्ञ भगवान केवल जानते हैं।	सर्वज्ञ भगवान विश्व को नष्ट करने वाले नहीं।
सर्वज्ञ भगवान वही देखते हैं जो होता है।	सर्वज्ञ भगवान विश्व को बचाने वाले नहीं।

प्रत्येक पदार्थ स्वतंत्र है भगवान किसी के कर्ता नहीं हैं

बिल्कुल दुनिया में हर पदार्थ स्वतंत्र रखा गया है। कोई किसी के लिए कुछ करने वाला नहीं है। जो कुछ हो रहा है सब अपने-अपने भावों से हो रहा है। अपने-अपने कर्मों से हो रहा है, अपनी-अपनी योग्यता से हो रहा है। भगवान किसी की योग्यता को न बढ़ा सकते हैं, न कम कर सकते हैं। भगवान किसी की योग्यता को देख सकते हैं। जैनियों को भी भगवान की यह व्यवस्था समझ में नहीं आती है। सब जैन, जैन कहे जाते हैं, बड़े-बड़े समयसार और प्रवचनसार पढ़ लेते हैं और हमेशा यही बात वह कहते हुए दिखाई पड़ते हैं, सुनाई पड़ते हैं कि जो कुछ कर रहा है वह भगवान कर रहा है। यह thinking दिमाग से जाती ही नहीं। कोई भी कार्य हो रहा है, भगवान के द्वारा हो रहा है। भगवान ने ही हमको बनाया, भगवान ने स्त्री को बनाया, भगवान ने ही पशुओं को बनाया, भगवान ने ही पक्षियों को बनाया, भगवान ने ही जगत को बनाया, भगवान के द्वारा ही सब कुछ इस जगत की क्रिया चल रही है। जिस दिन भगवान चाहेगा जगत की क्रिया रोक देगा। एक तरफ तो वह भगवान दिमाग में बसा हुआ है और यहाँ क्या कहा जा रहा है? ऐसा कोई भी भगवान नहीं होता है। जो वास्तव में भगवान है, वह कभी किसी दूसरे के लिए कुछ भी नहीं कर सकता। वह जो दूसरा कर रहा है उसको जानेगा, देखेगा और जो सही रास्ता है, उस रास्ते को बता देगा कि इस रास्ते पर

चलते हुए आप यहाँ पहुँच सकते हो। यह भगवान का काम है। यहाँ वही चीज कही गई है कि भगवान ने किसी स्त्री की मुक्ति direct स्त्री भव से देखी ही नहीं, होती ही नहीं, न past में, न present में, न future में और न है, न कभी हुई, न कभी होगी। कभी ऐसा हुआ ही नहीं, यह सर्वज्ञ भगवान ने देखा है। इसका मतलब यह नहीं है कि महावीर भगवान ने व्यवस्था बना दी कि आदिनाथ भगवान ने व्यवस्था बना दी कि स्त्रियों की मुक्ति नहीं होगी। उन्होंने स्त्रियों की मुक्ति के दरवाजे बंद कर दिए। पहले आप अपनी अक्ल के दरवाजे खोल लो तो स्त्रियों की मुक्ति के दरवाजे आपको खुलते हुए दिखाई देंगे।

स्त्री के शरीर से मुक्ति की व्यवस्था ही नहीं है— यह ।aw of nature है

SCAN TO WATCH

लोग समझ ही नहीं पाते कुछ भी। अदवा-तदवा कुछ भी बोलते रहते हैं। यहाँ तक कि जैन बच्चे ही बोलते हुए मिलते हैं। कितने ही जैन बच्चियाँ, बेटियाँ हमसे आकर तर्क करते हैं कि महाराज! यह व्यवस्था क्यों? व्यवस्था का मतलब क्या? पहले तो यह समझो। क्या समझ आ रहा है? यह कोई जबरदस्ती तो नहीं है। आपके लिए कोई अलग से रोका नहीं गया है। आपके लिए कोई अलग से व्यवधान पैदा नहीं किया है या आपके लिए कोई अलग से योग्यता होते हुए भी आपके लिए आगे बढ़ने के लिए मना नहीं किया गया है। यह तो जैसा हो रहा है, उसको देख कर के भगवान ने कहा कि ऐसा नहीं होता है। कुछ समझ आ रहा है कि नहीं आ रहा है? इसलिए भगवान सर्वज्ञ कहलाते हैं। कर्ता नहीं कहलाते हैं। क्या कहलाते हैं भगवान? **सर्वज्ञ। 'सर्वं जानाति इति सर्वज्ञ'** जो सब जानते हैं और जो अपने आत्मज्ञान में, केवल ज्ञान में देखते हैं वे कहते हैं। आप दिखा रहे हो, वे देख रहे हैं और जो देखने में आ रहा है, वह कहा जा रहा है। पहले यह समझ लो भगवान की व्यवस्था क्या है? महावीर भगवान पर ही टूट पड़ते हैं, आदिनाथ भगवान पर ही टूट पड़ते हैं। भगवान ने ऐसी व्यवस्था क्यों बना दी कि स्त्रियों की मुक्ति नहीं? अरे! भगवान ने कोई रोक दिया क्या? चली जाओ मुक्ति की ओर, देखे कैसे मुक्ति मिल जाएगी तुम्हें? कर लो कुछ, क्या कर लोगी? क्या समझ आ रहा है? कर लो क्या कर लोगी? अभी यहाँ बताने वाले हैं कि क्यों नहीं होती है मुक्ति? देखो! जैन धर्म completely logical।y हर चीज की व्यवस्था बनाता है और एक-एक logic को अगर आप ढंग से समझने की हिम्मत करो तो हम आपको समझा पाएँगे। यद्यपि आगे आने वाली गाथाएँ ऐसी हैं जो सब कोई पढ़ता नहीं, पढ़ाता नहीं लेकिन फिर भी हम हिम्मत करेंगे आप को पढ़ाने की, सिखाने की क्योंकि

अब यह जमाना ऐसा आ गया है, इस जमाने में सब कुछ दिखाना बताना जरूरी है। जब आचार्य ने लिखा है तो फिर हमें बताने में, पढ़ाने में संकोच क्यों करना। समझो तो व्यवस्था क्या है? हम चीजें छुपा करके रखेंगे तो आपको कभी भी ज्ञान होगा नहीं।

स्त्री को मोक्ष क्यों नहीं यह निरपेक्षता से समझना चाहिए

आचार्य अमृत चंद जी महाराज ने तो इस प्रकरण को ही नहीं छेड़ा। इतने मतलब निर्विकल्प हैं कि उन्होंने सोचा कि लिंग स्त्रियों के चक्कर में पड़ना ही क्यों? यह मुद्दा उठाना ही क्यों? वाद-विवाद का मुद्दा है इसको उठाना ही क्यों? उन्होंने इन गाथाओं को छुआ ही नहीं और मैं इस बात को इसलिए भी कह सकता हूँ कि जब इन प्रवचनसार ग्रंथ की टीकाओं को पढ़ रहा हूँ और आप के लिए व्यवस्थापित ढंग से इसको सुना रहा हूँ तो पिछली एक गाथा ऐसी आई थी जिसकी टीका अमृतचंद्र जी महाराज ने की ही नहीं। अलग से उस गाथा को लिख करके उसकी टीका नहीं की लेकिन अपनी ही उस गाथा की टीका में, पिछली गाथा की टीका में, अगली गाथा का भाव उसमें पिरो दिया। मतलब इससे यह समझ में आता है कि यह जो बीच-बीच में गाथाएँ आई हैं, ये गाथाएँ उनके समक्ष थी। लेकिन उन्होंने अपनी इच्छा से इस प्रकरण को उठाना या नहीं उठाना अपनी इच्छा से उन्होंने बना कर के रखा। क्योंकि पहले भी यह नमस्कार रूप गाथा आई थी जिसका उल्लेख उन्होंने अलग से नहीं किया लेकिन अपनी टीका में ही उसको समाहित कर लिया। ऐसी एक गाथा पिछली बार, उस टीका का भाव में आ चुका है, वह मैं पहले बता चुका हूँ। इससे यह बात समझ में आती है कि अमृतचंद्र जी महाराज के पास में उनके सामने गाथाएँ थी। जो लोग यह शंका रखते हैं कि उनके पास पता नहीं ये गाथाएँ थी कि नहीं थी। अब हम कह सकते हैं कि उनके पास ये गाथाएँ थी लेकिन उन्होंने जानबूझकर के इन गाथाओं की टीका नहीं की क्योंकि वह इन चक्कर में पड़ना नहीं चाहते। क्योंकि यह चक्कर कहाँ से भी शुरू हो जाता है? पहली बात तो यह है कि दिगम्बर और श्वेताम्बर के बीच का भी यह चक्कर है, in general तो बाद की बात है। क्योंकि श्वेताम्बरों ने मान रखा है कि स्त्री की मुक्ति होती है। उन्होंने मल्लि कुमारी को भगवान मान लिया। मल्लि कुमार यह नाम उनको स्त्री जैसा दिखाई दिया इसलिए उन्होंने 24 भगवानों में मल्लि कुमार ही चुने। यह सब उसकी जो व्यवस्थाएँ हैं, उनके बाद के जो आचार्य हुए उनकी परंपरा में उन्होंने व्यवस्थाएँ बनाई और इन व्यवस्थाओं को बनाने के लिए जो उन्होंने तर्क दिए वह तर्क भी बहुत कुछ संगत नहीं बैठते हैं। उनके भी ग्रंथों को देखेंगे तो उनके ही ग्रंथों में ऐसे बहुत से सूत्र मिल जाते हैं, जिन सूत्रों में निषेध किया

गया है कि स्त्री के लिए उत्कृष्ट संहनन नहीं होता है और जब उत्कृष्ट संहनन नहीं होता तो स्त्री की मुक्ति नहीं हो सकती। उनके भी लिखे हुए कई ऐसे ग्रंथ हैं जिनमें स्त्री की मुक्ति का निषेध है। लेकिन फिर भी वर्तमान में मल्लि कुमार को स्त्री बना करके उन्हें मोक्ष पहुँचाने की एक जबरदस्ती की प्रक्रिया की गई। लेकिन वह मल्लिनाथ भगवान पुरुष ही थे, वह स्त्री नहीं थे। नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि वह मल्लि कुमारी थी, जबकि वह मल्लिकुमार थे। इस नाम के भ्रम में उन्होंने तीर्थंकर को पकड़ लिया और उन्हें स्त्री मोक्ष पहुँचा दिया। परंपरा अपनी अलग बना ली। इसलिए बड़े-बड़े आचार्य सोचते हैं क्यों इस झंझट में पड़ा जाए। क्या दिगम्बर? क्या श्वेताम्बर? इसलिए उन्होंने इन गाथाओं को छुआ ही नहीं।

मनुष्य होते हुए भी स्त्री और पुरुष की शारीरिक व मानसिक संरचना अलग है

लेकिन हमें वस्तु व्यवस्था तो समझ पड़ेगी। एक physics होती है, एक metaphysics होती है। अगर science के student समझने की कोशिश करें तो। physics जो होती है वह material जो things होती हैं उनके साथ जुड़ी रहती है और जो metaphysics होती है वह law of nature के साथ जुड़ी रहती है। उस metaphysics के through जो unfold truth जो होते हैं वह हमारे सामने आते हैं। जो truth हमारे nature के साथ जुड़ते हैं। पुरुष का nature क्या? स्त्री का nature क्या? जगत का nature क्या? इस nature को जो बताने वाली जो physics होती है उसे metaphysics कहा जाता है। आगे जो हमारे सामने गाथाएँ आने वाली हैं, यह हमें उस स्त्री के nature को बताने वाली हैं कि हम body की अपेक्षा से तो मनुष्य रूप में हैं लेकिन अगर हम metaphysics की अपेक्षा से देखें तो हमारे nature अलग हैं और पुरुषों के nature अलग होते हैं। मनुष्य एक होते हुए भी स्त्रियाँ अलग हैं, पुरुष अलग हैं। स्त्रियों की physical body अलग है और पुरुषों की body अलग है, यह तो सबको स्पष्ट है। समझ आ रहा है? यह बात धीरे-धीरे वहाँ जाती है कि इसके कारण से हम यह समझ सकते हैं कि law of nature जो उनके शरीर के साथ जुड़ता है, वह अलग है और जो पुरुषों के शरीर के साथ जुड़ता है वह अलग है। जब metaphysics अलग हो गई तो chemistry तो भीतर की अलग होगी ही है। क्या समझ आ रहा है? chemistry का मतलब हमारे भीतर क्या-क्या घटित हो रहा है? क्या-क्या होगा? और क्या नहीं हो सकता है? इसको भी हम सीखने की कोशिश करें। आगे की गाथा में आचार्य देव स्वयं कह रहे हैं उसी को हम पढ़ते हैं।

प्रवचनसार गाथा नंबर - 245

पगडीपमादमइया एदासिं वित्ति भासिया पमदा।
तम्हा ताओ पमदा पमादबहुलं त्ति विण्णादा॥२४५॥

नारी रची प्रकृति से परमाद से है, सो कोष में कि प्रमदा अनुवाद से है।
है निर्विवाद जब वो प्रमदा सदी से, मानी प्रमाद बहुला समझो इसी से॥

अन्वयार्थ- (एदासि) इन स्त्रियों को (वित्ति) वृत्ति (पगडीपमादमइया) स्वभाव से प्रमादमय है (तम्हा) इसलिये इन्हें (पमदा) प्रमदा (भासिया) कहा है (ताओ पमदा) ये प्रमदा स्त्रियाँ (पमादबहुलं) प्रमाद बहुल हैं (इत्ति) इस प्रकार (विण्णादा) कहा है।

स्त्री में प्रमाद की बहुलता होती है

देखो! क्या कहते हैं? **'पगडीपमादमइया'** इनकी **'पगडी'** मतलब होता है- प्रकृति, इनका nature. कैसा है? प्रमादमय है। **'पमाद मइया' मतलब** प्रमाद मय है। **'एदासिं'** मतलब इनकी और **'वित्ति' मतलब** इनकी जो वृत्ति है, वह भी प्रमाद मय है। इसलिए इनको प्रमदा इस नाम से कहा जाता है। शब्द शास्त्र में स्त्रियों का एक नाम आता है- **'प्रमदा'** जिनके अन्दर प्रकृष्ट मद भरा रहता है या जो प्रमाद से युक्त होती हैं, उन्हें प्रमदा कहा जाता है। यह साहित्य में, शब्द शास्त्र में स्त्रियों के पर्यायवाची नाम बहुत से आते हैं- नारी, वनिता, स्त्री, अबला, प्रमदा ये सब नारियों के नाम आते हैं तो उसमें एक नाम आता है- प्रमदा। उसकी यहाँ व्याख्या की है। महिला! यह भी एक नाम आता है- **'तम्हा' मतलब** इसलिए **'ताओ पमदा'** इसलिए उनका जो प्रमदा नाम है. वह **'पमादबहुलं त्ति विण्णादा'** वह प्रमाद की बहुलता वाली होती है, यह जानना चाहिए।

स्त्रियों में प्रमाद की बहुलता का कारण उनके कर्म हैं

अब यह आचार्य कह रहे हैं, अपने मन से नहीं कह रहे हैं, यह भगवान की वाणी है। भगवान ने स्त्रियों के बारे में ऐसा कहा है, जो वास्तव में समझदार स्त्री होगी वह भगवान की

वाणी को मानेगी, स्वीकार करेगी। वह क्यों बुरा मानेगी? जो है, सो है; जो है, सो है। अब वह क्यों है? उसका भी क्या कारण है? उसका भी कारण अपना-अपना कर्म है। वह भी सब जानते है, तो उसी को हम उसी रूप में समझने की कोशिश करे कि यह जो आचार्य कह रहे हैं, यह इसका कारण बता रहे हैं और इस कारण को समझे बिना हम कभी भी स्त्रियों की व्यवस्थाओं के बारे में समझ नहीं सकते हैं। इसी को आचार्य महाराज ने कैसे लिखा है?-

प्रमदा

- जिनके अन्दर प्रकृष्ट मद भरा रहता है
- जो प्रमाद से युक्त होती हैं

ना मोक्ष हो नियम से गृहवासियों को, वैसा उसी जनम में श्रमणीजनों को।
औचित्य सावरण लिंग कहा इसी से, सत्त शास्त्र में रुचि सभी धर लो सुधी से॥२४४॥

नारी रची प्रकृति से परमाद से है, सो कोष में कि प्रमदा अनुवाद से है।
यह निर्विवाद जब वो प्रमदा सदी से, मानी प्रमाद बहुला समझो इसी से॥२४५॥

सावरण लिंग का निषेध है

SCAN TO WATCH

कुछ समझाने के लिए है ही नहीं अगर समझदारी हो तो। क्या कह रहे हैं? पहली बात तो यह है कि देखो! **'मुक्ति केवल जिन लिंग से कही गई है'** सबसे बड़ी बात यह समझ लो। जो नारियाँ यह भाव रखती हैं कि हमारी मुक्ति का निषेध है, वह यह समझें कि आप की मुक्ति का निषेध नहीं है, आपके सावरण लिंग का निषेध है। क्या कहा? **'सावरण लिंग'** आपका जो लिंग है, आपका जो रूप है वह सावरण रहेगा मतलब आवरण से सहित रहेगा। समझ आ रहा है? मुक्ति होगी निरावरण लिंग से और निरावरण लिंग अगर जिनलिंग है, तो ही वह निरावरण लिंग उस मुक्ति का कारण बनता है। वह निरावरण लिंग की व्यवस्था पुरुषों के साथ हो जाती है, स्त्रियों के साथ नहीं हो पाती हैं। पुरुष भी अगर सावरण लिंग वाला है, उत्कृष्ट श्रावक का लिंग है, जघन्य श्रावक का लिंग है, छुल्लक है, ऐलक है एक लंगोटी भी लिए हुए है, तो वह श्रावक सावरण

लिंग वाला है, आवरण से सहित है तो उसकी भी मुक्ति नहीं होगी। आप यह क्यों हठ करते हो कि पुरुष की मुक्ति हो रही है। पुरुष में भी मुक्ति उसकी है जो निरावरण हुआ है। दिगम्बर हो करके जिसने अपने पास में कोई भी आरंभ परिग्रह नहीं रखा है और जिसके अन्दर रत्नत्रय पूर्ण रूप से पालन करने की क्षमता आई है, मुक्ति उसको होगी।

पुरुष का भी मुक्ति के लिए निरावरण होना जरूरी है

पुरुष कहने का मतलब तो यह हो गया कि आपने केवल अभी ऊपर-ऊपर देखा है, भीतर तो कुछ देखा ही नहीं। आपकी लड़ाई पुरुषों से हो गई, ऊपर-ऊपर देख कर के हो गई, भीतर भी तो देखो! जो भीतर पुरुषों के घटित हो सकता है वह क्या स्त्रियों के भीतर घटित हो सकता है? क्योंकि मुक्ति तो भीतर से होगी बाहर से नहीं होगी। लेकिन बाहर भी एक कारण बनता है। बाहर जैसा कारण होता है वैसा ही कार्य भीतर भी घटित होता है।

आचार्य कहते हैं- एक तो निरावरण व्यवस्था स्त्रियों की बनती नहीं और सावरण मुक्ति होती नहीं। अगर निरावरण पुरुष भी नहीं है, मान लो वे छुल्लक-ऐलक हैं, निरावरण नहीं है, तो उनकी भी मुक्ति नहीं है। मुक्ति के लिए निरावरण होना आवश्यक है और निरावरण होकर के स्त्रियों को कहीं पर भी रखा नहीं जा सकता है। यह व्यवस्था बनी हुई है। कभी भी तीर्थंकरों ने स्त्रियों को निरावरण होकर के चर्या का पालन करना देखा ही नहीं। इसलिए उन्होंने कहा ही नहीं और ऐसा हो सकता नहीं क्योंकि समाज उसको स्वीकार कर ही नहीं सकता। क्या समझ में आ रहा है? आप देख लो! समाज स्त्रियों को निरावरण रूप में स्वीकार नहीं कर सकता। पुरुषों को निरावरण रूप में स्वीकार कर सकता है। इसलिए सहजता में यह स्वीकारता चली आ रही है। इसलिए मुनि धर्म सहजता में चला आ रहा है और मुनि धर्म के साथ में यह निरावरणता का कोई भी बन्धन मुनियों के ऊपर नहीं रहा है और कभी आया है, तो वह हट गया है, टूट गया है इसमें कोई बाधा नहीं आई। लेकिन कभी

सावरण लिंग	निरावरण लिंग
आवरण से सहित है।	आवरण से रहित है।
मुक्ति न होने का कारण	मुक्ति होने का कारण
स्त्री लिंग, पुल्लिंग	जिनलिंग
छुल्लक, ऐलक, आर्यिका	मुनि महाराज

किसी ने पुरुषार्थ इस तरीके का या कोई आंदोलन इस तरीके का नहीं किया और न हो सकता है और न कोई समाज मान सकती है।

स्त्रियाँ कभी भी सप्तम गुणस्थान को छू नहीं सकती

स्त्रियाँ भी मान लो इकट्ठी होकर के आंदोलन करने लग जाए कि मैं भी निरावरण रहूँगी और मुक्ति को प्राप्त करूँगी। यह कहीं पर भी स्त्रियों के अन्दर इतनी हिम्मत! अब फिर हिम्मत को challenge देंगे तो कहीं उन्होंने कोई अपना group बना लिया तो, आ भी जाए तो समाज इस बात को स्वीकार कर ही नहीं सकती। अब वे कहे समाज न स्वीकार करे तो भी आप अपने मन की करोगे तो भी आपको उससे कुछ होने जाने वाला नहीं है। क्यों नहीं होने जाने वाला? क्योंकि यहाँ लिखा है कि स्त्रियों में प्रमाद की बहुलता रहती है। प्रमाद की मैं दो तरीके से व्याख्या कर रहा हूँ। एक तो प्रमाद मतलब वह प्रमाद भाव! जिसके माध्यम से हम अप्रमत्तता को प्राप्त नहीं कर पाते हैं मतलब यह कह सकते हैं कि स्त्रियाँ कभी भी सातवें गुणस्थान के अप्रमत्त भाव को छू नहीं सकती हैं। अब आप इसमें कितना भी पुरुषार्थ कर लो जो नहीं हो सकता वह नहीं हो सकता।

स्त्री और पुरुष में प्रकृति और स्वभाव से भेद है

SCAN TO WATCH

यह बात ऐसी ही है कि जैसे मान लो हम कहे दूध है। समझ आ रहा है? दूध है! एक गाय का दूध है, एक आक का दूध है (कौऐ के दूध को आक का दूध बोलते हैं) दूध देखने में दोनों है। दूध, दूध है। अब आप कहो इस दूध को तो आप पीते हो, इस दूध को आप फेंकते हो, पीते नहीं हो। इससे तो बचते हो। क्यों बचते हो? गाय का दूध आपके लिए पीने योग्य है और कौवे का दूध अगर पी लोगे तो मर जाओगे। वह जहर है। दूध तो दोनों हैं। दूध-दूध दोनों होते हुए भी उसके लिए ऐसा भेदभाव क्यों? एक को पी रहे हो, एक को छोड़ रहे हो। 'प्रकृति' इसको क्या बोलते हैं? स्वभाव, इसी को बोलते हैं- nature. अब यह nature किसी ने बनाया नहीं। उसका वैसा ही स्वभाव है इसीलिए हमें accept करना पड़ेगा। दुनिया में हर चीज अपनी प्रकृति के अनुसार ही चल रही है। प्रकृति का मतलब ही यह है, दुनिया की हर चीज अपने स्वभाव से निष्ठ है। आप यह कहो कि इस दूध को क्यों नहीं पी रहे हो तो पी लो। पौष्टिकता नहीं बनेगी, जहर फैल जाएगा, मर

जाओगे। जबकि दोनों सफेद हैं, दोनों ही दूध कहलाते हैं तो दोनों के साथ भेदभाव क्यों? यह भेदभाव नहीं है, यह प्रकृति है, यह स्वभाव है। जिससे जो होना है, उससे ही होना है। गाय के दूध से बकरी के दूध से पौष्टिकता मिल जाएगी लेकिन कौए का दूध पियोगे तो मरोगे।

प्रत्येक वस्तु का स्वभाव भिन्न है

हर चीज भिन्न-भिन्न स्वभाव वाली है कि नहीं क्या जगत में? जगत में कौन सी चीज एक स्वभाव वाली है? बताओ! अगर दो चीजों का shape अलग-अलग है, तो दोनों चीजों की भीतरी गुणवत्ता, भीतरी स्वभाव भी अलग-अलग ही होगा। मान लो 10 तरीके की दालें हैं- एक मूंग की दाल है, एक अरहर की दाल है, एक क्या बोलते हो आप यहाँ? मसूर की दाल को क्या बोलते हो? कुछ नया नाम बोलते हो- मलका। एक नया नाम सुनने को मिला हम लोग उधर मसूर की दाल बोलते हैं। ये बोलते हैं- मलका। मलका की दाल है, उसका nature अपना अलग है। अरहर की दाल है उसका nature अलग है, मूंग की दाल है, उसका nature अलग है, उड़द की दाल है उसका nature अलग है। अब आप कहो सब दालें एक जैसी हैं, सब दालें एक जैसी तो हैं लेकिन दाल कहने से एक जैसी है। सबकी quality अलग-अलग है, सब का nature अलग-अलग है। अगर किसी को जुखाम हो रहा है, cough का रोग हो रहा है या वात का रोग हो रहा है और आप उसको उड़द की दाल खिला दोगे तो और बढ़ जायेगा। क्योंकि उड़द की दाल cough कारक होती है, वात कारक होती है। अब एक तो मूंग की दाल खा रहा है तो वह कहे कि भाई मूंग की दाल खाओ और कहीं एक व्यक्ति कहता है कि नहीं मुझे उड़द की दाल खाना है तो भाई उड़द की दाल खाना है। आप अपनी पहले प्रकृति देखो, अपना स्वभाव देखो, अपने पचाने की क्षमता देखो तब उड़द की दाल खाना। अगर आपकी क्षमता नहीं है तो मूंग की दाल खाओ। सब दाल एक सी हैं तो क्या फर्क पड़ रहा है, तो खा लो। दुनिया में हर चीज का स्वभाव अलग-अलग है, हर जगह का पानी अलग-अलग है, हर जगह की जलवायु अलग-अलग हैं। जहाँ जैसी प्रकृति होती है वहाँ पर उसी प्रकृति के अनुसार हमें चलना होता है। प्रकृति इसी का नाम है।

स्त्री कभी पाँचवे गुण स्थान से आगे नहीं बढ़ सकती

प्रकृति मतलब स्वभाव, nature तो स्त्री की प्रकृति क्या है? भीतरी उसकी आत्मा में कभी भी इतना निष्कषाय भाव नहीं आ सकता कि वह सातवें गुण स्थान को प्राप्त कर ले,

अप्रमत्त गुण स्थान को प्राप्त कर ले, यह हो ही नहीं सकता, यह उसकी प्रकृति है। वह कितना ही भीतर से alert रहने की कोशिश करे, कितना ही निष्प्रमाद होने की कोशिश करे लेकिन वह कभी भी पाँचवे गुणस्थान से ऊपर का गुण स्थान नहीं छू सकती, छठवाँ गुण स्थान भी प्राप्त नहीं कर सकती, यह तो भीतरी व्यवस्था हो गई।

स्त्री को मद मय होने से आचार्य ने उसे प्रमदा कहा है

दूसरी बात- प्रमदा का मतलब होता है- जो मद से भरी हुई हो। यह मैं इसकी व्याख्या शब्द शास्त्र के अनुसार कर रहा हूँ। स्त्री के शरीर को देख कर के आप को मद उत्पन्न होगा और उसको भी मद रहता है। अब यह psychological।y हम आपको बता रहे हैं। यह psychology का भी science होता है कि नहीं होता है? स्त्री के अन्दर अपने शरीर को लेकर के मद रहता है। मद का क्या मतलब होता है? एक अलग ही तरह का उसके अन्दर feeling आती है। वह feeling आपके लिए नहीं आएगी और उस मद के कारण से वह हमेशा उसकी कोई भी activity होगी चलने की, उठने की, देखने की हर चीज उसके लिए एक मद के साथ होगी। उसके देखने में भी मद होगा, उसके चलने में भी मद होगा, उसे खुद भी feel होगा और जो देखेगा गौर से उसके अन्दर भी मद चढ़ने लग जाएगा। सुन रहे हो? समझने की कोशिश करो! वह अपने आप में एक नशा है और अच्छी भाषा में बोलने की कोशिश करूँ तो बुरा नहीं मानना आप। जब आचार्य ने लिखा ही है तो हमें तो बोलना ही है। वह अपने आप में एक नशा है और ऐसा नशा है कि अगर उस नशे में आप interest लोगे तो आपको नशा आने लगेगा। एक नशा वह होता है बोतल का, जिसे पीने के बाद आता है और उसे केवल देखने के बाद नशा चढ़ता है। इसलिए आचार्य ने कहा कि आप अपनी वृत्तियों को संभालो। अगर आप उसको गौर से देखोगे, उसको गौर से सुनोगे, उसकी चाल-ढाल को भी गौर से देखोगे, उसके ऊपर दृष्टि ज्यादा लगाओगे तो आपके ऊपर नशा चढ़ेगा क्योंकि उसका नाम है- प्रमदा, वह एक ऐसा नशा है। लोग समझे इस चीज को, ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले लोग इस चीज को समझते हैं। इसलिए जो चीज उस प्रकृति की बनी हुई है, उसमें वह मद भरा हुआ है। उसमें वह नशा भरा हुआ है, वह उसमें चीज आ ही नहीं सकती है। अब आप कहो इसी के उदाहरण के लिए हम पी रहे हैं, पीने की कोई भी चीज है, drink कर रहे हैं। water की भी drinking होती है, milk की भी drinking होती है और wine की भी drinking

होती है। सब चीजें पीने वाली ही है लेकिन सबका परिणाम अलग-अलग है। पानी पीना एक अलग सात्विकता का प्रतीक है और कोई कहे जैसा पानी वैसा शराब तो अगर आपके लिए पानी और शराब एक हो गई, वह आपके लिए तो हो सकती है, आप जबरदस्ती कर सकते हो लेकिन वस्तुतः वह एक नहीं हो सकती है। जो पानी से आपको स्वस्थता मिलेगी, वह आपको शराब से तो नहीं मिल सकती। उससे तो आपको मद ही चढ़ेगा तो जैसे पानी और शराब एक नहीं हो सकते वैसे ही कभी पुरुष और स्त्री एक नहीं हो सकते। स्त्री में मद कारक शक्ति पड़ी हुई है, यह यहाँ आचार्य कह रहे हैं। यह उसका स्वभाव है वह प्रमाद से बनी हुई है और हर चीज में में प्रमाद कर जाती है, प्रमाद बहुला है। आलस का मतलब होता है- मद भरा रहना। मद का मतलब होता है कि जैसे कोई आदमी पी लेता है, अब उसकी तुलना उससे करो। जैसे कोई आदमी पी लेता है, तो पीने के बाद में जैसे उसका चलना-फिरना फिर उसका अलग style में हो जाता है, ऐसे ही स्त्री के साथ होता है। बिना पिये भी उसका ऐसा स्वभाव है। बुरा नहीं मानना! सीखने की कोशिश करो, स्वीकार करने की कोशिश करो। उनकी body का structure ही इसी प्रकार का है कि उसके कारण से उनके अन्दर मद आएगा। वह मद वहाँ झलकेगा उनकी चाल से, ढाल से, हाव से, भाव से, विलास से। इसी में तो यह दुनिया डूबी हुई है। एक तो वह वैसे ही मद कारक है और दूसरा आदमी कोई मद कारक चीज और पी ले फिर तो पूछना ही क्या। बोलते हैं न? एक तो वह वैसे ही मद कारक है, स्त्री स्वभाव से ही मद कारक है और अगर आदमी उस मद को ओर बढ़ाना चाहता है, तो क्या कर लेता है? पहले पी लेता है, फिर उसको देखता है। फिर उसको और ज्यादा मद कारक दिखाई देती है। यह बात बताती है कि उस आदमी के अन्दर उस मद को प्राप्त करने की इच्छा है। वह उस मद से attract होता है, आकर्षित होता है। इसलिए वह अपने संसार को बढ़ाता चला जाता हैं और वह उसी attraction के कारण से पुनः पुनः जन्म और मरण की प्राप्ति करता रहता है। यह metaphysics कहलाती है।

प्रत्येक चीज का स्वभाव से भिन्न है, जो कभी एकमेक नहीं हो सकते

जीवन में अगर हमें यह चीज समझ में आने लगे कि हर किसी का nature अलग-अलग है तो आपके लिए question arise होंगे ही नहीं और जो दो चीजें भिन्न-भिन्न स्वभाव की हैं, उन्हें हम कितना भी एकमेक करने की कोशिश करें वह नहीं हो सकते हैं। इससे तो कोई प्रयोजन है ही नहीं कि कोई स्त्री कहे मैं पुरुषों के बराबर हूँ तो पुरुषों के बराबर

हो किस sense में? मान लो पुरुष MBBS कर रहा है, आपने भी MBBS कर ली तो यह knowledge का sense हो गया। चलो ठीक है! knowledge आपकी पुरुष के बराबर हो सकती है। हो सकता है पुरुष के पास में इतनी हिम्मत आ गई कि वह हिमालय की चोटी पर चढ़ गया। कोई स्त्री भी हिमालय की चोटी पर चढ़ गई। चलो ठीक है! शरीर में बल किसी का अधिक हो सकता है। किसी की power अधिक हो सकती है, किसी की wil।power ज्यादा हो सकती है। ऐसा हो सकता है, उसमें कोई दिक्कत नहीं। इतना होने से क्या सब चीजें बराबर हो गई? स्त्री मान लो चलो राजनीति में चली गई, पुरुष भी राजनीति में जाता है। स्त्री भी राजनीति में चली गई तो स्त्री पुरुष के बराबर हो गई। राजनीति में जाकर भी स्त्री, स्त्री ही रहेगी या पुरुष हो गयी? क्या समझ आ रहा है? स्त्री का क्या अपना स्वभाव छूट गया कहीं पर भी?

योग्यता स्वरूप जो हो सकता है वही होता है उससे अधिक नहीं

किसी भी क्षेत्र में अगर स्त्री आगे बढ़ रही है तो वह आगे अपनी ज्ञान की योग्यता से, अपनी शक्ति की योग्यता से बढ़ रही है तो उसके लिए तो कोई मनाही है ही नहीं है। जो चीज जितनी योग्यता के बाद में नहीं हो सकती उसकी मनाही है और वह मनाही भी इसलिए नहीं है कि आपके लिये मना कर दिया गया है इसलिए नहीं हो सकता है। उसके आगे आप बढ़ ही नहीं सकते क्योंकि इतनी योग्यता आपके अन्दर नहीं है। एक balloon होता है, ऊपर उड़ता है, धुआँ होता है वह भी ऊपर उड़ता है और एक p।ane होता है, वह भी ऊपर उड़ता है। अब balloon कहने लगे कि मैं p।ane की तरह इतना ऊपर क्यों नहीं उड़ सकता जितना p।ane ऊपर उड़ सकता है और p।ane भी कहे कि जो अंतरिक्ष में जाने वाले जो p।ane हैं, जो shuttle अंतरिक्ष में जाते हैं, मैं उतना क्यों नहीं जा सकता हूँ भाई? उसकी quality अलग है, जो अंतरिक्ष में जाने वाली shuttle है उसकी quality अलग है, जो अंतरिक्ष के अन्दर रहने वाला p।ane है, उसकी quality अलग है। जो ऊपर आकाश की छत तक जाने वाला जो गुब्बारा है, उसकी quality अलग है और जो अपनी छत के ऊपर पहुँचने वाला धुँआ है उसकी quality अलग है। हर किसी के ऊपर उठने की quality अलग-अलग है। कौन सी चीज ऐसी है जो बिल्कुल एक ही nature की होती है। अगर किसी का बाहरी physical nature अलग-अलग है तो उसकी भीतर की chemistry भी अलग-अलग है। इसी का नाम है- metaphysics

अलग-अलग है। यह समझने की कोशिश करें आज की लड़कियाँ, आज की स्त्रियाँ, जो यह बराबर की बात करके अपने मन में ऐसा भाव ले आती हैं। जो दूसरे स्कूल, कॉलेजों में दूसरे लोगों को सुन लेती हैं कि स्त्री और पुरुष में भेद करने वाले धर्म को हम नहीं मानते, बीच में भेद करने वाले धर्म को हम नहीं मानते तो समझने की कोशिश तो करो कि धर्म में भेद नहीं है, भेद हमारी योग्यता के कारण से है। आपको जितना बढ़ना है उतना आपको मना किया ही नहीं है।

स्त्री-पुरुष की मर्यादा अलग होने की अपेक्षा से दोनों कभी बराबर नहीं हो सकते

अब हम आपसे पूछते हैं- दुनिया में ऐसी कौन सी जगह है, जहाँ पर स्त्री और पुरुष बराबर होते हैं? चलो! हम आपके लिए ही एक question पूछते हैं। जो आज बहुत modern हो रही हैं स्त्रियाँ, उनसे पूछ रहे हैं कि दुनिया में ऐसी कौन सी जगह है, जिस धर्म में स्त्री और पुरुष को बराबर माना गया है? jainism पर ही क्यों हमला किया जाता है? बताओ! हिंदू में स्त्री और पुरुष एक ही हैं क्या? चलो! हम आपसे पूछ रहे हैं। अखाड़े के बाबा होते हैं, उज्जैन में कुंभ लगते हैं, वहाँ पर जैसे नागा बाबा होते हैं वैसे नागा स्त्रियाँ भी होती है क्या? चलो हम आपसे पूछ रहे हैं- बोलो तो! jainism पर ही क्यों हमला किया जाता है इन बातों को ले कर? कहाँ है यह संस्कृति? हमें यह तो बताओ। क्या हिंदुओं के यहाँ भी जो हिमालय में बाबा रहते है, वहाँ पर वह साधना करते हैं, ऐसी कोई जगह है जहाँ पर स्त्रियाँ हिमालय में रह करके साधना करती हो। बताओ! बताओ! कहीं आपने देखा वह हमने न देखा हो तो फिर यह हमला जैन संस्कृति को ले करके क्यों किया जाता है? कौन सी जगह है? क्या इस्लाम में भी यह सहूलियत है? बताओ! कहाँ है? बताओ! christian में है, कौन से धर्म में है? किसी भी धर्म में स्त्रियों को पुरुष के बराबर दर्जा कहाँ दिया गया है? हमें यह बताओ। जिसको जिस मर्यादा में रहना है, उसको उस मर्यादा में रहना है। अगर आप स्त्री और पुरुष की मर्यादाओं को भी आपस में लांघ दोगे तो वह भी असभ्यता कहलाएगी, सभ्यता नहीं कहलाएगी और वह असभ्यता कहीं एक जगह किसी कौने में किसी एक स्थान पर हो सकती है, सामूहिक नहीं हो सकती। किसी जगह पर आप कहीं पर भी किसी भी तरीके से पुरुषों की तरह नग्न रह सकती हो तो इसका मतलब यह नहीं हो गया कि वह विदेह हो गया, उसको समाज ने स्वीकार कर लिया। समझ आ रहा है? वह एक असभ्यता है। आज की बेटियों के द्वारा उस असभ्यता को सभ्यता बनाने की कोशिश की जा रही है। समझ आ रहा है? जैसे पुरुष आधे वस्त्रों में रहकर के अपने काम करता रहता है, घर में

डोलता रहता है वैसे ही क्या स्त्रियाँ रह सकती हैं। अगर रह ले तो आप क्या समझोगे कि बहुत अच्छी पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ हैं, इसे हम सभ्यता कहेंगे या असभ्यता कहेंगे? दुनिया में कोई भी संस्कृति हो, western cu।ture में भी इतनी असभ्यता नहीं आई है अभी जिस असभ्यता की बातें हमारे यहाँ की बेटियाँ करने लगी हैं। US और UK में भी जितनी खुली संस्कृति western cu।ture कहलाती है, वहाँ पर भी खुलापन है लेकिन इतना नहीं है कि हर कोई यह समझने लगे कि जैसे पुरुष वस्त्र पहने हुए हैं, वैसे ही स्त्री पहन कर चले। इतनी असभ्यता अभी दुनिया में कहीं पर भी स्वीकार नहीं की गई है। चाहे कोई कितनी भी पढ़ी-लिखी समाज हो। अतः बराबरी किस sense में? क्या चाहते हो आप बराबर होने के नाते? अगर आप मुनियों की तरह नग्न हो करके मोक्ष जाना चाहते हो तो आचार्य कहते हैं- आप वह कर नहीं सकते हो। क्यों नहीं कर सकते हो? क्योंकि आपका स्वभाव ही ऐसा है, प्रमाद आपके भीतर है और उस स्वभाव के कारण से क्या-क्या होगा? वह आगे बताया जाने वाला है।

प्रवचनसार गाथा नंबर - 246

संति धुवं पमदाणं मोहपमादा भयो जुगुंच्छा य।
चित्ते चित्ता माया तम्हा तासिं ण णिव्वाण॥२४६॥

है मोह भीति मन में, वचनों, तनों में, माया विचित्र पलती, प्रमदाजनों में ।
कुत्सा जिन्हें नियम से कब छोड़ पाती, निर्वाण-धाम तक ये नहि दौड़ पाती।

अन्वयार्थ- (पमदाणं) प्रमदा स्त्रियों को (मोहपमादा) मोह प्रमाद (भयो) भय (य) और (जुगुंच्छा) निंदा (धुवं) निश्चित ही (संति) रहते हैं । तथा (चित्ते) उनके मन में (चित्ता माया) विचित्र प्रकार की मायाचारी होती है (तम्हा) इसलिये (तासिं) उन स्त्रियों का (णिव्वाणं) निर्वाण (न) नहीं है ।

स्त्रियाँ स्वभाव से, मोह के कारण, कभी निर्भीक नहीं हो सकती

क्या कह रहे हैं? **'संति' अर्थात्** 'होते हैं' **'धुवं' मतलब** 'निश्चित रूप से जान लेना। यह ऊपर-ऊपर की बातें नहीं हैं। यह भीतर, निश्चित, definitely यह चीजें होती हैं। **'पमदाणं'** प्रमदाओं के अन्दर। क्या होता है? मोह! मोह नाम का प्रमाद। **'मोहपमादा'** मोह की बहुलता रहती है। बहुत जल्दी मोहित होना और मोहित करना, यह उनका स्वभाव होता है। भय, भयभीत होना यह उनके स्वभाव में पड़ा रहता है। कितनी भी वह हिमालय की चोटी पर पहुँच जाएँ लेकिन उसमें पुरुष की तरह निर्भीकता आ नहीं सकती। चाहे वह पुलिस इंस्पेक्टर बन जाए, चाहे वह कितनी बड़ी किरण बेदी की तरह, चाहे वह जेल की इंस्पेक्टर बन जाए, कुछ भी हो जाए लेकिन जो भय उसको अपने शरीर से बना रहता है, वह स्त्री स्वभाव के नाते बना ही रहेगा। इसलिए आचार्य कहते हैं- यह मोह का प्रमाद और यह भय, यह **'जुगुंचछा' जुगुचंछा** का मतलब होता है- एक घृणा की भावना। **'जुगुचंछा' मतलब** क्या होता है? जुगुप्सा। जिसे बोलते हैं- एक घृणा की भावना। मतलब उसे दूसरों से भी घृणा उत्पन्न होती है और वह बहुत जल्दी घृणा का व्यवहार करने लग जाती है। उसके अन्दर जुगुप्सा छिपी हुई रहती है। यह भी उसके अन्दर रहता है।

स्त्री के चित्त में मायाचारी की बहुलता रहती है

'चित्ते चित्ता माया' और उसके चित्त में, 'चित्त' मतलब विचित्र प्रकार की मायाचारी छुपी रहती है। वह कुछ भी छल-कपट के भाव से कुछ भी अपनी मन-वचन-काया की क्रिया कर सकती है। आप समझ ही नहीं सकते हो, उसका स्वभाव है। अब इस बात को हम अच्छे ढंग से स्वीकार कर ले, positive way में तो हमारा क्या बिगड़ जाएगा। मायाचार का स्वभाव उनके अन्दर है, विचित्र प्रकार की माया है और वह माया किसी भी activity हो सकती है। वे कुछ देख रही होती हैं, कुछ सोच रही होती हैं, कुछ कर रही होती हैं ऐसा उनका nature होता है। आपके सामने बैठेंगी, आपको देखेंगी और ध्यान किसी और का करेंगी। आप उनकी विचित्रता को पकड़ नहीं सकते हो। जरूरी नहीं जो उनके सामने हो रहा है वह बिल्कुल सही हो और आप सोचोगे कि यह हमारे लिए हो रहा है। वह तुम्हारे लिए नहीं हो रहा है वह उनके स्वभाव में पड़ा हुआ है। ऐसी विचित्र प्रकार की माया का भाव स्त्री के अन्दर रहता है।

माया भाव के कारण स्त्री में इतनी निर्विकल्पता आ ही नहीं सकती कि शुक्ल ध्यान लग सके

'तम्हा तासिं ण णिव्वाणं' इतनी भाव शुद्धि, चित्त शुद्धि उनकी नहीं हो पाती कि उनके लिए शुक्ल ध्यान लग पाए और वह निर्वाण की प्राप्ति कर पाए। step हैं! एक धर्म ध्यान है, एक शुक्ल ध्यान है और शुक्ल ध्यान के बाद में निर्वाण है, तो आचार्यों ने कहा कि आप धर्म-ध्यान कर सकते हो, धर्म-ध्यान करने तक की योग्यता है, शुक्ल ध्यान की योग्यता आप में नहीं है। यह बताया गया। क्या समझ आ रहा है? ऐसा नहीं है कि धर्म के लायक ही नहीं हो, धर्म-ध्यान के लायक हो, शुक्ल ध्यान के लायक नहीं हो और शुक्ल ध्यान के फल से निर्वाण की प्राप्ति होती है। इसलिए शुक्ल ध्यान नहीं हो सकता इसलिए निर्वाण नहीं हो सकता तो वह अगला step है। उस step तक पहुँचने के लिए इतनी शुद्धि होनी चाहिए कि हम मोह का भीतर से नाश कर पाएँ। वह कर नहीं सकती। मोह आ ही जाता है। किस पर आएगा? दूसरे पर न आए तो मोह अपने ही शरीर पर आ जाता है। अगर स्त्री कहीं एकांत में भी कहीं बैठ जाए और वह तपस्या भी कर रही हो और अगर कहीं तेज हवा चलने लगे और उसके वस्त्र से अगर वह हवा ही छू जाए

तो उसको डर लग जाता है कि यह हवा है या कोई और है। छिपकली की बात तो अलग है, छिपकली से तो सभी को डर लग सकता है, वह अलग matter हो गया लेकिन जैसे मान लो कोई स्त्री एकांत में कहीं साधना कर रही हो। हम यह कल्पना करे एकांत में नग्न होकर के बैठी है। साधना कर रही है। अगर वह स्त्री एकांत में भी ऐसे बैठी होगी तो भी उसके चित्त में मोह की कमी नहीं हो सकती है। उसके अन्दर एक भय पड़ा रहता है। वह अपने शरीर से बिल्कुल निरापेक्ष नहीं हो सकती है और उसके लिए लगा रहता है कि कोई न कोई कहीं आ न जाए, कोई हमें देख न ले और कोई किसी भी तरीके से हमारे शरीर को छू न ले। इतनी निर्विकल्पता उसके अन्दर कभी आ ही नहीं सकती है, जो पुरुष के अन्दर आ सकती है। इसलिए मैं उदाहरण दे रहा हूँ कि तेज हवा भी चलेगी तो वह डर जाएगी क्योंकि उसको लगेगा कि कहीं यह और कोई हमारे ऊपर उपद्रव नहीं कर रहा है। उसका ध्यान लग ही नहीं सकता है।

प्रमदाओं(स्त्रियों) के अन्दर क्या होता है?

- मोह नाम का प्रमाद।
- भयभीत होना
- भय उसको अपने शरीर से बना रहता है।
- उसके अन्दर जुगुप्सा (एक घृणा की भावना) छिपी हुई रहती है।
- उसके चित्त में, विचित्र प्रकार की मायाचारी छुपी रहती है।

हर 'क्यों' का उत्तर, वस्तु का स्वभाव है

यह स्वभाव है! अब यह क्यों है? क्यों का क्या मतलब होता है? फिर तो वही बात हो गई कि उड़द की दाल कफ कारक क्यों है? मूंग की दाल पाचक क्यों है? अरहर की दाल पीली क्यों है? अब क्यों आपको हर जगह लगाना है तो लगाओ और कौवा का दूध फाड़ने वाला क्यों है? गाय का दूध पौष्टिक क्यों है? आप लगाओ हर जगह 'क्यों है' अब आप बता दो हमें हर क्यों का आपके पास उत्तर अगर आता हो तो इस क्यों का भी उतर दे दूँ मैं और उस क्यों का जो उत्तर होगा वह इस क्यों का उत्तर हो जाएगा। समझ आ रहा है? यह सिखाओ! आज की बेटियों को यह lecture सुनाओ कि यह क्यों है? यह स्वभाव से है। इसी को बोलते हैं- nature. आपका nature ही ऐसा बना हुआ है और वह क्यों बना है? शरीर औदारिक होते हुए भी, पर्याय मनुष्य की होते हुए भी शरीर में जो चीजें हैं, वह अलग-अलग हैं। पुरुष के शरीर की चीजें अलग-अलग हैं, स्त्री के शरीर की चीजें अलग अलग हैं। आप देख लो! एक बच्चा बड़ा होता है लड़के के रूप में तो उसके बाल कितने बढ़ते है और वही एक बेटी के रूप में बड़ा हो जाता है तो उसके बाल कितने बढ़ जाते हैं। अब वह बेटा question करने लगे ऐसा क्यों है? मैं भी 5 साल का हुआ, यह दूसरी बेटी है यह भी 5 साल की है। इसके

बाल इतने बड़े हो गए और इसके बाल इतने छोटे हो गए। आप कहोगे कटवा दिए आप नहीं भी कटवाआओगे तो भी उसके बाल इतने बड़े नहीं होंगे। उसके बाल अपने आप क्यों बढ़ते हैं? क्यों हैं? बताओ! अच्छा उसके शरीर की प्रकृति है। आप जन्म से भी बाल उतने बना करके रखोगे तो भी इतने बड़े-बड़े नहीं हो सकते हैं जो उसके बड़े-बड़े हो सकते हैं। फिर कहोगे स्त्री पूछने लगे मेरे बाल ही क्यों बढ़ते हैं? दाढ़ी-मूँछ क्यों नहीं आती है? करो question? किससे करना है? अब यह question किससे करोगे? बताओ! मम्मी से, पापा से, कि भगवान से, किससे करना है? क्या है इस क्यों का उत्तर? बताओ! यह ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें हम केवल इसी रूप में समझ सकते हैं कि हर चीज का अपना-अपना nature अलग होता है। हर चीज जिसका nature अलग है, उसका स्वभाव अपना अलग है। हमारी physics अलग है, आपकी physics अलग है और जब physics अलग है तो भीतर की chemistry तो अलग होगी ही। सब चीज अलग हो जाती है, तो वही chemistry यहाँ दिखाई जा रही है। यह chemistry कहलाती है- मोह की बहुलता, चित्त में मतलब मन में, चित्त में बहुत विचित्र प्रकार की मायाचारी का भाव, भय बना रहना, जुगुप्सा बना रहना, मतलब स्त्री को अपने शरीर से भी कई बार घृणा के भाव पैदा हो जाते हैं और इस भाव को वह छोड़ नहीं पाती है।

अपने स्वभाव के कारण स्त्री पुरुष कभी समान नहीं हो सकते

SCAN TO WATCH

आप यह देखो भीतरी बातें हैं, जो यहाँ कही जा रही हैं। इसलिए इन चीजों को समझ कर के हमें यह समझ लेना चाहिए कि स्त्री का स्वभाव अलग है और पुरुष का स्वभाव अलग है और स्त्री और पुरुष अगर बराबर हैं तो किस sense में? आप भी MBBS कर लो, वह भी MBBS कर ले, knowledge अलग चीज है। अपनी किसी भी wil। power का use करना अलग चीज है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि everything is equal. पुरुष के अन्दर कभी गर्भधारण नहीं हो सकता है, गर्भधारण तो स्त्री के अन्दर ही होगा। आप कुछ भी दूसरा science का उदाहरण दो तो वह भी कोई भी अभी vaild नहीं है। अगर कहीं कोई किसी जगह कोई article आ गया या पेपर में कोई खबर आ गई हो तो वह सब बेकार की बातें हैं। वह कोई vaild चीजें नहीं हैं। ऐसा होता ही नहीं, वह nature ही नहीं है। किसी के साथ जबरदस्ती की जाए तो उसके दुष्परिणाम भी सामने आते हैं। कुछ लोग जबरदस्ती भी करते हैं, उसके भी कारण दूसरे हैं।

उसकी भी physics दूसरी है। उसकी भी science मैं जानता हूँ फिर कभी बताऊँगा, वह चीज अलग है। इसलिए आप यह समझने की कोशिश करें कि स्त्री और पुरुष यह दोनों में बराबर-बराबर करने का जो भाव आज की बेटियों में पैदा हो रहा है, उन्हें समझाएँ कि बेटी! हम बराबर-बराबर किस sense में हो सकते हैं? तुम पढ़ लो, लिख लो आगे कोई भी job कर लो या कोई भी अच्छे profession में लग जाओ, इसका नाम बराबर-बराबर नहीं है। बराबर-बराबर का मतलब होता है कि हम पुरुष के बराबर योग्यता धारण करने वाले हो। वह योग्यता कभी भी आपके अन्दर इतनी नहीं आ सकती कि आप भी शुक्ल ध्यान कर लो, आप भी दिगम्बर बन करके मोक्ष की साधना कर लो, ऐसा नहीं हो सकता। आपको तो आवरण में रह करके ही धर्म-ध्यान करना होगा। इतनी अगर आपको भेद भिन्नता स्वीकार नहीं है फिर आपके लिए हम समझेंगे कि आपको मतलब जैन धर्म की बात तो अलग है, nature की भी कोई knowledge नहीं है। मतलब दुनिया में जो चीजें हो रही हैं उसकी भी कोई knowledge नहीं है, यह हम समझेंगे। इसको भी देखो आचार्य महाराज ने कैसे लिखा है--

है मोह भीति मन मे ,वचनों, तनो में, माया विचित्र पलती, प्रमदाजनों में।
कुत्सा जिन्हें नियम से कब छोड़ पाती, निर्वाण- धाम तक, ये नहि दौड़ पाती॥

प्रवचनसार गाथा - 247

ण विणा वट्टदि णारी एक्कं वा तेसु जीवलोगम्मि।
ण हि संपुडं च गत्तं तम्हा तासिं तु संवरणं॥२४७॥

एकाध, दोष तक भी नहि टाल पाते, पूर्वोक्त दोष सब ही इनमें दिखाते।
निर्वस्त्र हो विचरना न इन्हें सुहाता, सो योग्य वस्त्र पहने जिनशास्त्र गाता॥

अन्वयार्थ- (तेसु) इन कहे हुए दोषों में (एक्कं वा विणा) एक भी दोष के बिना (णारी) नारी (जीवलोगम्मि) इस जीवलोक में (ण वट्टदि) नहीं रहती है। (च) और (संपुडं गत्तं) इनका शरीर ढका हुआ (ण हि) नहीं होता है (तम्हा) इसलिये (तासिं) स्त्रियों को (तु) तो (संवरण) शरीर ढकना आवश्यक है।

लोक में बिना दोष के कोई स्त्री नहीं है

आचार्य कहते हैं- **'ण विणा वट्टदि णारी एक्कं वा'** एक भी नारी **'जीवलोगम्मि'** अर्थात् इस जीव लोक में ऐसी नहीं है, जो ऊपर कहे हुए दोषों के बिना हो या **'एक्कं वा'** एक भी दोष के बिना कोई नारी इस जीव लोक में हो, ऐसा नहीं है। **'ण हि संपुडं च गत्तं'** और जिसका शरीर **'संपुडं'** नहीं होता है। **'संपुडं'** का मतलब होता है- ढका हुआ होना। **'तम्हा तासिं तु संवरणं'** इसलिए उनके लिए **'संवरणं'** करना आवश्यक है यानी उन्हें अपने शरीर को ढाकना आवश्यक है। ऐसा इस गाथा का भाव है।

एकाध, दोष तक भी नहि टाल पाते, पूर्वोक्त दोष सब ही इनमें दिखाते।
निर्वस्त्र हो विचरना न इन्हें सुहाता, सो योग्य वस्त्र पहने जिनशास्त्र गाता॥

स्त्रियों में कथित दोषों की बहुलता पर्याय जनित है

इसी को 'There is not a single woman in the whole wor।d who is without even one of these above fau।ts, there ।imbs are not closed and hence they need clothing' मतलब यह एक शरीर

का यहाँ पर स्वभाव बताया जा रहा है और स्त्रियों की निर्वृत्ति यानि निर्वाण क्यों नहीं होता, इसका भी एक कारण यहाँ बताया जा रहा है। पिछली कई गाथाओं से स्त्रियों के भीतर होने वाले कुछ विशेष भावों की यहाँ पर चर्चा की गई है। ऊपर गाथा 246 में कहा गया कि उनके अन्दर मोह नाम का प्रमाद बहुत अधिक होता है, भय भाव भी बहुत होता है। जुगुप्सा भी होती है और चित्त में विचित्र माया भी होती है। उसी को यहाँ पर इस रूप में कह रहे हैं कि कोई भी स्त्री इस जीव लोक में ऐसी नहीं है जिसके अन्दर यह दोष न हो। समझ आ रहा है? कुछ भाव ऐसे हैं जो स्त्री पर्याय के कारण से मिलते ही हैं। इसे हम **भव प्रत्यय** के नाम से जान सकते हैं। भव प्रत्यय का मतलब होता है- भव मतलब संसार ही और जो हमें यह स्त्री का भव मिला है, इन प्रकार के भावों के लिए कारण है। जैसे कोई पक्षी होता है तो उसके पक्षी के भव में उस पक्षी को सिखाना नहीं पड़ता कि वह कैसे उड़े? वह थोड़ी ही देर बाद जन्म लेने के बाद में अपने आप उड़ना सीख जाता है। कोई भी किसी भी जाति का पशु हो, अपनी-अपनी जाति के अनुसार वह अपनी उछलने-कूदने की क्रियाएँ, चलने-फिरने की क्रियाएँ अपने आप करने लग जाता है। यह उसके भव प्रत्यय के कारण से होता है। उसको बताना नहीं पड़ता कि तुम्हारे चार पैर हैं तो तुम्हें ऐसे चलना है और मनुष्य को बताना नहीं पड़ता कि तुम्हारे दो पैर हैं तो तुम्हें ऐसे चलना है। इसको बोलते हैं- भव प्रत्यय। जो जिस प्रकार की पर्याय में पहुँच जाता है, उसी पर्याय के अनुकूल उसके अन्दर भाव अवश्य ही उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए यह कहा जाता है कि यह पर्यायगत एक दशा है।

भव प्रत्यय

पर्याय के अनुकूल भाव उत्पन्न होना भव प्रत्यय कहलाता है।

यह पर्याय गत उत्पन्न होने वाले भाव हैं, जिन भावों को यहाँ कहा गया। वैसे तो सभी में ये भाव होते हैं। मोह से रहित कोई भी पुरुष नहीं होता, मोह से रहित दुनिया का कोई भी व्यक्ति नहीं होता। लेकिन यहाँ पर जो बात प्रमुखता से कही है या अधिकता के कारण से कही है, वह बात यहाँ पर समझने योग्य है। मोह भी सबके पास होता है, भय भी

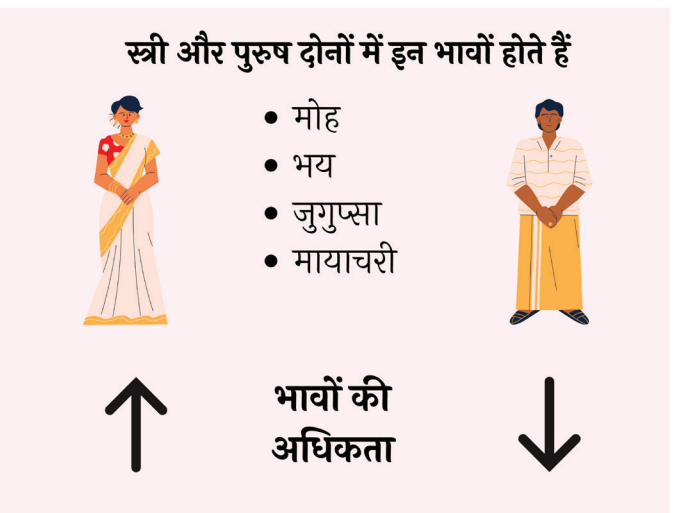

सबके पास होता है। जुगुप्सा का मतलब एक तरीके से घृणा का भाव भी सबके पास होता है और मायाचरी तो पुरुष लोग भी करते है। कम कोई नहीं हैं। लेकिन अगर हम एक percentage नापे या कोई भी हम survey करवाएँ और उसमें ratio देखें कि इन भावों की किसमें कितनी activity ज्यादा है तो यह ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि स्त्रियों में इन भावों की अधिकता रहती है।

स्त्रियों में मोह प्रमाद की बहुलता रहती है

पुरुष एक बार बिना मोह के रह लेगा, स्त्री मोह के बिना नहीं रह नहीं पाती है। कहीं न कहीं मोह भाव उसे उत्पन्न हो ही जाता है। आप देखोगे कि कुछ भी न हो तो उसके लिए मोह भाव कहीं न कहीं उत्पन्न हो जाता है। अगर अपना भी बेटा नहीं हो तो किसी न किसी के बेटे को अपना बनाकर मोह भाव की पूर्ति कर लेती है। उससे मोह भाव के बिना रहा ही नहीं जाता। कुछ ऐसी भी स्त्रियाँ होती हैं, मान लो जिनका कोई बेटा न हो, अपने कोई संतान न हो तो भी उन्हें मोह भाव के बिना नहीं रहा जायेगा। वह किसी न किसी को अपना पुत्र मान ही लेगी। ऐसी एक tendency जो होती है, वह एक तरीके से पुरुष में न भी हो तो चल जाती है लेकिन स्त्रियों में यह चलती नहीं है। कहीं न कहीं उन्हें किसी से मोह के साथ में अपना जीवन निकालने के लिए अपना मन बनाना ही पड़ता है और उन्हें कहीं न कहीं एक सहारे की जरुरत होती है और वह सहारा इसी रुप में उनको चाहिए होता है। चाहे पति के रुप में हो, चाहे पुत्र के रुप में हो, चाहे भाई के रुप में हो। कहीं न कहीं एक सहारे की जरुरत उनको हुआ करती है और वह सब सहारे के पीछे उनका यह मोह भाव रहता है क्योंकि अकेले रहना उनके लिए बड़ा कठिन होता है। यह एक मनोविज्ञान है और इस मनोविज्ञान की बुराइयाँ भी हैं तो अच्छाईयाँ भी हैं। इस मनोविज्ञान को हम एकान्त रुप से बुराई के रुप में ही समझें ऐसा भी जरुरी नहीं है। इन बुराईयों के साथ-साथ इस मनोविज्ञान की कुछ अच्छाइयाँ भी हैं कि वह कभी न कभी किसी न किसी के लिए सहारा बनती भी है और सहारा देती भी है। उसके मोह भाव का एक परिणाम यह भी निकलता है। उसी मोह भाव के कारण से वह दूसरों के लिए कुछ न कुछ करने की भी इच्छा करती है। अगर मान लो उस स्त्री के लिए अपने पति का, पुत्र का या कोई भी अपने परिवार का मोह नहीं होगा तो वह मोह उसका और किसी रुप में आयेगा। वह जन कल्याण के रुप में भी अपने मोह भाव का उपयोग कर सकती है। उस मोह का उपयोग किसी भी तरीके से हो सकता है लेकिन वह मोह प्रमाद की बहुलता रहती है।

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में मोह-भय की प्रवृत्ति अधिक होती है

वह मोह दूसरों से भी हो सकता है और कुछ नहीं तो अपने शरीर से भी बहुत अधिक होता है। क्योंकि सबसे पहले मोह की अगर प्रवृत्ति दिखाई देती है तो वह कहाँ दिखाई देती है? शरीर से दिखाई देती है। दूसरों के ऊपर तो project बाद में होता है, पहले अपने शरीर में होता है। क्योंकि अपना भाव है, अपनी आत्मा का भाव है तो सबसे पहले कहाँ project करेगा? किसको object बनाएगा? वह सबसे पहले अपने शरीर को बनाएगा। यह भी एक अधिकता में देखने में आता है। यहाँ जो भी बातें बताई जा रही हैं वह ऐसा नहीं समझना कि वे 100% होती हैं या जैसे 100 नारियाँ हैं तो 100 में से 100 के साथ ऐसा ही होगा। उसमें भी intensity सबकी अलग-अलग रहती है। कमती-बढ़ती पना सबके कर्म के उदय से अलग-अलग चलता है। बहुलता के अनुसार भी कहा जाता है। अगर मान लो 100 में 80% भी हमें उस चीज की एक जैसी भावनात्मक स्थिति मिल जाती है तो हम कह सकते है कि हाँ! भाई सब ऐसे ही होते हैं। उसी तरीके से यहाँ समझना कि आचार्य कह रहे हैं कि देखो! एक भी नारी इस जीव लोक में ऐसी नहीं है। हाँ! जीव लोक कह दिया! जीव लोक का मतलब मनुष्य में भी समझ लेना, तिर्यंचों में भी समझ लेना और देवों में भी समझ लेना, जहाँ-जहाँ नारियाँ होती है, स्त्रियाँ होती हैं कि जिनके अन्दर यह भाव न पाये जाएँ। हम यह देख सकते हैं कि इस भाव की अधिकता पुरुषों की अपेक्षा से स्त्रियों में अधिक पाई जाती है। यूँ भी कह सकते हैं कि जीवन में इसकी जो बारियाँ आती हैं, बारी मतलब क्रम जैसे अभी आप बैठे है, आपके लिए मान लो कोई मोह नहीं है, कोई भय नही हैं लेकिन जैसे ही दिन भर के schedule आप देखेंगे तो उसमें कितनी बार आपके अन्दर मोहभाव आता है? कितनी बार आपके अन्दर भय उत्पन्न होता है? उसके जो बारियाँ हैं, क्रम हैं उस क्रम को भी अगर हम count करेगे तो वह भी स्त्रियों में बजाय पुरुषों के अधिक पाया जायेगा। भय भी बहुत ज्यादा रहता है। कुछ भी होता है बहुत जल्दी डर जाती हैं। यह भी एक स्वभाव में होता है। पुरुषों की अपेक्षा से भयभीत हो जाना स्त्रियों का एक स्वभाव होता है। कोई भी घटना कुछ भी होती है, कोई भी कहीं पर, व्यापार में भी है कहीं कोई थोड़ा बहुत घाटा-नुकसान होता है या कहीं कुछ व्यक्ति कोई भी आ करके घर पर कुछ कह देता है या किसी के लिए कुछ भी गलत बोल देता है तो स्त्रियाँ बहुत जल्दी डर जाती हैं। पुरुष आ करके समझायेगा नहीं भई! ऐसी कोई बात नहीं है, इतनी जल्दी डरने की कोई बात नहीं है, वह तो ऐसा बोलता रहता है। उसको हम ठीक कर देंगे तुम चिंता मत

करो। इस प्रकार यह एक भय की प्रवृत्ति देखने में आती है। हो सकता है किसी-किसी के घर में पुरुष डर जाता हो, स्त्री उसको समझाती हो कि भाई! तुम इतना मत डरा करो, हम उसको समझा देंगे। कहीं-कहीं स्त्रियाँ भी होती हैं लेकिन फिर भी ratio देखा जाएगा। मान लो हम survey करते हैं। 100 स्त्रियों को बैठा लो तो उसमें 90 ऐसी मिलेंगी जो डर जाएँगी, 10 ऐसी मिलेंगी जो पुरुषों की अपेक्षा से कम डरेंगी। बहुलता से जो चीज सामने आती है, कही वही जाती है। एक यह भी भाव आता है कि जैसे एक चीज कही जाती है, जैसे मान लो कहीं किसी गाँव में आग लग गई, किसी गाँव में आग लग गई तो बहुत बड़ी आग लग गई। कहा गया गाँव जल गया, अखबारों में निकालता है, सब लोग चर्चा में फैला देते हैं। भाई! पूरा गाँव जल गया, पूरा गाँव तहस-नहस हो गया। कहने में तो यह आता है न पूरा गाँव जल गया, पूरा गाँव तहस-नहस हो गया। कुछ भी नहीं बचा लेकिन क्या यह बात भी सत्य होती है कि कुछ भी नहीं बचा? फिर भी वहाँ आदमी बचे होते हैं, घर भी बचे होते हैं, लोग भी अपना जीवन अलग-अलग तरीके से बचा करके जी रहे होते हैं। लेकिन फिर भी यह कहा जाता है कि गाँव पूरा जल गया। एक उसी sense में इस भाषा को समझना चाहिए । जीव लोक में एक भी ऐसी नारी नहीं है, एक भी नही है यहाँ पर, यह कहा जा रहा है। एक भी मतलब यह है कि एक भी नारी में इन भावों का अभाव नहीं पाया जाता है। भावों की कही ज्यादा तीव्रता होगी कही मंदता होगी। ये वे भाव हैं जिन्हें हम समझ सकते हैं। मोह भाव हमेशा बना रहता है। भय भाव भी हमेशा बना रहता है।

स्त्रियों का मनोविज्ञान गहराई से समझने का विषय है

स्त्रियों का यहाँ मनोविज्ञान बताया जा रहा है। उस पर भी स्त्रियों के विषय में बहुत अच्छी मनोविज्ञान की किताब लिखी जा सकती है। प्रशंसा तो होती रहती है लेकिन उस प्रशंसा को हम यहाँ पर एक समीक्षा के रुप में देख सकते हैं। क्योंकि समीक्षा में प्रशंसा ही नही होती है, समीक्षा में हर वह चीज सामने आती है, जो real होती है। इसको हम एक reality कह सकते हैं, समालोचना, समीक्षा जिसके माध्यम से जो जैसा है, उसको उसी रुप में बताना। मुँह पर प्रशंसा करना और उसके दोषों को छुपा देना। बाद में जो है उन दोषों का फिर अलग से कोई दिख जाए तो फिर उसका बखान करना, ऐसा भी नहीं, जो है उसको बताना। यहाँ हम कह सकते हैं- आ्चार्य जो यह ग्रँथ लिख रहे हैं या जिन्होंने इन स्त्रियों की जो समीक्षा की है तो वह स्त्रियों के बहुत अच्छे, एक सही मायने में, अच्छे समालोचक थे और उन्होंने जो एक लिखने की एक भावना से कि यहाँ पर स्त्रियों का स्वरुप बता रहे

हैं, इसलिए बता रहे हैं कि उन्हें निर्वाण क्यों नहीं होता है? यह main ground है। अपने दैनिक जीवन में होने वाले जो काम हैं वे तो सब कुछ हो सकते हैं। अपने दैनिक जीवन में, लौकिक जीवन में होने वाली जो कुछ भी प्रवृत्तियाँ है तो सब कुछ उन्नीस-बीस हो सकती हैं। लेकिन निर्वाण प्राप्ति के लिए जो चीजें चाहिए पड़ती हैं उन चीजों के विषय में यहाँ कहा जा रहा है। जैसे निर्वाण के लिए मोह से रहित होना चाहिए, भय से रहित होना चाहिए क्योंकि जब कोई साधक दिगम्बरत्व अवस्था में या यूँ कहें कि सब प्रकार के आवरणों का, परिग्रहों का त्याग करके बैठ जाए तो भी उसके भीतर यह भाव उसको परेशान करते हैं। उस स्थिति में जब भीतर संहनन होता है, उत्कृष्ट संहनन होता है, तो उसी के अनुसार भाव भी पैदा होते हैं। इस चीज को हमें उस निर्वाण के भाव से भी जोड़ना चाहिए।

स्त्री को निर्वाण नहीं हो सकता क्योंकि उसमें वह योग्यता कदापि नहीं आ सकती

एक तो हमने सामान्य से, मनोविज्ञान के हिसाब से आपको दैनिक जीवन में या लौकिकता में जो भी स्त्रियों का स्वरूप दिखाई देता है, वह बता दिया। अब हम इसको शास्त्र में ऐसा क्यों लिखा गया? इसी के ऊपर emphasis क्यों है? उस बात को समझने के लिए यह निर्वाण की ground में यह सब चीजें लिखी हुई हैं। भूमिका यह है कि जब कोई जीव आत्म ध्यान करने बैठता है तो उसके अन्दर शारीरिक शक्ति भी होना चाहिए। आपके मन की शक्ति, शरीर की शक्ति के साथ जुड़ेगी। अगर आपके शरीर का संहनन कमजोर है तो आपका मन कमजोर होगा, यह बात निश्चित है। शरीर की शक्ति होगी तो मन की शक्ति बनेगी। यह भी बात एक दूसरे से बिल्कुल link up करती है। अगर आपका शरीर कमजोर हो गया, रोगी हो गया, आपके शरीर में शक्ति नहीं है, तो आपका मन भी डाँवाडोल हो जाएगा। मन भी विचलित हो जायेगा तो उसी एक मनोविज्ञान को देखते हुए भी हम इस चीज को समझ सकते हैं। स्त्रियों के विषय में सिद्धान्ततः ऐसा कहा गया है कि उनके पास में उत्कृष्ट संहनन नहीं होता है। जो निर्वाण के लिए जिस उत्कृष्ट संहनन की आवश्यकता होती है, जिसे वज्र वृषभ नाराच संहनन कहा जाता है वह भी नहीं होता है।

निर्वाण के लिए:

- मोह से रहित होना
- भय से रहित होना
- आवरणों का त्याग
- परिग्रहों का त्याग
- उत्कृष्ट संहनन

उनके पास में जब यह संहनन नहीं है, सिद्धान्त में तो यहाँ लिखा है कि जो छह प्रकार का संहनन है, उनमें से तीन प्रकार के उत्कृष्ट संहनन कर्म भूमि की महिलाओं को होते ही नहीं हैं। मतलब उत्कृष्ट ऊपर के तीन संहनन, वज्र वृषभ नाराच संहनन, व्रज नाराच संहनन और नाराच संहनन। ये तीन संहनन उनके पास में होंगे ही नहीं। समझ आ रहा है? जब इतनी बड़ी शक्ति जो उनके शरीर में हड्डियों के माध्यम से मिलती है वह उनके पास में नहीं होती है तो यही वजह होती है, उनके चित्त में इतना एकाग्रता नहीं आ पाती। उनका चित्त मोह, माया, भय, जुगुप्सा आदि के भावों से मुक्त नहीं हो पाता। इसलिए उन्हें ध्यान नहीं लग पाता। ध्यान नहीं लग पायेगा तो केवलज्ञान नहीं होगा। केवलज्ञान नहीं होगा तो निर्वाण नहीं होगा। यह उसका कारण है। हम यह समझ सकते हैं कि उनके शरीर की भी दृढ़ता, उनके शरीर की संहनन शक्ति कमजोर होती है।

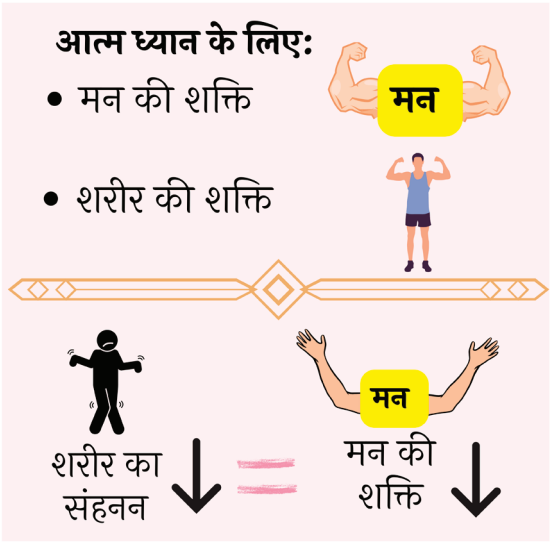

स्त्री को निर्वाण नहीं होने का सिद्धान्त सभी कालों की अपेक्षा बताया गया है

अभी वर्तमान में देखा जाए तो सभी एक तरीके से हीन संहनन वाले ही हैं। अगर इस चर्चा को इस तरह से मोड़ा जाए वर्तमान में तो किसी को निर्वाण नहीं होना। वर्तमान में तो सबके शरीर की शक्तियाँ लगभग एक जैसी हैं, सभी हीन संहनन वाले ही हैं। वर्तमान में तो स्त्रियों को कोई चिंता करने की जरूरत है ही नहीं है। इन ग्रन्थों को पढ़ करके भी कोई अपने मन में किसी भी तरीके का depression लाने की जरूरत नहीं है। क्योंकि वर्तमान में तो सब हीन संहनन वाले ही हैं लेकिन जो सिद्धान्त बताया जाता है, वह तो हर काल की अपेक्षा से बताया जाता है। अगर निर्वाण होगा तो जिस काल में होगा उस काल की बात है। अगर उस काल में अगर संहनन होगा तो वह संहनन स्त्रियों के पास में तब भी उत्कृष्ट नहीं होगा। पुरुषों के लिए वह उत्कृष्ट संहनन मिल जाता है, वह उनके अपने-अपने कर्म का फल होता है। लेकिन स्त्रियों को उत्कृष्ट संहनन की प्राप्ति

होती ही नहीं है। इस कारण से उनका चतुर्थ काल में भी ध्यान जो शुक्ल ध्यान होता है वह नहीं लग पाता और उसी कारण से उनको केवल ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो पाती। इस चीज को हम इस तरीके से भी समझ सकते हैं कि यहाँ पर जो ये गाथाएँ लिखी हैं ये हमें उस निर्वाण की भूमिका में बताने वाली गाथाएँ हैं जिनके माध्यम से हम यह समझ सकते हैं कि स्त्रियों को निर्वाण क्यों नहीं होता?

निर्वाण के लिए तीन प्रकार के उत्कृष्ट संहनन

- वज्र वृषभ नाराच संहनन
- व्रज नाराच संहनन
- नाराच संहनन

महिलाओं में इनका नहीं होना

वर्तमान में स्त्रियाँ भी पुरुषों की भांति धर्म-ध्यान कर सकती हैं

सब इस पंचमकाल में तो किसी को निर्वाण नहीं होता इसलिए आपको चिंता करने की कोई जरूरत ही नही। जैसा पुरुषों का संहनन वैसा स्त्रियों का संहनन। जितना धर्म-ध्यान पुरुष कर सकते हैं उतना धर्म-ध्यान स्त्रियाँ भी कर सकती हैं। so al। are equal, don't worry. फिर भी एक शक्ति की जो बात है, एक reality की जो बात है उसको हमें ध्यान में रखना चाहिए। वही आचार्य कह रहे हैं- देखो! यह एक स्वभाव है, जिस स्वभाव की चर्चा हमने कल भी की थी। यहाँ एक बात अच्छी बात अगली ।ine में और भी लिखी है। देखो! आचार्य हर बात को कितनी गहराई से पकड़ते हैं कि इनका जो शरीर होता है वह **'संपुडं'** नहीं होता है मतलब ढका हुआ नहीं होता है। मतलब शरीर के जो अवयव होते हैं, उनको ढाकने की आवश्यकता पड़ती है। अब इसको हम ज्यादा समझा नहीं सकते, आप अपने आप समझ सकते हो। पशुओं के लिए भी ऐसा ही कहा जाता है। पशुओं का जो शरीर होता है वह भी एक तरीके से खुले शरीर वाले होते हैं। उस दृष्टिकोण से भी सभ्य समाज में यह कहा जाता है कि अपने शरीर को ढाक करके रखें।

आचार्यों ने लज्जाशील होना स्त्री का गुण कहा है

यह इसलिए भी कहा जाता है कि आपके अन्दर एक और गुण होना चाहिए। अब देखो! आचार्यों ने इसी को एक गुण के रूप में लिया है। लज्जा होना स्त्री का एक गुण माना जाता है। पुरुष के लिए लज्जाशील होना अच्छा गुण नहीं है। एक मनोविज्ञान की बात बता रहा हूँ, इसको हम personality development के साथ भी जोड़ सकते हैं। कोई बहुत सारे जो motivator होते हैं वे एक चीज को सब में apply कर देते हैं। वस्तुतः शास्त्र के अनुसार लज्जाशील होना स्त्री का गुण है। स्त्री में लज्जा होगी तो वह गुणवान कहलायेगी, कुलवती कहलायेगी, सभ्य कहलाएगी और पुरुष में लज्जा होगी तो वह झिझक वाला झेंपू आदमी कहलायेगा। उसके लिए अच्छा नहीं माना जायेगा। कई बार क्या होता है, जो personality development के course होते हैं, उनमें जो motivator होते हैं वह सबके लिए यह सिखाना शुरु कर देते हैं कि भाई! देखो किसी को भी झेंपू नहीं होना चाहिए। झेंपू समझते है न? किसी को भी मतलब लज्जालु स्वभाव का नहीं होना चाहिए। सबको बिल्कुल frank होना चाहिए तो यह बात पुरुषों के लिए तो घटित होती है अच्छी बात है लेकिन इसी चीज को अगर स्त्रियाँ adopt कर लेती हैं, इस प्रकार का motivation अगर लड़कियाँ ले आती हैं तो वह उसके लिए खतरनाक चीज बन जाती है। वह उनके लिए अपने कुल परम्परा के अनुसार एक सभ्यता के अनुसार, एक गलत चीज बन जाती है। वह उनकी चीज जो होती है, न तो उनके भावों की chemistry में वह चीज होती है, न उनकी Physical body में वह चीज होती है। वह चीज उनके अन्दर होना चाहिए। साहित्य की शैली में भी कहा जाता है, पहले भी लोगों ने जहाँ गुणवान स्त्रियों की चर्चा की है तो वहाँ कहते हैं कि स्त्रियों में लज्जा नाम का एक बहुत अच्छा गुण पाया जाता है, इसी के कारण से वह स्त्रियाँ अच्छी लगती हैं। Personality उनकी develop होगी। किसके कारण से? उनमें एक लज्जालु स्वभाव हो। आप सब समझ सकते हो, लज्जालु स्वभाव क्या होता है? क्या समझ आ रहा है? लज्जा का मतलब क्या है? थोड़ी सी शर्म होना, उसी को बोलते हैं न लज्जा! शर्म होगी, थोड़ी सी लज्जा होगी तो क्या होगा? वह अपना पहनना, ओढ़ना एक मर्यादित ढंग से बनाकर के रखेगी।

बराबरी की होड़ में लज्जा पीछे छूट गई

लज्जा छूट गई तो क्या होगा? क्या फर्क पड़ रहा है? उस co।lege में, वह फलाना व्यक्ति आया था, बहुत बड़ा motivator था, उसने हमसे सब बच्चों से कहा था, किसी को किसी भी तरीके की शर्म नहीं करना चाहिए, बिल्कुल frank घूमना चाहिए। जो मन में आए सो पहनना चाहिए, जो मन में आए सो खाना चाहिए। जैसा सबके सामने खड़े हो जाना चाहिए, जैसा हो वैसा सबके सामने बात करना चाहिए। आज के लोग आज की बेटी-बच्चियों को यह सिखाते हैं, बड़े-बड़े profesional तरीके से सिखाते हैं, बड़े-बड़े co।leges में सिखाते हैं। उसका यह resu।t निकलता है कि वे ऐसे उज्जड type की हो जाती हैं। उज्जड समझते हो? उद्दण्ड type की। हाँ! अब न तो घर में उनको किसी की बात मानना, न अपने बड़ों के सामने कभी भी नम्रता से पेश आना, न कभी भी कोई भी sincerity के जो manners होते हैं, वे fo।low करना, कुछ भी नहीं आता उनको। ये सब चीजें हो जाती हैं। इनके कारण से उन बेटियों के अन्दर ये दोष आने लग जाते हैं कि जो उनके स्वभाव को अच्छा बनाते, वही उनके स्वभाव को बुरा बनाने लग जाते हैं। अब आप देखोगे कि कई घर के लोग उन बेटियों से कब परेशान हो जाते हैं? बोले जब तक यह स्कूल में थी, पढ़ती थी तब तक तो यह ठीक रहती थी। अब जब से यह co।lege गई है तब से यह किसी की बात ही नहीं मानती। अब यह अपनी पकड़ से ही बाहर जा रही है। कुछ भी कहो सुनती नहीं, कुछ भी समझाने की कोशिश करो समझती नहीं, अब उसका दिमाग ही पता नहीं कहाँ घुम रहा है। न तो घर मे माँ की बात मान रही है, न पिता की बात मान रही है, न भाई की बात मान रही है, न किसी गुरुजन की बात मान रही है। यह किसी की सुन ही नहीं रही है। यह क्यों हो रहा है? उसको co।lege में ये सब चीजें सिखाई जाती हैं। जो उसके आपस के friends होते हैं वे भी उससे इस तरीके से बोलते हैं। वे कहीं सीख कर के आते हैं, वे भी बताते हैं, इस तरीके के course कराये जाते हैं। personality developement के नाम पर इस तरीके की शिक्षाएँ दी जाती हैं। उसके कारण से उनके भाव जब बिगड़ जाते हैं तो फिर उनमें जब यह लज्जालु स्वभाव जाने लगेगा तो फिर वे किसी की भी कोई शर्म नहीं करेगी। लज्जालु स्वभाव रहता है तब माता पिता की बात मानेंगी। देखो! माता-पिता कह रहे हैं, दो बार कह रहे हैं, चार बार कह रहे हैं, हमें एक बार तो सोचना चाहिए कि वे क्या कह रहे हैं? कौन सी चीज उन्हें हमारी अच्छी नहीं लग रही है। हम समझें तो? कौन-सा पहनना, ओढ़ना, खाना-पीना, चलना-बैठना उनको अच्छा नहीं लग रहा।

लज्जाशील होने पर बेटियाँ कभी गलत राह नहीं पकड़ेंगी

एक बार भी अगर वह लज्जालू स्वभाव की होगी तो शर्म करेगी। स्त्रियों के लज्जालु स्वभाव होने से कितनी बड़ी-बड़ी चीजें बच जायगी। वह कभी भी किसी के साथ में यदवा-तदवा नहीं घूमेगी। किसी भी अनजाने व्यक्ति के साथ में घूमेगी नहीं, यह स्वभाव भी स्त्रियों का धीरे-धीरे छूटता जा रहा है। जब co।lege में लड़कियाँ पहुँच जाती हैं तो क्या होता है? किसी भी लड़के के साथ में घूमने निकल जाती है। किसी की भी byke पर बैठ जाती है, किसी को भी अपनी byke पर बिठा लेती है क्योंकि लज्जालु स्वभाव छूट गया। यह लज्जालु स्वभाव छूटने के कारण से ही तो ये सब चीजें आ रही हैं। लज्जा रहेगी कोई देख लेगा! अब क्या हो गया? कोई देख लेगा कि मैं किसी दूसरे आदमी के साथ घूम रही हूँ, दूसरे लड़के के साथ घूम रही हूँ तो कोई क्या कहेगा? पहले एक लड़की के अन्दर यह एक भाव रहता था। समझ आ रहा है? जब से यह co।lege की frankness शुरू हुई है तब से भाव छूटने लगा। अब उसका यह परिणाम निकलने लगा कि जब लड़कियों को किसी के भी साथ घूमने में कोई भी हिचकिचाहट भी नहीं होती तो उसी को वह समझती हैं कि लड़के और लड़कियाँ बराबर हो गए। अब वे उनके friend बन गए जो भी उन्होंने अपना कर लिया, अब वह उस भाव में आ जाती है कि ये दोनो बराबर हो गये। जब ये दोनों बराबर हो गए तो अब शर्म चली गई, लज्जा चली गई। जो उनका एक natural quality थी वह चली गई। अब वह चली गई तो उसके कारण से जब तक वह घूमती रही तब तक तो अच्छा लगा, enjoy करती रही, कहीं होटलों में जाकर कर, कहीं पार्कों में जाकर तब तक तो अच्छा लगा। लेकिन वह कब तक चलेगा? साल भर बाद, दो साल बाद, जब वह संबंध कहीं न कहीं अलग होने पड़ते हैं, कहीं उसे अलग job में जाना है, कहीं अलग c।ass में जाना हैं। माँ-बाप कुछ अलग खींच रहे हैं। जब ये चीजें सामने आने लग जाती हैं तब वह दिक्कतें बढ़ जाती हैं। तब फिर वह स्वभाव जो बदल गया, वह स्वभाव फिर सामने आ जाता है। फिर वह माता-पिता के लिए भी शर्म नहीं करती। माता-पिता की शर्म तो छोड़ो फिर उसे यह भी शर्म नहीं लगती कि समाज में कोई क्या कहेगा कि हम उसके साथ घूम रहे है। सब कोई जान रहा है, सब कोई गलत कह रहा है लेकिन शर्म नहीं आ रही है। वह शर्म कहाँ चली गयी? वह शर्म खा ली, वह जो लज्जालु स्वभाव था, उसे हमने एक तरीके से बदल दिया, उसी का यह परिणाम निकला। अब उसको इतना भी नहीं लगेगा अगर हम कोई गलत काम भी कर रहे हैं या हमारे माता-पिता के लिए भी कोई गलत कह रहा है, तो हम उस पर भी थोड़ा सा शर्म करें कि हमारे कारण से माता-पिता को कितना सुनना पड़ रहा है कि तुम्हारी

बेटी किसके साथ घूमती रहती है? किसके साथ विवाह करने की तैयारी कर रही है? यह सब सुनने के बावजूद भी अब कोई फर्क पड़ता नहीं क्योंकि लज्जालु स्वभाव चला गया।

लज्जाशील होने से भावों की विशुद्धि बनी रहती है

इसलिए स्त्री के अन्दर यह बहुत बड़ा गुण कहा गया है, स्त्री लज्जालु होनी चाहिए। लज्जा का मतलब है- उसका थोड़ा सा झुकाव कैसा होना चाहिए? मतलब एक तरीके से उसकी नजरें थोड़ी सी झुकी हुई रहनी चाहिए। हर किसी के सामने बिल्कुल खुल करके बोलना, खुलकर के उसके लिए बिल्कुल पेश आना, यह स्त्री के जो स्वभाव में धीरे-धीरे आने लगा है, इसी के माध्यम से स्त्री के अन्दर शर्म धीरे-धीरे चली जाने लगी। पहले के लोगों में यह चीजें देखने को अच्छे ढंग से मिलती थी। अब थोड़ा सा यह कम हो रहा है और जैसे-जैसे कम हो रहा है, उसी के कारण से बेटियों के स्वभाव बिगड़ते चले जा रहे हैं। सब uncontro। हो रहे हैं। लज्जा से ही तो शील बनता है, लज्जा रहेगी तो शील के भाव भी रहेंगे। जब लज्जा ही छूट गई तो शील कहाँ रहा। पहले तो शील स्वभाव रहता था तभी तो लज्जा के कारण से तो **'पर'** व्यक्ति के साथ में, किसी भी अनजाने व्यक्ति के साथ में, खाना-पीना, उठना-बैठना, हँसना-बोलना यह सब नहीं होता था, लज्जालु स्वभाव के कारण से! अब यह सब कुछ नहीं होता है। अब ऐसा कोई करे तो समझा जाता है कि यह तो backward है। अभी भी यह नये जमाने में पुराने जमाने के हिसाब से चल रही है। देहाती है, तो बच्चियों को अब इतना खुलापन आ गया कि घर में पहुँचने के बाद भी अब जब उनका विवाह हो जाता है तो उसके बावजूद भी देखो! पहले लोगों में कितने बड़े-बड़े घूँघट होते थे। हम कहते हैं चलो! बहुत बड़े होते थे, उतने बड़े भी नही होने चाहिये लेकिन अब तो बिल्कुल भी नहीं दिखते। घूँघट नाम की अब कोई चीज नहीं रही। पहले जिस पर घर में जाते थे वहाँ के एक माता-पिता के तुल्य जो सास ससुर हुआ करते थे, उनसे भी थोड़ा सा घूँघट रहता था लेकिन आज वह भी नहीं रहा। यह धीरे-धीरे कहीं न कहीं स्त्रियों की जो अपनी quality थी, उस quality में अन्तर आ रहा है और उस के कारण से जो शील स्वभाव रहता है, उस शील स्वभाव में कमी आ रही है। उसका नतीजा यह भी निकलता है कि उसके कारण से जो परेशानियाँ आती हैं क्योंकि हमारे मन में जो भावों की विशुद्धि होनी चाहिए वह नहीं रहती, पुण्य भाव नहीं रहता। उस शील स्वभाव की कमी के कारण से कई तरीके की आपत्तियाँ भी आती रहती हैं, कई तरीके की परेशानियाँ

भी आती रहती हैं।

स्त्रियों में संवरित रहना ही सभ्यता है

घरेलू परेशानियाँ, पारिवारिक परेशानियाँ जो आती हैं, उसका भी एक बहुत बड़ा कारण यह है। इसलिए यहाँ पर जो कहा जा रहा है कि स्त्रियों को हमेशा संवरित होकर रहना चाहिए। मतलब हमेशा उन्हें अपने शरीर को ढाँक कर के रखना चाहिए, यह उनका स्वभाव है और इसी में जब वह रहेंगी तो अच्छी लगेंगी। यह जितना भी आज उघड़ापन दिखाई दे रहा है, यह एक तरीके से सभ्यता ही धीरे-धीरे असभ्यता मे convert होने लगी है क्योंकि जब एक विचारधारा के बीस लोग, पचास लोग इकठ्ठे हो जाते हैं तो उनमें अपने आप एक शक्ति आ जाती है और फिर वही चीज सामने आ जाती तो वही चीज गलत भी होगी तो सही लगने लग जाती है। स्वीकारता आने लग जाती है। आज बेटे-बेटियों के विषय में जो हमें परेशानियाँ आ रही हैं, उनमें जो परेशानियों का मूल कारण है, अपने-अपने स्वभाव में नहीं रहना। स्त्रियों का जो स्वभाव है वे उसी स्वभाव के अनुरूप चले, पुरुषों का जो स्वभाव है वे उसी स्वभाव के अनुसार चले। अपने-अपने भाव में जब कोई चीज रहती है तो हर चीज अपनी nature, अपनी प्रकृति में ही अच्छी लगती है। आप देखोगे! जैसे ही हम एक दूसरे की प्रकृति को change करेंगे तो वहीं से हमारे सामने परेशानियाँ शुरू हो जाती हैं। इसी को हम कहते हैं- प्रकृति के साथ खिलवाड़ करना। लोग प्रकृति का मतलब बाहरी प्रकृति समझते हैं। जैसे हम पानी हैं, वृक्ष हैं, जलवायु है, इसके साथ खिलवाड़ करके जो इसके हम opposite resu।t देखते हैं वैसे ही मनुष्य की भी अपनी अपनी प्रकृतियाँ हैं। स्त्री की अलग प्रकृति है, पुरुष की अलग प्रकृति है। स्त्री अपनी प्रकृति में रहे, प्रकृति मतलब स्वभाव में रहे तो वह सही रहती है और उससे जो एक cu।tural Environment होता है, वह बिगड़ता नहीं है। यह बहुत बड़ी चीज थी जो धीरे-धीरे आज की शिक्षा के कारण से बिगड़ती हुई नजर आ रही है। देखो! स्त्री का यह जो लज्जालू स्वभाव है, यह अगर बना रहता है तो स्त्री की और भी जो qualities होती हैं वह अपने आप उसी के साथ में बन जाती है और अच्छी लगती हैं।

लता के समान स्त्री भी आश्रय के साथ शोभित होती है

स्त्री को हमेशा लता की उपमा दी जाती है। लता! लता जानते हो? लता क्या होती है? जो किसी खम्बे के सहारे या किसी वृक्ष की टहनी के सहारे बढ़ती है और वह बढ़ते हुए भी मुलायम रहती है। उसका मुख हमेशा नीचे की ओर रहता है। लता को हम खींच करके कितने भी ऊपर बाँध दे, बेल जिसे बोलते हैं लेकिन उसका ऊपरी हिस्सा जो होगा वह नीचे झुका हुआ मिलेगा आपको। समझ आ रहा है? इससे दो चीजें फलित होती हैं। मैं आपको बता रहा है, बता दूँ! एक कहा जाता है- **"आश्रयेण बिना न शोभन्ते कदापि वनिता लता"** वनिता मतलब स्त्री और लता की उपमा देकर के कहा जाता है कि जैसे लता आश्रय के बिना शोभा को प्राप्त नहीं होती ऐसे ही स्त्री भी कभी भी आश्रय के बिना शोभा को प्राप्त नहीं होती, उसे आश्रय चाहिए, आसरा! कहीं माता-पिता का, सास-ससुर का, पिता का, गुरु का किसी न किसी का आसरा होगा तो वह शोभित होगी। बिना आश्रय के होगी तो वह शोभा को प्राप्त नहीं होगी। आप देखो! ऐसी किसी स्त्री की कल्पना करो, जिसका अपने घर-बार से कोई नाता नहीं रहा और जिस घर में उसने विवाह किया उस घर-बार से भी कोई नाता नहीं रहा। अब आप समझो वह स्त्री कैसी हो गई? मान लो पति ने भी उसको छोड़ दिया, बच्चे भी उसके पास में नहीं हैं। अब वह अकेली है केवल। वह कहीं भी समाज में कभी भी जाएगी, किसी के साथ उठेगी, बैठेगी, वह कभी भी शोभा को प्राप्त नहीं होगी। एक तो चीज यह है कि उसके लिये सहारा किसी न किसी का होना चाहिए। दूसरा उसका स्वभाव लज्जाशील हम उसी रूप में देखते हैं जैसे लता होती है कि कितनी बड़ी हो जाए लेकिन उसका ऊपर का मुख जो होगा वह नीचे की ओर झुका रहेगा। यह उसका लज्जालु स्वभाव है। उसमें एक जो मुलायमपन रहेगा, इसी के कारण से वह शोभा को प्राप्त होती है। ये दोनों qualities अगर स्त्री में बनी रहती हैं तो वह स्त्री अपने स्वभाव में रहते हुए, उसके साथ में और भी जो उसकी quality होगी, मान लो बहुत अच्छी उसकी intel।igency है, बहुत अच्छी उसके अन्दर creativity है, ये सब चीजें तब अच्छी लगेंगी जब उसका यह लज्जाशील स्वभाव छूटे नहीं।

लज्जाशील स्वभाव होने से स्त्री की मर्यादा की विश्वसनीयता बनती है

किसी और भी quality के लिए मना नहीं किया है लेकिन यह चीज भी बनी रहनी

चाहिए। इससे क्या होता है? घर के अन्दर स्त्री का एक विश्वास बना रहता है। अगर लज्जाशील स्वभाव है तो वह विश्वस्त हो जाती है। किसके द्वारा? उसके माता-पिता के द्वारा, सास-ससुर के द्वारा, पति के द्वारा। लज्जालु स्वभाव से अन्दर एक विश्वास बनाता है और जहाँ यह स्वभाव छूटता है, वहाँ हर कोई समझता है, भैया! इसका तो कोई भी भरोसा नहीं है। कुछ भी, किसी के साथ भी, कहीं पर भी, किसी के साथ भी घूमने चली जाती है। किसी के साथ भी बैठ जाती है, कुछ भी कर लेती है। ऐसा जब स्वभाव सामने आ जाता तो वह एक व्यक्ति के अन्दर एक doubt का काम कर देता है। इसलिए ये चीजें, जो पहले बताई जाती थी इनका मनोविज्ञान हमें ऐसा समझ में आता है। अगर यही मनोविज्ञान आज भी बना रहे और लोग इसी मनोविज्ञान को अपनी बेटियों को समझाएँ तो वे बेटियाँ बड़े होकर के भी बहुत अच्छे ढंग से पढ़-लिख कर के भी एक अच्छा इंसान बनेंगी और समाज की भी एक शान बनेगी। अगर यह मनोविज्ञान उनको सिखाया जाए और कोई ज्यादा चीज नहीं है, उनसे यह कहा जाए कि कभी भी अपने लज्जालु स्वभाव को नहीं छोड़ना। लज्जालु का मतलब झेपूं नहीं होता है। स्त्रियों के लिए तो वह quality है। झेंपू का मतलब होता है- जो किसी भी काम को, कभी भी बिलकुल भी अच्छे ढंग से बहादुरी के साथ न करता हो उसको बोलते हैं- झेपूं! लेकिन जो व्यक्ति अपने स्वभाव को जानता है, वह अपने लज्जालु स्वभाव के साथ में अपना कोई काम करता है तो लज्जालु स्वभाव में क्या हो जाता है? कोई भी काम करते-करते अपनी मर्यादा से बाहर नहीं जाना, यह लज्जालु स्वभाव में आ जाता है। झेंपू व्यक्ति तो कोई काम शुरू ही नहीं करता है। कोई भी काम करने की उसके अन्दर आदत ही नहीं प्रारम्भ होती है, तो वह स्वभाव गलत ही है। लेकिन उसको इस लज्जालु स्वभाव के साथ जोड़कर के, इस लज्जालु स्वभाव की धज्जियाँ उड़ा देना, जो यह आज के लोग कर रहे हैं यह अच्छा समझ में नहीं आता है। हमेशा अपने बेटे-बेटियों को अपने-अपने स्वभाव के बारे में पता होना चाहिए। पुरुष का स्वभाव जैसे पौरुषशील होता है, पुरुषार्थ प्रधान होता है उसको पुरुषार्थ प्रधान होना चाहिए। उसको आलस नहीं करना चाहिए, उसको अकर्मण्य नहीं होना चाहिए और स्त्रियों का स्वभाव जो होता है लज्जा के साथ में हर तरीके की क्रिया करना, हर तरीके से घर की हर कला में निष्णात होना, यह जो स्वभाव होता है, वह स्वभाव उनके अन्दर आना चाहिए। इस स्वभाव के साथ में, अगर बेटे-बेटियाँ दोनों आगे बढ़ते हैं तो वह आगे चलकर के अच्छे इंसान बनते हैं। समाज की शान बनकर के हम कहने लायक होते हैं कि देखो! ये बेटे-बेटियाँ कितनी अच्छी पीढ़ियों के साथ में सामने आ रहे हैं।

स्त्री का सौन्दर्य उसके संवरणता में है, न कि निरावरणता

लेकिन इन सब चीजों में आज थोड़ा-सा इस quality में कमी आती दिखाई दे रही है। आचार्य कुन्दकुन्द की बात मानने वाले लोग, इतना मानने को कोशिश करें कि स्त्रियों का शरीर खुले स्वभाव का नहीं होता है। पुरुषों का शरीर खुले स्वभाव का हो सकता है इसलिए वे खुला भी घूम सकते हैं लेकिन स्त्रियाँ अगर खुला घूमने लगती हैं तो इसका मतलब है कि यह एक असभ्यता आने लगी है। लोग न जाने कितने तरीके से इन भावों को opposite तरीके से लेकर के उल्टी-उल्टी बातें सीख लेते हैं और उल्टा c।aim करने लग जाते हैं। अब मुनि महाराज पर ही स्त्रियाँ c।aim कर सकती हैं, कर जाती हैं या कोई दूसरी समाज c।aim कर जाती है कि भाई जब ये नग्न हो सकते हैं तो हम क्यों नहीं हो सकते हैं। उसका यहाँ यह मनोवैज्ञानिक और जो शारीरिक कारण है वह यहाँ बताया जा रहा है। अगर इस चीज को लोग बारीकी से समझें तो इस तरीके से कभी question उठाकर के हम कभी भी दिगम्बरत्व पर कोई भी जो आपेक्ष आता है तो हम उसका समाधान कर सकते हैं और समाधान ज्ञान से ही होता है। अगर आपके पास ज्ञान है तो ही वह समाधान को प्राप्त होंगे। अगर आपका ज्ञान काम नहीं कर रहा है तो हम आपको लाख बातें समझायें, आप फिर वही तर्क ले आओगे कि नहीं! अगर जब आप ऐसा कर सकते हो तो हम भी ऐसा कर सकते हैं तो फिर वह बात ही खत्म हो गई। यहाँ ये बातें समझी जाएँ कि आचार्यों ने कहा है कि स्त्री का स्वभाव खुले शरीर का रहना होता ही नहीं क्योंकि उसका शरीर खुला हुआ होता है, जो वीभत्स लगता है। एक शब्द आता है- वीभत्स। वीभत्स का मतलब जानते हो? एक तरीके से समझो एक डरावना, घिनावना। मतलब जैसे किसी भी जीव का हम कहीं कोई मांस पड़ा हुआ देखते हैं या किसी मरे हुए जीव का मांस देखकर जैसे हमें एक वीभत्सता नजर आती है, ऐसे ही स्त्री का खुला हुआ शरीर वीभत्स लगता है। स्त्री का सौंदर्य उसके श्रृंगार में है। शरीर कितना ही सुंदर हो अगर वह खुला हुआ होकर के शरीर दिखाने लग जाती है तो वह स्त्री वीभत्स लगने लग जाती है, बुरी लगने लग जाती है। यह एक बहुत बड़ी मानसिकता है। इस मानसिकता को जो लोग नहीं समझते वे लोग स्त्री की भी सुरक्षा नहीं कर पाते और अपने भावों की भी सुरक्षा नहीं कर पाते। इस मानसिकता को यहाँ आचार्यों ने यहाँ खोला है। इसलिए कहा गया है कि उन्हें कभी भी अपने शरीर को खोल करके नहीं रखना। आप देखोगे वही स्त्री जो सुंदर लगती है पहन-ओढ़ करके, अच्छे-अच्छे श्रृंगार करके, वही स्त्री जब इस तरीके से जब अपने शरीर

के साथ में अर्धनग्न होकर के या नग्न होकर के आ जाती है तो वह वीभत्स लगती है, वह बहुत बुरी लगती है। इसी कारण से यहाँ कहा कि स्त्रियों का शरीर हमेशा संवरित होना चाहिए, ढका हुआ होना चाहिए। आचार्यों ने हर चीज को समझा है और उसी के अनुसार हर चीज की व्याख्या है। वह व्याख्या कोई आजकल की नहीं है, हर काल में इसी तरीके से व्याख्या रही है, इसी तरीके से हमेशा ये प्रवृत्तियाँ चली हैं। आज ये प्रवृत्तियाँ बिगड़ रही हैं इसलिए दोनों तरीके की वृत्तियों को tal।y करके हमें यहाँ बोलना पढ़ रहा है। ठीक बात है आगे की और गाथा पढ़ते है क्योंकि प्रकरण बहुत बड़ा है।

प्रवचनसार गाथा - 248

चित्तस्साओ तासिं सेथिल्लं अत्तवं च पक्खलणं।
विजदि सहसा तासु य उप्पादो सुहुममणुयाणं॥२४८॥

उद्रेक काम रिपु का जिनको सताता, शैथिल्य भाव जिन को दिन रैन खाता।
होती तथा ऋतुमती प्रतिमास में है, हो सूक्ष्म मर्त्य जिनके तनु-वास में हैं॥

अन्वयार्थ- (तासिं) उन स्त्रियों का (चित्तस्साओ) काम के उद्रेक से निरन्तर स्राव (सेथिल्ल) मन में शिथिलता (अत्तवं च पक्खलणं) प्रतिमास में रक्तस्रवण (य) और (सुहुममणुयाणं) सूक्ष्म मनुष्यों की (उप्पादो) उत्पत्ति (सहसा) अपने आप (विजदि) होती है।

मोक्ष प्राप्त करने के लिए उसकी साधनभूत सामग्री अनिवार्य है

देखो! क्या कहते हैं? मोक्ष के साधकभूत, चारित्र की जो समग्रता होनी चाहिए वह समग्रता क्यों नहीं होती, उसके यहाँ और भी मनोवैज्ञानिक कारण बताए जा रहे हैं। देखो! मोक्ष कोई खिलौना नहीं है कि हम किसी को भी पकड़ा दे और कोई भी उसको पकड़ ले। उसकी जो सहायक सामग्री है, मोक्ष को प्राप्त करने के लिए क्या है? जो ध्यान होना चाहिए, जो ध्यान की विशुद्धि होना चाहिए और उस विशुद्धि के लिए जो सहायक सामग्री है, जो हमारा शरीर होना चाहिए, जो शरीर की शक्ति होना चाहिए और उस शरीर में जितना एक निर्भीकता का भाव, निर्मोहता का भाव, निरीहता का जो भाव आना चाहिए, ये सब सहायक सामग्रियाँ जब तक नहीं मिलती तब तक कभी भी आत्मा में पूर्ण रूप से कर्मों की निर्जरा होकर के मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। यह आत्मा से कर्मों का नाश करने की सामग्री है। कर्मों का नाश क्यों नहीं हो पाता? बीच में जो चीजें हैं वे कौन सी आ जाती हैं जिनके कारण से हम उन स्त्रियों के अन्दर इस प्रकार की दृढ़ता नहीं देखते, निरीहता नहीं देखते, निर्भीकता नहीं देखते, यह उनके शरीर में होने वाली कुछ चीजें है, जिनका यहाँ वर्णन किया जा रहा है। जिसके कारण से वह कभी भी निर्मोह और निर्भीक नहीं हो पाती। यही आचार्य यहाँ कह रहे हैं-

मोक्ष प्राप्ति के लिए :

- ध्यान होना चाहिए।
- ध्यान की विशुद्धि होना चाहिए।
- शरीर की शक्ति होना चाहिए।
- शरीर में निर्भीकता का भाव होना चाहिए।
- शरीर में निर्मोहता का भाव होना चाहिए।
- शरीर में निरीहता का भाव आना चाहिए।

स्त्रियों का चित्त हमेशा चलायमान रहता है

"चित्तस्साओ तासिं" उन स्त्रियों में, हमेशा चित्त में उनके स्राव होता रहता है। यह स्राव क्या है? एक चित्त का स्राव है। चित्त में मतलब उनके मन में हमेशा काम भाव का स्राव चलता रहता है। स्राव का मतलब होता है- रिसना। यह जरूरी नहीं है कि उस काम का उद्वेग हो लेकिन उसका स्राव, उसका रिसना कभी बन्द नहीं हो सकता है। यह यहाँ पर कहा जा रहा है। फिर कहते हैं- **'सेत्थिल्लं'** उनके शरीर में शिथिलता बहुत जल्दी आ जाती है। **'अत्तवं'** ऋतुकाल में जो उनके लिए जो स्थिति बनती है उसको यहाँ कहा गया है- **'पकखलणं' मतलब** रक्त का स्राव होना, उसका प्रस्खलन होना, **'विज्जदी'** अर्थात् रहता है। **'सहमा तासु य उप्पादो सुहमगणुयाणं'** और उनके शरीर में सूक्ष्म मनुष्य का भी उत्पाद होता रहता है। **उत्पाद** मतलब उत्पत्ति होते रहना। इस गाथा में इसका भाव देखो आचार्य महाराज क्या लिखते हैं?

उद्रेक काम रिपु का जिनको सताता, शैथिल्य भाव जिन को दिन रैन खाता।
होती तथा ऋतुमती प्रतिमास में हैं, हो सूक्ष्म मर्त्य जिनके तनु-वास में हैं॥

In their case there is always the mental mobility. दिमाग हमेशा चलायमान रहता है। इसको mental mobility कहते हैं। इसको चित्त का स्राव कहा

गया है and fecklessness and the periodical oozing of blood at the time of monthly course, where in grow micro human organisms मतलब जहाँ पर सूक्ष्म मनुष्य जीवों की उत्पत्ति होती रहती है। मनुष्य में भी क्यों ऐसा कहा गया है? अब यह ऐसा बड़ा science है, जिसको आज का science कुछ भी proof नहीं कर सकता है। जो यहाँ कहा जा रहा है। यह सिर्फ सर्वज्ञ भगवान के द्वारा देखी गई बात हैं तो मोटी-मोटी बातें तो सब कोई पकड़ लेता है लेकिन सूक्ष्म बातें कौन पकड़ पाएगा। अब जैसे चित का स्राव है तो चित्त की एकाग्रता भी किन्हीं स्त्रियों में होती है। मोटी रूप में तो सबको पकड़ में आ जायेगी लेकिन उसके बावजूद भी आचार्य कह रहे हैं उनके कितनी भी एकाग्रता हो जाए, फिर भी उनके चित्त में क्या होगा? काम का, राग का स्राव बना रहता है। अब इस सूक्ष्म बात को कौन पकड़ेगा? कोई science ही नहीं है। ये बातें जो स्थूल हैं, ऊपर-ऊपर की हैं, देखने में आती हैं, उन्हें तो हर कोई science बता सकता है लेकिन कुछ बातें ऐसी होती हैं जो देखने में नहीं भी आती।

स्त्रियों के शरीर में सूक्ष्म पंचन्द्रिय मनुष्यों की उत्पत्ति शुद्धि नहीं होने देती

अब यहाँ पर कहा गया मनुष्यों की उत्पत्ति होती है। उनके शरीर में मनुष्य की उत्पत्ति का मतलब क्या समझना? यह नहीं समझना कि उनके गर्भ में मनुष्यों की उत्पत्ति है। शरीर में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। क्या है? एक मनुष्य पर्याप्त मनुष्य कहलाते हैं और एक कहलाते हैं- लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य। लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य का मतलब होता है- ऐसे मनुष्य जो एक श्वास के 18 वें भाग में जन्म लेकर मर लेते हैं। मतलब वे इतने सूक्ष्म जीव हैं। **'सुम'** लिखा है न! सूक्ष्म मनुष्य, पंचेन्द्रिय की पर्याय तो मिली, मनुष्य की भी पर्याय मिली लेकिन उनका जन्म एक श्वास के 18 वें भाग में होकर पूर्ण हो जाएगा। उन्हें लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य कहते हैं और ये लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य हमें कभी भी दिखाई नहीं दे सकते हैं। ये स्त्रियों के शरीर के कुछ विशेष स्थानों में उत्पन्न होते हैं, जिन स्थानों का नाम आगे की गाथाओं में लिया जाने वाला है। ऐसे सूक्ष्म उन मनुष्यों की उत्पत्ति को आज का कोई भी microscope नहीं देख सकता है। इतनी सूक्ष्मता की बातें ये बताई गई हैं। इसके कारण से उनके शरीर की शुद्धि नहीं बनती, उनके शरीर में एक अलग तरीके का गंदापन भी रहता है और उसी के कारण से उनके चित्त में हमेशा स्राव बना रहता है। शरीर में हमेशा **शैथिल्य** बना रहता है। **शैथिल्य** का मतलब होता है उनके शरीर में जो वीर्य

होता है, शक्ति होती है, वह अल्प होती है। वह उतनी उत्कृष्ट नहीं हो सकती जो केवलज्ञान के लिये कारण बन जाए या शुक्ल ध्यान के लिए कारण बन जाए, इतनी शक्ति उनके अन्दर नही होती। यह भी चीज समझने की है और यह चीज तो प्रकट दिखाई देती है। **'अत्तवं च पक्खलणं'** हर ऋतु में, हर मास-मास में उनके शरीर से जो रक्त का स्राव होता है, प्रस्खलन होता है, जिसके कारण से शरीर की अशुद्धि होती है और उन्हें किसी भी धर्म क्रिया से एक निषिद्ध रूप में, इनके लिए कहा जाता है।

लब्धि अपर्याप्तक जीव

- सूक्ष्म जीव होते हैं।
- एक श्वास के 18 वें भाग में जन्म लेकर मर जाते हैं।
- हमें कभी भी दिखाई नहीं दे सकते हैं।
- ये स्त्रियों के शरीर के कुछ विशेष स्थानों में उत्पन्न होते हैं।

स्त्रियों की अशुद्धि को अशुद्धि न मानकर मात्र एक शारीरिक process मानना अज्ञानता है

ये भी सब चीजें उनके शरीर में होती रहती हैं लेकिन हम हर चीज को बिल्कुल कुछ नहीं! यह तो सबके साथ होता है, यह तो कोई वैसी चीज है ही नहीं। हर चीज को हम बिल्कुल ignore करके चलें और कोई भी चीज पर हम किसी भी तरीके से एक उसकी जो वास्तविक, जो उसकी भावात्मक, जो उसके अन्दर परिणिति है उसको हम न माने। हम हर एक चीज को आज की science और modernity के हिसाब से उसको हम मना करते जाएँ तो उसके दुष्परिणाम हमारे सामने आने लग जाते हैं। ये चीजें जो यहाँ लिखी हुई हैं, यह आज की बेटियों को समझ में आ ही नहीं सकती है। वे कहेंगे ऐसा कुछ होता ही नहीं है। क्या नहीं होता? बोले चित्त क्या है? बोले हमारा चित्त शुद्ध है। हमको ध्यान लगता है, ध्यान तो लगता है लेकिन वैसा ध्यान जो केवलज्ञान का कारण हो, वह ध्यान कभी भी नहीं लग सकता। शक्ति है! हमारे पास शक्ति है, हम आपसे ज्यादा सब काम कर सकते हैं। अब तो लडकियाँ भी gym में जाने लगी हैं। model town में जाता था, एक poster लगा देखता था। उसमें ऐसे poster जिसमें लड़की, लड़के से बिल्कुल बराबर की शक्ति वाले हो गई। सच! जो शक्ति पुरुष में है, वह शक्ति स्त्रियों में आयगी, बस! gym में आ जाओ। क्या हो जाएगा? जो भीतरी सिद्धान्त है, वह कभी भी बदल नहीं सकता। आप कितना ही

बाहर से अपनी शक्ति लगा लो, लड़ लो, कुछ भी कर लो लेकिन फिर भी जो भीतरी शक्ति है वह अल्प ही रहेगी। यह ठीक है कि हमें अपनी शक्ति को बढ़ाना चाहिए लेकिन यह भी ध्यान रखना चाहिए कि हम अपनी उस शक्ति में इतने ज्यादा मशगूल न हो जाएँ कि हम यह भूल जाएँ जो शास्त्रों में लिखा है, उसे गलत कहने लग जाएँ। यह चीज हमेशा रहेगी, शिथिलता आ ही जाती है। अल्पवीर्य होने के कारण से वह शिथिलता उनके शरीर में बहुत जल्दी आती है। थकान आती है बहुत जल्दी और इसी के कारण से यहाँ यह भी लिखा हुआ है कि जो मास-मास में उनके शरीर में हर month।y जो क्रिया होती है, वह भी एक तरीके से उनके शरीर के लिए ही है। पुरुष के शरीर में नहीं होती, वह स्त्री के ही शरीर में होती है। अब बराबर का नाता देते हुए, बराबर की बातें करते हुए हम कितनी चीजों को ignore करेंगे। आज की बेटियों को यह भी सिखाया जाता है co।lege में कि यह सब कुछ नहीं होता है। यह तो सब वैसे ही जैसे हमारे शरीर में कहीं कोई घाव हो जाता है, कोई भी blood निकलता रहता है, ऐसे ही वह भी हो जाता है। ऐसे ही blood निकलता रहता है, इससे ज्यादा कुछ mind नही करना, यह सिखाया जाता है बच्चियों को। लेकिन यह चीज और वह चीज दोनों बराबर नहीं हैं। समझ आ रहा है? वह जो चीज है, वह जो क्रिया होती है, उसके कारण से जो अशुद्धि होती है, वह अशुद्धि इतनी अधिक होती है कि उन दिनों में धर्म कार्य करने को मना किया जाता है, मन्दिर तक आने को मना किया जाता है। देव-शास्त्र-गुरु का दर्शन करने को मना किया जाता है। वह भी अब धीरे-धीरे यह सब कुछ नहीं होता, ऐसा करने से कुछ नहीं होता, ऐसा सब लोगों को जो सिखाया जा रहा है, यह भी एक गलत तरीका हो रहा है। इससे क्या हो रहा है? आखिर अशुद्धि तो है ही है। मान लो कहीं blood निकल भी निकल रहा हो तो भी हम उस blood को निकलते हुए भी हम blood को क्या शुद्ध मानेंगे या अशुद्ध मानेंगे? अशुद्ध ही तो है। एक बहुत बड़ी चीज होती है, समझने की चीज होती है।

अशुद्धि के अन्दर की गई कोई भी क्रिया अपवित्र होगी

SCAN TO WATCH

शरीर के अन्दर कोई भी चीजें बन रही हैं अगर वे दबी-ढकी हैं तब तक तो कोई बात नहीं है। लेकिन अगर वे चीजें बाहर आ जाती हैं तो क्या होता है? अशुद्धि हो जाती है, वह अपवित्रता हो जाती है। पवित्र स्थानों पर ऐसे अपवित्रता के साथ में कभी भी जाया नहीं जाता। क्या समझ आ रहा है? अगर आपकी नाक है, नाक आपके अन्दर है तब

तक तो ठीक है, बाहर आ गई तो अशुभ लगती है। अशुद्ध हो जाता है कि नहीं हो जाता? हम मन्दिर में आकर के भी नाक भी निकालते हैं क्या? नहीं निकालते न! क्योंकि हम मंदिर की पवित्रता को बनाए रखते हैं। यही logic हमें इस तरीके से समझना चाहिए कि जब हमारे शरीर में इस तरीके की अशुद्धि का एक समय चल रहा है तो उस समय पर हम कोई भी अच्छा काम, पवित्र काम करेंगे तो वह होगा नहीं और वह शुद्ध नहीं कहलायेगा। अशुद्धि के साथ में हम कोई भी क्रिया करेंगे तो वह हमारी पवित्रता की कोटि में आएगी ही नहीं। हम कितना ही अपने आपके सँभालने की कोशिश करें या modernity के नाम पर हम कितना ही कुछ, लोगों की बात को सुने लेकिन यह बात सत्य है कि उन दिनों में हमें थोड़ा संकुचित होकर के रहना चाहिए और उन दिनों में चूँकि शरीर के अन्दर शिथिलता आएगी, अगर ऐसा होगा तो क्या होगा? शिथिलता आएगी। इसलिए वह दिन आराम के दिन होते हैं, उन दिनों में अधिक कोई काम किया ही नहीं जाता है। यहाँ तक कि kitchen का काम भी करने को मना किया जाता है। उसका एक कारण यह भी है कि एक तो आपके शरीर में अशुद्धि का निरंतर स्राव हो रहा है। अब उस समय पर आप भोजन बनाओगे तो अशुद्धि के साथ में भोजन बनाया जा रहा है तो भोजन शुद्ध रहेगा? बताओ आप! सोचने वाली बात है। अब ऐसे ही बोलना पड़ेगा तभी समझ में आएगा। हर कोई संकोच के साथ कुछ बोलता नहीं और जो बोल रहे हैं वह अलग तरीके से बच्चियों को divert करते चले जा रहे हैं। आज जैन बच्चियाँ ही question करने लगी हैं कि हमें ऐसा क्यों करना पड़ता है? क्यों हमारे लिए मना किया जाता है? जबकि हमारी friends तो ऐसा करती नहीं हैं। वे कहती हैं ऐसा कुछ नहीं होता है। उनको ये चीजें समझाओ और फिर अगर ऐसी आदत पड़ गई तो फिर तो आपको कभी भी यह भी नहीं लगेगा कि कभी मुनि महाराज के सामने आने में संकोच लगे या कभी-कभार मान लो आहार भी देने में फिर तुम्हें संकोच लगे। क्यों? क्योंकि आदत ही पड़ गयी है। फिर तो तुम्हारी शुद्धि हो क्या रहेगी। इसलिए यह प्रावधान रखा हुआ है। देखो! कितनी बड़ी बात, दूरदर्शिता की बात है। पहले बोलो मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार जल शुद्ध है। जब काय की शुद्धि ही नहीं है तो हाथ में लिया आहार कैसे शुद्ध हो सकता है।

स्त्रियों में होने वाली अशुद्धि स्वाभाविक क्रिया हैं

ये चीजें एक बहुत अच्छे मनोवैज्ञानिक तरीके की हैं, इन्हें हम समझने की कोशिश करें और इन चीजों को हम इस रूप में स्वीकार करें कि स्त्रियों के शरीर में ये चीजें स्वाभाविक

रूप से होती हैं। अब हम क्या करे होती हैं तो? उसका तरीका बाद में बताया जायेगा। इसलिए तो स्त्रियाँ यह भावना करती हैं कि भगवन्! अभी हमें स्त्री का शरीर मिला है, हमें आगे स्त्री का शरीर न मिले। यह स्त्री पर्याय हमें दुबारा न मिले। अगर आज की modernity के हिसाब से सब कुछ पढ़ाया जाए तब तो स्त्रियों के लिए कभी यह भाव नहीं आएगा, पुरुष बनने का भाव ही नही करेंगी तो उनके लिये कभी स्त्री पर्याय का छेद नहीं होगा। वह तो कहेंगी स्त्रियां सबसे अच्छी होती हैं क्योंकि आज सबसे ज्यादा उन्हीं की demand है। हर कोई उन्हीं के लिए attract होता है। बोले हमारा जीवन ही बढ़िया है, आज तो यह सिखाया जा रहा है न।

धर्म शास्त्र सही ढंग से समझने पर स्त्री पर्याय को पुनः न प्राप्त होने की भावना करनी चाहिए

SCAN TO WATCH

धर्म क्या सिखाता है? इतनी हमारी इस स्त्री पर्याय में कमियाँ हैं, इसके कारण से हम कभी भी अपने चित्त की शुद्धि नहीं कर सकते, ऐसा निर्मल ध्यान नहीं कर सकते। अपने लिए कभी भी धर्म का कार्य निरन्तर नहीं बना सकते। इस कारण से आपको यह सोचना चाहिए कि मनुष्य तो बने लेकिन स्त्री पर्याय मिली तो यह भी हमारा कुछ न कुछ पुण्य में कमी रह गयी। हे भगवन्! हमें भी ऐसी पर्याय मिले जब हम ऐसा बिल्कुल मुनियों की तरह निर्विकल्प होकर, दिगम्बर रूप धारण करके और बिल्कुल सबके बीच में निर्द्वन्द्व होकर के विचरण करें और जहाँ मन करे वहाँ आत्म ध्यान लगाने बैठ जाएँ। ऐसी भावना जब मन में आएगी तो कैसे आएगी? ऐसे ही स्वभाव को पढ़ कर तो आएगी, भावना इसी स्वभाव को पढ़ कर तो आएगी। अगर आज की modernity के हिसाब से आपको पढ़ाया जाएगा तो वह भावना ही क्यों आएगी? आज की बेटियाँ तो यह समझती हैं कि बेटों से हम अच्छे हैं। लड़कियाँ आजकल की इस thinking में आ गई हैं कि उन्हें लगता है कि मेरी value ज्यादा है, मेरे लिए ही सबसे ज्यादा chance हैं। घर में मुझे ही सबसे ज्यादा आगे किया जाता है। job में सबसे ज्यादा हमें आगे बुलाया जाता है। सबसे ज्यादा जो है facilities मिल रही है, लड़कियों के लिए मिल रही है तो सबसे ज्यादा value हमारी है। इसलिए वे कभी यह भाव ही क्यों करेंगी कि हमारा यह शरीर या हमारी यह पर्याय अगले जन्म में न मिले। यह भाव तो तभी आएगा न जब हम धर्म शास्त्र को सही ढंग से समझेंगे। reality इसी का नाम है, इसी को हम कहते हैं- metaphysics.

हम अपनी उस science को समझें जो हमारी physical body के साथ भी जुड़ी हुई है और उसी के अनुसार हमारी जो mentality बनती है, वे दोनों चीजें अगर हम reality के साथ जोड़ेंगे तो इसी को हम metaphysics कहते हैं और इसी को हम ।aw of nature कहते हैं। यह एक प्रकृति का नियम है इसे आपको स्वीकार करना है। अगर आप इसको हटा करके आगे बढ़ोगे तो आपके लिए दिक्कत आएगी।

अशुद्धि के दिनों में बनाया हुआ भोजन अनेक रोगों के संक्रमण का कारण बन जाता है

अनेक तरह से ऐसे रोग होंगे जो केवल इसी कारण से होते हैं कि हम उन दिनों इन चीजों को नहीं ध्यान में रखते हैं। वही रोग संक्रमित होकर के भोजन के माध्यम से पति के अन्दर, बेटों के अन्दर चले जाते हैं। यह बाद में पता पड़ता है जब अचानक से कोई बीमारियाँ आ जाती है। जो स्त्रियाँ अशुद्धि में भोजन बनाती हैं, उनके अन्दर के वह अशुद्धि के कीटाणु संक्रमित होकर के वह भोजन में जाकर के पति के लिये भी बीमारी का कारण बन जाते हैं। इतना प्रभाव बताया जाता है उस अशुद्धि का कि अगर कोई स्त्री आज भी practical कर सकती है कि उन अशुद्धि के दिनों में जैसे पापड़ वगैरह होते हैं, जो पहले वड़ी वगैरह बनाई जाती थी तो वह भी अगर वह देख ले दूर से, उनके पास से खड़ी हो जाएँ उनके colour change हो जाते हैं तो ऐसी चीजें scientifical।y proved हैं। इतना हमारे शरीर की अशुद्धि का, हमारी उस मानसिकता का और उस शिथिलता का प्रभाव इन बाहरी चीजों पर पड़ रहा है तो हमारे भोजन पर क्यों नहीं पड़ेगा?

स्त्री धर्म का पालन करना भी पुण्यार्जन का माध्यम है

SCAN TO WATCH

जिन्हें सर्वज्ञ भगवान की वाणी पर विश्वास होगा, जो सम्यकदृष्टि स्त्रियाँ होगी, मैं अब अंत में इस resu।t पर आ रहा हूँ कि जो स्त्रियाँ सम्यग्दृष्टि होगी या सम्यक्त्व की भावना कर रही होंगी, उनके लिए यह सर्वज्ञ भगवान की वाणी ज्यों की त्यों विश्वास करने में आएगी। कभी भी आज की science पर विश्वास नहीं करेंगी और आज के लोगों की बातों में नहीं आएँगी। उन स्त्रियों के लिए यह भी विश्वास आएगा कि भले ही हमारे शरीर में हमें नहीं महसूस होता, कहाँ सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो रहे हैं लेकिन होते

हैं क्योंकि शास्त्र में लिखा हुआ है। सूक्ष्म मनुष्यों की लब्धि अपर्याप्तक पंचेन्द्रिय मनुष्य होते हैं लेकिन वह एक श्वास के 18 वें भाग में जन्म लेकर मरण को प्राप्त हो जाते हैं। ये सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक जो मनुष्य जैसे निगोदों में होते हैं, एक इंद्रियों में होते हैं, वैसे ही पंचेन्द्रियों में भी होते हैं। उन पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति इन स्त्रियों के शरीर में विशेष रूप से कही गई है। पुरुषों में भी होती है, मना नहीं कर सकते हैं लेकिन इनके शरीर में यह अधिकता से होती है, यह आचार्यों ने कहा है। यह तो सभी जानते हैं कि अगर कोई तीन दिन धर्म का पालन नहीं करते हैं, यह उनका धर्म है, अगर इस धर्म का भी स्त्रियाँ पालन नहीं करें तो वह कभी भी आहार न दे। आहार देने के लिए मुनि महाराज के लिए वही स्त्रियाँ योग्य हैं जो इन तीन-चार दिनों के लिये जो उनका समय आता है, उसमें वह अपने स्त्री धर्म का पालन करे। हमें जो मिला है, हम उस स्त्री धर्म का भी अगर समझदारी से पालन करेंगे तो हमें आगे वह चीज पुण्यवर्धक होगी और वही चीज हमारे लिए एक तरीके से उससे हमें मुक्ति मिलेगी। उस चीज को अगर हम ignore करके, हम अपने मन की करेंगे तो हमें उस चीज से मुक्ति नहीं मिलेगी। उससे भी और गंदी पर्याय मिलेगी, उससे भी और ज्यादा परेशानियाँ हमारे सामने आ जाएँगी। यह एक science है, इसलिए हमेशा अपने स्वभाव को बनाए रखने की कोशिश करो और जो स्वाभाविक रूप से अपने को चीजें मिली हैं, उसे स्वीकार करो कि हाँ! ये कमियाँ हमारे अन्दर हैं और उन कमियों को स्वीकार कर लेने से कोई व्यक्ति कमतर नहीं हो जाता है बल्कि कमियों को स्वीकार करने वाला व्यक्ति अपने आप में और ज्यादा महत्वपूर्ण और ज्यादा confidential हो जाता है। चलो! अब कम से कम उसके अन्दर इतनी तो समझदारी है कि वह अपनी कमी को स्वीकार कर रहा है। आज के लिए इतना ही पर्याप्त है।

प्रवचनसार गाथा - 249

लिंगहि य इत्थीणं थणंतरे णाहिकक्खदेसेसु।
भणिदो सुहुमुप्पादो तासिं किध संजमो होदि॥ २४९॥

अन्वयार्थ- (इत्थीणं) स्त्रियों के (लिंगहि) योनिस्थान में (थणंतरे) स्तनों के मध्य में (णाहिकक्खदेसेसु) नाभि में और कांख में (सुहुमुप्पादो) सूक्ष्म मनुष्य आदि जीवों का उत्पादन (भणिदो) होना कहा है अतः (तासिं) उन स्त्रियों को (संजमो) संयम (किध) कैसे (होदि) हो सकता है।

आचार्य कहते हैं- **'इतथीणं लिंगंहि'** स्त्रियों के लिंग का मतलब कुछ विशेष योनी स्थानों में, **'थणंतरे'** स्तनों के अन्तर में, **'णाहिकक्खदेसेसु'** नाभि स्थान में, काँख स्थान में, **'भणिदो' अर्थात्** कहा गया है, **'सुहुमुप्पदो'** सूक्ष्म उत्पाद यानी जीवों की सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति कही गई है। **'तासिं किध संजमो होदि'** इसलिए उनके अन्दर संयम कैसे हो सकता है? ऐसा यहाँ आचार्य देव का कहना है, उसी को यहाँ आचार्य महाराज ने पद्यानुवाद में लिखा है-

जो नाभि कक्ष कटि में प्रमदा स्तनों में, गुह्यागं में जनमते मरते क्षणों में।
ऐसी दशा जब रही, यह नारि जाति, कैसी भली सकल संयम धार पाती॥

निर्वाण योग्य संयम के लिए शरीर की योग्यता होनी चाहिए

कल भी आपको बताया था कि इस तरह से जो यह स्त्रियों का प्रकरण चल रहा है, उसको हम इन गाथाओं के माध्यम से जो यह हम समझ रहे हैं वह उनके संयम और जो निर्वाण योग्य सयंम है उसकी अपेक्षा से है। इसी को हम इस तरह से भी समझ सकते हैं।

There is said to be the growth of subtle organisms in the female organs of generation, in between their briefs and in the parts of their navel and armpits then how can self control be possible for them.

यानी संयम के लिए शरीर में जो बाधाएँ होती हैं, वे बाधाएँ जब तक रहती हैं तब तक

संयम की साधना भी नहीं होती है। इससे यह सिद्ध होता है कि संयम को धारण करने के लिए और संयम का पालन करने के लिए भी कुछ ऐसे शरीर की आवश्यकता होती है, जिस शरीर की योग्यता कुछ अलग ही हो और जिस योग्यता के माध्यम से उस शरीर में इतनी स्थिरता बने कि वह अपने चित्त को स्थिर कर पाएँ। जिस शरीर में जीवों की उत्पत्ति अधिक है, उस शरीर में संयम को भी पालन करने की क्षमता नहीं होती है और अगर कोई उस संयम को पालन करना भी चाहता है, करता भी है, तो भी वह संयम का घात तो अपने उस शरीर के माध्यम से करता ही रहता है।

स्त्रियों के शरीर में पुरुषों की अपेक्षा जीवों की अधिक उत्पत्ति

स्त्रियों के शरीर में जो ये विशेष जीवों की उत्पत्ति बताई जा रही हैं, इन्हें हम सूक्ष्म जीव यहाँ कह रहे हैं। सूक्ष्म इस sense में हैं कि वह हमें दिखाई नहीं देते। वैसे देखा जाए तो ये जीव सूक्ष्म नहीं होते, ये बादर ही होते हैं क्योंकि जो किसी के आधार से उत्पन्न हो उन्हें बादर जीव ही कहते हैं। अगर ये जीव स्त्री के ही शरीर में उत्पन्न हो रहे हैं, स्त्री के शरीर के आधार से उत्पन्न हो रहे हैं तो ये जीव बादर ही कहलाते हैं, सूक्ष्म जीव नहीं होते। लेकिन व्यवहार की भाषा मे उन्हें सूक्ष्म कहा जाता है क्योंकि वह हमारी पकड़ में नहीं आते, हमारे देखने में नहीं आते। जैसे बहुत छोटे-छोटे जीव कभी-कभार दिख जाते हैं तो हम सहसा बोल पड़ते हैं कि देखो! कितने सूक्ष्म जीव चल रहे हैं। सुना है न! कई बार दादी अम्माएँ बोलती हैं, देखो! कितने सूक्ष्म जीव हैं, सूक्ष्म बोलते हैं, बोलने में क्या आना चाहिए? सूक्ष्म जीव। ये जो सूक्ष्म जीव का उत्पाद यहाँ कहा गया है - ये कौन से सूक्ष्म जीव हैं? आचार्य कहते हैं कि ये ऐसे लब्धि अपर्याप्तक जीव होते हैं जो पंचेन्द्रिय ही होते हैं, संज्ञी भी होते हैं और पंचेन्द्रिय संज्ञी पर्याय को प्राप्त करके भी इनका जीवन एक श्वास के 18 वें भाग में समाप्त हो जाता है, ऐसे इन्हें लब्धि अपर्याप्तक जीव कहा जाता है। इन जीवों की जो उत्पत्ति है, इनका जो भव है, इसी को हम क्षुद्रक भव कहते हैं। क्या बोलते हैं? क्षुद्रक भव। क्षुद्रक भव का मतलब होता है- ऐसा भव, ऐसा संसार जिससे छोटा संसार और किसी जीव का न हो।

क्षुद्र जीवों का संसार श्वास का अठारहवाँ भाग है

आखिर किसी भी जीव का, किसी भी आत्मा का संसार किस बात पर depend करता है? उसकी आयु पर ही depend करता है। हमारा संसार बहुत बड़ा है। आप किस अपेक्षा से बोलते हो? अगर आपको इतना बोलने के लिए भी समय दिया गया है तो ही बोल पा रहे हो कि हमारा संसार बहुत बड़ा है। आप बड़े हो गए, आपकी उम्र 20 वर्ष, 40 वर्ष 60 वर्ष, 80वर्ष गुजर रही है तो आपको लगता है कि हमने इतना बड़ा संसार देख लिया। इतने हमारे पीछे लोग हो गए, इतने हमारे आगे लोग हैं, संसार वस्तुतः जो आप बाहरी देख रहे हैं, वह नहीं है। संसार वह है जो हमारी आयु कर्म के साथ में चल रहा है क्योंकि आपने उतना संसार देखा, जितनी आपकी आयु होगी, आयु ही हमारा संसार है। अगर हम 20 वर्ष तक जिए तो इसका मतलब बीस वर्ष तक का ही हमारा संसार है। हम चालीस वर्ष जिए तो इसका मतलब चालीस वर्ष ही हमारा संसार है। बाकी संसार तो अनादिकाल से चला आ रहा है, अनन्तकाल तक चलता रहेगा। हमारे लिए जितनी आयु मिली है, वही हमारा संसार होता है इसलिए इसे भव कहा जाता है। जिसका भव मतलब जिसकी आयु जितनी छोटी होगी, उसका संसार उतना ही छोटा कहलाएगा। इसलिए जो जीव सबसे कम आयु रखते हैं, उन्हें क्षुद्रक भव वाले जीव कहा जाता है। क्षुद्र भव वाले जीव, इन जीवों की चर्चा आपने कभी छहढाला में पढ़ी होगी **'एक श्वास में अठ-दस बार जन्मयो-मरयो, भरयो दुख बार'**। जब छहढाला में लोगों ने यह पढ़ा तो उसके पढ़ने के बाद में लोगों के दिमाग में आ गया कि यह जो एक श्वास के अठारहवें भाग में जीवों का जन्म-मरण होता है, यह केवल निगोद जीवों का ही होता है। यही समझ में आया न सबको और सबने यही समझा कि ये निगोद जीव ही केवल श्वास के अठारहवें भाग में जन्म-मरण करते हैं। सबके दिमाग में यह ही बैठा रहता है तो उस बात को भी आप और थोड़ा सा अपने ज्ञान में विस्तार ला सकते हैं कि केवल निगोद जीवों में ही श्वास के 18 वें भाग में जन्म-मरण नहीं होता। अन्य भी दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय जीवों में भी श्वास के 18 वें भाग में जन्म-मरण होता है और उनके भी भव को क्षुद्रक भव कहा जाता है और उन जीवों की आयु भी श्वास के 18 वें भाग ही होती है। यह आपकी समझ में आता है। अगर नहीं भी समझ में आया हो तो अब समझने की कोशिश करना और यह जानने की कोशिश करना कि यह जो हमने केवल इतना ही सीख रखा है, वही हमारे लिए यह पर्याप्त नहीं है। अब हमने जो छहढाला पढ़ी थी उससे भी बढ़कर के हमें और ज्ञान चाहिए। अभी एक नई छहढाला आपको पढ़नी पढ़ेगी। क्या सुन रहे? नई छहढाला पढ़नी पढ़ेगी, नहीं तो आप यह ही समझते रहोगे कि श्वास के

अठारहवें भाग में बस एक इन्द्रिय जीव हैं, उनका जन्म-मरण होता रहता है। जब वह नई छहढाला पढ़ोगे तब आपके लिए यह चीज मिलेगी कि वे क्षुद्रक भव वाले जो जीव होते हैं, वे दो इन्द्रिय में भी होते हैं, तीन इन्द्रिय में भी होते हैं, चार इन्द्रिय में भी होते हैं और पंचेन्द्रिय में भी होते हैं। वहाँ नई छहढाला की पहली ढाल में यह सब वर्णन किया हुआ है और उसी को उस ढंग से लिखा हुआ है।

बे ते चउ इन्द्रिय जे जीव विकलेन्द्रिय शंखादि अतीव।
अस्सी साठ और चालीस तिनमें क्षुद्रक भव जिन दीस॥

- नई छहढाला

विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय में लगातार क्षुद्रक भवों की संख्या

समझ आ रहा है? अब नई छहढाला में आपको पढ़ने को मिलेगा! क्या लिखा है? जो दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, जीव होते हैं ये सब विकलेन्द्रिय हैं। शंख आदि ये दो इन्द्रिय जीव कहलाते हैं और इनमें भी क्षुद्रक भव होते हैं, इनके क्षुद्रक भव अगर ये लगातार होते हैं तो कितनी संख्या में होते हैं? वह संख्या बताई जाती है। क्षुद्रक भवों में ही लगातार दो इन्द्रिय के क्षुद्रक भवों में ही मतलब दो इन्द्रिय में ही श्वास के अठारहवें भाग में जन्म करना, फिर मरण करना, फिर जन्म होना, फिर मरण होना, फिर जन्म होना, फिर मरण होना, ऐसा वह जीव कितनी बार लगातार कर सकता है। आचार्य कहते हैं- दो इन्द्रिय जीव अस्सी बार लगातार कर सकता है। तीन इन्द्रिय जीव साठ बार लगातार कर सकता है और चार इन्द्रिय जीव 40 बार लगातार यही क्षुद्रक भवों में जन्म ले सकता है। अगर वह लगातार लेगा तो इतने ही भव उसके अधिक से अधिक होंगे। इसके बाद में उसकी यह continuity break होगी क्योंकि यह तो अपर्याप्तक जीव है, फिर उसके बाद में वह पर्याप्तक जीव बन सकता है। कोई दूसरा इन्द्रिय वाला जीव भी बन सकता है। अधिक से अधिक जो लगातार क्षुद्रक भव होते हैं इन अपर्याप्तक जीवों के वह इतने होते हैं। यह बात तो हो गई दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय जीवों की। अब क्योंकि हम यहाँ पंचेन्द्रिय जीवों की बात कर रहे हैं तो हमें यह भी समझना पड़ेगा कि पंचेन्द्रिय में जो लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य होते हैं, उन जीवों के भी क्षुद्रक भव अगर लगातार होंगे तो कितने होंगे? उसके लिए भी आपको वही छहढाला की आगे की पंक्तियाँ पढ़नी पड़ेगी-

ताते पंचेन्द्रिय पर्याय, दुर्लभ गुण कृतज्ञ ज्यों आये।
पंचेन्द्रिय के हैं चौबीस, क्षुद्रक भव कहते जिन ईश॥

-नई छहढाला

क्या समझ आ रहा है? उन्हीं पंचेन्द्रिय जीवों में अगर लगातार क्षुद्रक भव लेने वाले जीवों की संख्या देखी जाती है तो वह जीव लगातार कितने क्षुद्रक भव बना सकता है? कितने क्षुद्रक भव ग्रहण कर सकता है? आचार्य कहते हैं- वह चौबीस भव ही लगातार ग्रहण कर सकता है। मतलब यह हुआ कि कोई जीव चौबीस की संख्या तक पहुँचे, जरूरी नहीं है लेकिन अगर अधिक से अधिक तक उसके लगातार एक ही स्थान पर बार-बार जन्म मरण हो रहा है, तो वह चौबीस बार ही होगा अन्यथा वह बीच में रुक कर के किसी दूसरे भी जन्म को प्राप्त कर सकता है। लेकिन लगातार करता है तो वह चौबीस बार से अधिक नहीं करता है।

जीवों की उत्पत्ति की व्यवस्था

जीवों की उत्पत्ति की यह व्यवस्था समझे बिना आपको कभी भी संयम की परिपालना करने के लिए, संयम के महत्व के लिए, जो शरीर आवश्यक होता है उसका कभी भी ज्ञान नहीं हो सकता है। इसलिए जरूरी है शरीर को जानना, शरीर में भी कितना बड़ा अन्तर यहाँ बताया जा रहा है। आज का व्यक्ति स्त्री और पुरुष के शरीर मे कोई अन्तर नही देख रहा है लेकिन सर्वज्ञ भगवान की वाणी में कितना बड़ा अन्तर हमें दिखाई दे रहा है। आपके दिमाग में यह प्रश्न हो सकता है कि यह जीव अगर उत्पन्न होते हैं तो हमें दिखाई क्यों नहीं देते हैं? इसका उत्तर यही समझना कि इन जीवों के शरीर की रचना भी उतनी ही सूक्ष्म परमाणुओं से होती है कि वह हमें देखने में नहीं आ पाते और इनकी आयु भी इतनी कम है कि वह कब जन्म लेंगे, कब मरण कर जाएँगे, आपको कभी भी समझ आ ही नहीं पायेगा और उनकी सतत् उत्पत्ति होती रहती है, ये हमें सर्वज्ञ भगवान के द्वारा देखकर के बताया गया। इसलिए हमें सर्वज्ञ वाणी पर विश्वास करना चाहिए। ये सब चीजें बताने की भी microscope की भी क्षमता नहीं है। क्योंकि उस scope में भी क्या होता है? lens ही तो होते हैं, वह भी पत्थर ही तो होता है, कांच ही तो है। कितना घिसोगे? उसकी क्षमता कितनी बढ़ाओगे? वह भी तो एक ।imit के अन्दर ही हम

को हर चीज बता सकता है। वह चीज जो हमारी देखने में नहीं आती है, ऐसी बहुत सी चीजें दुनिया में हैं। जीवों की उत्पत्तियों के स्थान जिन्हें हम योनि स्थान कहते हैं, वह भी दुनिया में ऐसे कितने हैं? अगर उन्हें आप जिनवाणी के अनुसार पढ़ोगे तभी आपके अन्दर कुछ समझ में आएगा कि यह जीव कहाँ-कहाँ से जन्म लेकर के कहाँ-कहाँ उत्पन्न हो जाता है। कितने-कितने इन जीवों की उत्पत्ति के स्थान हैं और आज हम अगर जन्म लिए हैं तो हमारे लिए बहुत बड़ा सौभाग्य है कि हमको आँखें मिली, कान मिला, एक पंचेन्द्रिय मनुष्य की पर्याय मिली। यह कब पता पड़ेगा? जब हम इन जीवों के बारे मे थोड़ा सा विचार करें। आप सुनते हो संसार में हर जीव चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता है, जीवों की उत्पत्ति चौरासी लाख योनियों में होती रहती है और यह सिद्धान्त में बताया गया है। जीवों के उत्पत्ति स्थान को योनि कहते हैं। योनि का मतलब क्या होता है? उत्पत्ति स्थान। जीव कहाँ-कहाँ उत्पन्न हो सकता है? उसके उन उत्पत्ति स्थानों की संख्या भी हर एक पर्याय में अलग-अलग बताई गई है। चौरासी लाख अगर योनियाँ हैं तो उन योनियों की भी counting है- पृथ्वीकायिक जीव, जलकायिक जीव, अग्निकायिक जीव, वायुकायिक जीव। फिर इसके अलावा इतर-निगोद, नित्य-निगोद यह जीव, इसके अलावा जो अन्य वनस्पति कायिक हैं जिन्हें हम प्रत्येक वनस्पतिकायिक कहते हैं, उनके भी योनि स्थान होते हैं और वह भी दस लाख होते हैं और जो पृथ्वीकायिक, जलकायिक आदि के बताए ये सब सात-सात लाख स्थान होते हैं। कितने होते हैं? पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और नित्य निगोद, इतर निगोद? इन सब के जो उत्पत्ति स्थान होते हैं, इनकी जो योनियाँ होती हैं, ये कितनी होती हैं? सबकी सात-सात लाख होती है। अगर आप count करना चाहो तो चौरासी लाख योनियाँ यहाँ count कर सकते हो। समझ आ रहा है? गिनो कितनी ही गई? पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, नित्य निगोद, इतर निगोद। कितनी हो गई? छह। 6 के सात लाख से गुणा करो, 42 लाख हो गए। इसके अलावा जो प्रत्येक वनस्पति कायिक जीव होते हैं, उनकी योनियाँ दस लाख होती हैं। **प्रत्येक वनस्पति का मतलब कि जिस वनस्पति में एक जीव का एक शरीर ही होता है और निगोद में अनन्त जीवों का एक शरीर होता है, यह अन्तर कहा जाता है।** इसके बाद में दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय इन जीवों की दो-दो लाख योनियाँ जानना। कितनी? दो लाख, दो लाख, दो लाख कितने हो गए? छह लाख। गिनते जाओ! बयालीस और दस, बावन और यह छह, कितने हो गए? अट्ठावन, गिनो न डर क्यों रहे हो? अब आते हैं हम पाँच इन्द्रिय तिर्यंच जीवों में तो उनमें पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की चार लाख योनियाँ हैं। कितनी? चार लाख मतलब चार लाख पंचेन्द्रियों के उत्पत्ति स्थान हो सकते हैं। देवों के भी उत्पत्ति स्थान, योनि स्थान चार लाख हैं और नारकियों के भी चार लाख। कितने हो गए? जोड़ते जाओ!

अट्ठावन्न और 4×3= बारह यह हो गए हैं- 70 और मनुष्य के 14 लाख योनि स्थान हैं। जानने की कोशिश तो करो जो हमें कहा गया है, सिखाया गया है, उसको हम थोड़ा समझें तो। मनुष्य के कितने?14 लाख योनि स्थान होते हैं। मतलब उत्पत्ति स्थान चौदह लाख प्रकार के हैं, जहाँ पर मनुष्य होते हैं। इन योनि स्थानों में इन जीवों की जो उत्पत्ति होती है, इन सबके लिए भी ये स्थान इतनी ही variety के होते हैं। ये स्थान भी भगवान के ज्ञान में आए तब हमें बताया गया कि ये चौरासी लाख योनि स्थान हैं, जिन्हें हम कहते रहते हैं- ये चौरासी लाख योनि स्थान मतलब चार गतियों में जितने भी जीव हैं उन सब के मिलाकर के उन जीवों से उत्पन्न होने के स्थान हैं। इसी को जाति कहते हैं। ये योनी स्थान जहाँ-जहाँ होंगे वहीं पर जीव उत्पन्न होंगे। और जो संसार में चार गति में अनन्त जीव हैं वे सब इन्हीं योनि स्थानों में उत्पन्न होते हैं। इतने प्रकार के ये योनि स्थानों का वर्णन है तो हमें अब समझ में आना चाहिए कि यहाँ पर जो कहा जा रहा है कि स्त्रियों के शरीर में कुछ लब्धि अपर्याप्तक जीव जो क्षुद्रक भव वाले जीव होते हैं, सूक्ष्म जीव होते हैं, उनके उस शरीर में उन जीवों की उत्पत्ति अधिक होती है।

सर्वज्ञ की वाणी पर श्रद्धान करने से ही सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति का प्रकरण समझ आएगा

यह विज्ञान आपके विश्वास में तभी आएगा जब आपको जिनवाणी पर विश्वास होगा। आखिर आपको कहीं न कहीं विश्वास तो करना ही पड़ता है। science भी होती है तो science भी कहती है, वह भी कहीं न कहीं लिखती है। किसी किताब में लिखा होता है। उसी किताब की बात सुनकर के हम विश्वास करते हैं। यह भी सर्वज्ञ भगवान की वाणी है, यह भी पुस्तकों में लिखा हुआ है, यह भी शास्त्रों में लिखा हुआ है। हमें इसको सुनकर के ही विश्वास करना होगा। जब यह समझ में आता है कि इस प्रकार से ये जीवों की उत्पत्ति स्त्री के शरीर में होती है, तो हमें यह समझ लेना चाहिए कि स्त्री अपने शरीर से संयम की आराधना क्यों नहीं कर पाती है? समझ आ रहा है? क्योंकि उसका शरीर भी ऐसा है, जो अधिक ज्यादा जीवों को उत्पन्न करता है। उन जीवों का धात भी होगा। जहाँ जीव उत्पन्न होंगे वहाँ घात को भी प्राप्त होंगे। उन जीवों का घात अपने माध्यम से भी स्वयं हो जाता है, दूसरे के माध्यम से भी होता है। जहाँ जीव उत्पन्न हो रहे है वहाँ पर वह उतने ही समय के बाद में मरते रहेंगे। अतः जहाँ जिस शरीर में जितना ज्यादा जीवों की उत्पत्ति का स्थान है, वह शरीर उतना ही ज्यादा अशुद्ध कहलाएगा और वह शरीर उतना ही संयम के अयोग्य कहलाएगा।

स्त्री के शरीर से पुरुष के शरीर की तुलना करना हो तो आप ऐसे समझ सकते हो। आप की तरफ से यह प्रश्न शास्त्रों में उठाया गया है, आप अभी भले ही चुपचाप सुन रहे हो लेकिन आप के मन मे एक प्रश्न जरूर आ रहा होगा कि कि क्या स्त्री के शरीर में ही ये जीव उत्पन्न होते हैं और पुरुष के शरीर में नहीं होते हैं? आचार्य कहते हैं- पुरुष के शरीर में भी होते हैं। काँख आदि जो ये प्रदेश है इनमें जीवों की उत्पत्ति पुरुषों के अन्दर भी होती है और यह जीव कहीं भी उत्पन्न हो सकते हैं। कान के मैल में भी उत्पन्न हो सकते हैं। जहाँ पर ये एक तरीके से हमारे शरीर में जो joint के स्थान होते हैं, उन स्थानों में, गुह्य स्थानों में जो छुपे हुए स्थान होते हैं, उन स्थानों में जीवों की उत्पत्ति होती है। यह शरीर विज्ञान भी समझना चाहिए। आचार्य कहते हैं कि होती तो है लेकिन ये उत्पत्ति स्त्रियों में कई गुना अधिक होती है, पुरुषों में कम होती है। इसके लिए आचार्यों ने एक उदाहरण दिया कि एक के पूरे शरीर में विष व्याप्त है और एक के किसी एक अंग में विष व्याप्त है। एक के पूरे शरीर में विष व्याप्त है और एक के किसी एक अंग में विष व्याप्त है, इतना जैसे अन्तर समझ में आता है वैसे ही स्त्री शरीर में और पुरुष शरीर में अन्तर समझना। यह तो ऐसे इन कर्म भूमि के जीवों के शरीरों की बात कही जा रही है। जहाँ पर ऐसे ये उत्पत्तियाँ निरन्तर होती रहती हैं और जीवों की यह उत्पत्ति जो पंचेन्द्रिय पर्याय के साथ हो रही है, आप अगर देखेंगे तो इसका जैन दर्शन में बहुत अच्छा विभाजन मिलता है। आप सोचते हो सिद्धान्त ग्रंथ में क्या लिखा रहता है? सिद्धान्त ग्रंथ में ऐसे ही सूक्ष्म विषयों की चर्चा होती है। समझ आ रहा है? हाँ! जी तो बोलो तब तो आगे कुछ बताऊँ। इतना समझ आ गया। कितना समझ लिया? आप लोगों ने पहले तो क्षुद्रक भव होते हैं जिनको हम लब्धि अपर्याप्तक जीव कहते हैं और उन क्षुद्रक भवों की संख्या भी आपको समझाई। वह क्षुद्रक भवों में जो आयु होती है, वह कितनी होती है, श्वास के अठारहवें भाग होती है। वह आपने समझ लिया, फिर आपको चौरासी लाख योनियाँ बताई गई।

पंचन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति और वर्गीकरण

ज्यादा over तो नहीं हो रहा। थोड़ा समझने की और कोशिश करो। देखो! इतना अच्छा classification जीवों की उत्पत्ति का हमें आचार्यों ने दिया है कि हम उस classification को जानकर के ही पूरे संसार में कहाँ-कहाँ किस रूप में जीव उत्पन्न हो सकते हैं, हम यह ज्ञान कर सकते हैं अन्यत्र कहीं यह वर्णन नहीं मिलेगा। समझ आ रहा है? अब यह वर्णन इतना विशिष्ट है कि अगर आपको कभी यह समझना हो, यह सीखना हो कि कैसे पंचेन्द्रिय

जीवों की उत्पत्ति कहाँ-कहाँ होती है? असंख्याता संख्यात पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। कितने? यह एक संख्या है, असंख्याता-संख्यात और एक पंचेन्द्रिय जीव कहाँ-कहाँ मिलेंगे? कहाँ-कहाँ उत्पन्न होंगे? आचार्यों ने इसके लिए भी सब कुछ बता रखा है। बहुत बड़ा जीव विज्ञान है। यह विज्ञान हमें इस निमित्त से थोड़ा सा सुनने की कोशिश करना चाहिए और इसके अलावा आपको कहीं जीव नहीं मिलेंगे। पंचेन्द्रिय जीव कहाँ मिलेंगे? सबसे पहले आचार्य कहते हैं- पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति होती है- **'अण्डाइया'** '**अण्डाइया' मतलब** अण्डजों में, अंडों में। कहाँ होती है पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पति? अंडो में। अंडों से जो जीव बनते हैं, वे पंचेन्द्रिय होते हैं। वे अंडे चाहे सर्प के हो, चाहे मुर्गी के हो, चाहे किसी भी और समुद्री जीव के हो। अंडों से जिनकी उत्पत्ति होती है, वे पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। आप भ्रम में नहीं पड़ना कि चींटी के भी अंडे होते है। उन चींटी के अण्डों से कभी चींटियाँ उत्पन्न नहीं होती हैं। कभी भी देख लेना। वे कुछ भी चीजें अपने मुँह में लेकर के दौड़ती रखती है, भागती रहती है। कहीं पर भी बिलों में उनके अंडे हो जाते हैं परन्तु अंडे से उत्पत्ति नहीं होती है, वह कुछ भी हो सकता है। उसे पंचेन्द्रिय नहीं मानना, चींटियों के वह अंडे नहीं होते हैं। वह कुछ और उन चीटियों का इकट्ठा किया हुआ द्रव्य होता है, जिसे हम अंडा मान लेते हैं। अंडों से जो जीवों की उत्पत्ति होगी, वे पंचेन्द्रिय जीव होंगे। जो कुछ भी मुर्गी आदि के अंडे होते हैं उनसे जो जीव उत्पन्न होते हैं, वे पंचेन्द्रिय जीव होते हैं। अंडों से उत्पन होने वाले जीव पंचेन्द्रिय जीव हो गए। अंडाइया, पोदाइया, ये प्राकृत भाषा के शब्द हैं। पोत से उत्पन होने वाले जीव, पोत का मतलब होता है कि कुछ ऐसे जानवर होते है जो जन्म लेने के बाद तुरन्त दौड़ने लग जाते हैं। जैसे- हिरण के बच्चे, शेर के बच्चे होते हैं, इनको बोलते हैं- **पोत** जीव। ये सब पंचेन्द्रिय होते हैं, अंडाइया, पोताइया, जराइया। फिर होते हैं- जरायुज जीव। **जरा** का मतलब होता है कि जैसे आपने मनुष्य के लिए देखा होगा, गाय, भैसों के लिए देखा होगा उनके जो जीव उत्पन्न होते हैं, उनके ऊपर एक जरा लिपटी हुई रहती है। एक जार लिपटी हुई होती है। एक प्रावरण होता है, एक खाल होती है। उस खाल को हटाया जाता है। वह जीव जन्म ले कर उसके साथ में निकलता है और उसी के साथ में उसकी उत्पत्ति होती है। उसे बोलते हैं- **'जराइया'** वह भी कौन सा होगा? वह पंचेन्द्रिय जीव होगा। **जराइज** में और **पोत** में अन्तर है। जरा में जो उत्पन्न होगा वह निकलते से भाग नहीं पाएगा। वह निकलने के बाद, जन्म लेने के बाद में कुछ दिन उसको लगेंगे तब वह धीरे-धीरे खड़ा होगा, धीरे धीरे वह अपनी activity करेगा और जो पोत जन्म वाला होगा, वह जन्म लेने के तुरन्त बाद दौड़ने लग जाएगा। ये पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति के स्थान बताये हैं। अंडाइया, पोताइया, जराइया, रसाइया। रसों में भी जीव उत्पन्न होते हैं, पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति जो रस, अब रस कौन

से हैं? जो भी रस आपके लिए समझ में आते हैं, उन रसों में जैसे मान लो अगर फलों के भी रस हैं वे विकृत हो जाते हैं, अमर्यादित हो जाते हैं, उनमें भी पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। समझ आ रहा है? अगर आपने अंगूर के रस को सड़ा लिया, समझ लो उसमें पंचेन्द्रिय जीव उत्पन्न हो गए। शराब तो बाद में बनेगी, पहले उसमे पंचेन्द्रिय जीवो की हिंसा होगी, वे मरेंगे उसके बिना वह बन नही सकता। कोई भी प्रकार के और भी जो रस हैं वह विकृत हो जाएँगे तो उसमें पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति ही जाएगी। उस रस में हम यह भी ले सकते है, फलों के रस के अलावा दुग्ध रस वगैरह भी होते हैं। जैसे दूध है, उसकी भी मर्यादा के बाहर अगर दूध हो जाएगा, जब से वह गाय के थन से निकला और निकलने के बाद में, अगर 48 मिनट के अन्दर अगर उसको गर्म कर लिया जाता है तब तो वह प्रासुक हो जायेगा। 24 घण्टे तक आपके काम मे आ जायेगा और अगर वह 48 मिनट से अधिक का हो गया तो उसमें तुरन्त पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति होने लगेगी। तजजाती ३० उसको निगोद बोलते है, इसलिए यह ध्यान में रखना चाहिए शुद्धि का दूध, शुद्धि का दूध-आप बोलते हो इसका मतलब शुद्धि का दूध। यह विज्ञान होता है कि केवल शुद्धि का मतलब कपड़े ही शुद्ध और शुद्ध वस्त्रों में निकलवाने का नाम ही शुद्ध नहीं होता। हम जब से दूध निकलवा के ला रहे हैं और जब तक वह हमारे घर तक आ रहा है, उसके बीच में पौन घंटे से ज्यादा का time नहीं होना चाहिए। अन्यथा उसमें जीवों की उत्पत्ति हो जाएगी फिर आपको हिंसा का दोष लगेगा और वह दूध भी अशुद्ध हो जाएगा। वह दूध उस time के बीच में गर्म हो जाना चाहिए तब वह शुद्ध दूध कहलाता है। यह कहलाते हैं- **रसाइया।** कितने प्रकार के जीव हो गए? अंडाइया, पोताइया, याद कर लो कुछ तो याद कर लो जैनी लोगों, कुछ भी अपने धर्म की बात याद नहीं करते, दुनिया की science याद रखते हो। इतनी बड़ी science भगवान सर्वज्ञ देव ने बताई और कुछ भी याद नहीं करते हैं। यह शब्द याद रखो अंडाइया! बोलो! अंडाइया, पोताइया, जराइया, रसाइया कितना simple है। इसमें याद करने में क्या कठिन है? कितनी simple भाषा है? इसको प्राकृत भाषा में हमें सूत्र दिए गए। गणधर परमेष्ठी के द्वारा रचित ये सूत्र हैं जो हम प्रतिक्रमण पाठ में साधु पढ़ा करते हैं। अब इसके आगे 'संसेदिमा' पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति और कहाँ होगी? स्वेद में, स्वेद बोलते हैं पसीने को, हमारे शरीर में पसीना मरता है। पसीना अधिक उत्पन्न होता है और वहाँ पर भी उन स्थानों पर भी पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति हो जाती है।

शरीर की अशुद्धि का ज्ञान होने पर ही शरीर से विरक्ति होगी

अब समझ लो कि अपने शरीर कितना अशुद्ध है। जिस शरीर को तुम लिए-लिए फिरते हो और जिस शरीर के लिए दिन रात मेहनत करते हो और जिस शरीर के लिए मरते हो उन शरीर की स्थिति देखो क्या है? यह जानना इसलिए भी जरूरी है कि जब तक यह नहीं जानोगे तब तक आपके लिए कभी भी शरीर से विरक्ति नहीं होगी। पूछते हो न शरीर से वैराग्य क्यों नहीं होता है? इसलिए नहीं होता क्योंकि आप उस शरीर का जरूरत से ज्यादा आदर करते हो, शरीर को जरूरत से ज्यादा अपने लिए हितकारी मानते हो लेकिन इस शरीर में ऐसा कुछ भी नहीं है, जिसके लिए यह आदर करने योग्य हो। क्या समझ आ रहा है? इस शरीर में इतना भीतर, ये तो बाहर की गंदगी बताई जा रही है, ये पसीना तो बाहर की गदंगी है, भीतर की गंदगी की तो अभी बात करेंगे तब तो आप उठकर चले जाओगे। सुन ही नहीं पाओगे। यह तो बाहर की गन्दगी है, इसलिए इस शरीर की उपेक्षा की जाती है। इसलिए जो विवेकी लोग होते हैं, शरीर का आदर नहीं करते हैं। इस शरीर से इसलिए कहा जाता है।

तन मिला तो तप करो, करो कर्म का नाश।
रवि शशि से भी अधिक है तुममें दिव्य प्रकाश॥

क्यों कहा गया? तन मिला तो तप करो, करो कर्म का नाश, रवि-शशि से भी अधिक है तुममें दिव्य प्रकाश। रवि-शशि का मतलब सूरज-चंद्रमा से भी ज्यादा light आपके अन्दर है क्योंकि उस light में भी जो चीजें नहीं दिखती हैं वे चीजें आपके आत्मा के ज्ञान में दिखेंगी। ये जो चीजें हम आपको दिखा रहे हैं, बता रहे हैं, ये किसमें दिख रही हैं? sun light में कि moon light में? ये जीव कहाँ दिखेंगे, यह तो आत्मा के ज्ञान प्रकाश में ही दिखेंगे और वह आत्मा का ज्ञान प्रकाश कैसे उत्पन्न होगा? इस शरीर की चाकरी करने से नहीं होगा, इस शरीर के पीछे मरने से नहीं होगा। इस शरीर को छोड़कर के आत्मा के ज्ञान के साथ में चलने से और इस शरीर से तप करके आत्मा को शुद्ध बनाने से होगा। इसलिए आचार्य कहते हैं कि इस शरीर की reality को तो जानो। हर चीज की reality जानने की कोशिश करते हो तो यह शरीर की भी reality जानो। तो 'संसेदिमा' मतलब हमारे शरीर में ऐसे पंचेन्द्रिय जीव हमारे पसीने में उत्पन्न होते रहते हैं, मरते रहते हैं। आप कहोगे महाराज हम क्या करें? कुछ नहीं करो, हमारे लिए क्या इनका पाप लगेगा? पाप तो लगेगा। हम

मार नहीं रहे हैं तो क्यों लगेगा? क्योंकि आपने वैसी ही चीज अपने लिए प्राप्त की है, जिस चीज के माध्यम से निरन्तर आपको पाप का बंध होना है। जैसे हम कभी कोई भी जैसे मान लो हमने electric connection ले लिया। अब जहाँ से connection लिया है, तो हमें उसके अनुसार कुछ न कुछ charge, कुछ न कुछ देना ही पड़ेगा।

औदारिक शरीर में निरंतर जीवों की उत्पत्ति और मरण कर्म बंध का कारण हैं

ऐसे ही जो हमें जो यह औदारिक शरीर मिला है, इसमें जो जीवों की उत्पत्ति होगी, उनका मरण होगा, उसका भी पाप का बन्ध आपको होगा, आप बच नहीं पाओगे। वह बन्ध से आप तभी बच पाओगे जब आप अपने अन्दर उससे राग भाव नहीं करोगे। शरीर मेरा नहीं, मेरा शरीर से ममत्व नहीं। इस भाव में बैठकर के जितनी देर तक आप शरीर से राग से मुक्त रहोगे उतनी देर तक आपका कर्मबंध रुकेगा। नहीं तो फिर जैसे ही आपका connection शरीर से हुआ, आपके लिए कर्म का बंध पुन: होने लगा। क्योंकि आपने ऐसी ही factory का product लिया है, जिसके माध्यम से उस शरीर में निरंतर हिंसा हो रही है और उस हिंसा के भागीदार आप भी हो क्योंकि आपने इसी प्रकार का शरीर अपने लिए प्राप्त किया है। आचार्य कहते हैं- इस शरीर में देखो यह जो प्रदेश बताए गए हैं- स्थान! इनमें से उत्पत्ति हो ही रही है लेकिन जब पसीना वगैरह आता है तो उसमें भी जीवों की उत्पत्ति होने लग जाती है। आप लोग क्या करते हो? कभी सोचते हो पसीने में भी जीवों की उत्पत्ति हो सकती है। कहाँ-कहाँ पर आपके शरीर में पसीना आता है, कहाँ-कहाँ पर हाथ लग जाता है और वे जीव मर जाते हैं और उसके बावजूद भी हम कभी यह ख्याल नहीं कर पाते हैं कि यहाँ पर हमारे हाथ लगने से जीव मर गए होंगे। हाथ लगने से तो मरेंगे ही, बिना हाथ लगाए भी वह जीव मरते हैं और उस पसीने की गन्दगी को हम गंदगी नहीं समझते। हाथों में हम पट्टा बांध करके रखते हैं, पट्टे में कितनी पसीना आता रहता है, पूरे शरीर में पसीना आएगा, उसमें भी आयेगा कि नहीं आएगा पसीना? वहाँ पर जीव उत्पन्न होंगे कि नहीं होंगे? हमने अलग से अपने शरीर में जीवों की उत्पत्ति का एक और योनि स्थान बना लिया। एक तो natural जितना था, था ही। कान में, आँख में, कांख में, जहाँ जीव उत्पन्न होते थे, वे तो हैं ही natural। उनका हम कुछ कर नहीं सकते। अब अगर हमने मान लो कोई ऐसा गले में पट्टा बांध लिया कि हाथ में पट्टा बांध लिया या कोई चीजें धागा वगैरह, हमने permanent चिपका लिया तो अब क्या होगा? उसमें पसीना भी आएगा, ऊपर का भी जो उसमें po।।ution का मैल होता है, वह भी उसमें जुड़ेगा और सब प्रकार से उसमें जीव की उत्पत्ति होती रहेगी।

इसे बोलते हैं- संसेदिमा मतलब पसीने आदि में उत्पन्न होने वाले जीव। ये पंचेन्द्रिय जीव होंगे मतलब हमने अपने शरीर में जीवों की उत्पत्ति का एक और योनि स्थान बना लिया। आप को उस फीते को बांधने का पुण्य क्या लगेगा यह आप जानो। लेकिन इस ग्रन्थ के अनुसार यह आप समझ लो आपको पाप लगना शुरू हो गया।

मुनि महाराज की आहार चर्या के समय काय शुद्धि का विशेष ध्यान रखा जाता है

इसलिए पसीना आ जाना, पसीने के हाथ से खाने-पीने को चीजें छू लेना, इसे भी गन्दगी माना जाता है। यह भी शरीर का ऊपरी बहने वाला मल होता है। इसलिए जब भी कभी खाने-पीने की चीजों के साथ में सावधानी रखी जाती है, तो यह रखी जाती है कि हमारे पसीने के हाथ कभी भी खाने-पीने की चीजों से न लगे। आहार देते समय ये विशेष सावधानियाँ रखा करो। गर्मी का समय आने वाला है, अब लोगों के पसीने आने शुरू हो चुके हैं, ध्यान रखो। यह हाथ-पैर कहीं भी लगाने की आदत अपने तो हाथ कहीं भी चलाने की आदत है, कोई अपने मुँह को तो समझता ही नही कि मेरा मुँह गंदा है। कहीं भी हाथ लगेगा, कहीं भी ऐसे कर लेगा, कहीं भी मुँह पोंछ लेगा, पता ही नही पड़ेगा, उसको पता ही नही होगा और खड़ा हो जायेगा, महाराज! मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय की शुद्धि आहार जल शुद्ध है। समझो! contro। करो! अगर महाराज संयम धारण कर रहे हैं और संयमी को आहार दे रहे हो तो आपके अन्दर भी इतना संयम आना चाहिए। संयम का मतलब ही क्या है? contro।।ing of our mind, Contro।।ing of our hands. contro।।ing of our activities जो भी हम क्रिया कर रहे हैं, उसकी contro।।ing होने का नाम ही संयम है। हम इस contro।।ing को कब सीखेंगे? जब हम महाराज के सामने हो, उतने समय के लिए तो हम इतनी contro।।ing रखे अपने ऊपर कि हमें अपने हाथ-पैर कहाँ चलाना? कैसे किसको छूना? यह भी ध्यान में रखना होता है। एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के शरीर की भी छू लेता है, भैया! उसने हाथ लगा दिया। आप आहार दे लो, आप आहार दे लो उसने उसकी बांह मे हाथ लगा दिया और उसकी बांह में पसीना आ रहा है। आप देख लो सबकी बांह में पसीना आ रहा होगा और उसी हाथ से उसने ग्रास उठाकर के पकड़ लिया। अब बताओ वह ग्रास शुद्ध रहा कि अशुद्ध रहा? ये कुछ चीजें ध्यान रखो। जिन हाथों से आपको कोई भी सामग्री उठानी है, उस हाथ से आप किसी को छुओ मत, आगे-आगे मत करो। केवल हुँ, हाँ से काम चलाओ, बोलो भी मत। हाथ से

उसको आगे मत करो, चल भैया! तू भी आहार दे ले, तू भी आहार दे ले, तूने उसकी पीठ में हाथ लगाया, उसकी पीठ में पसीना आ रहा था। छोटा सा कमरा रहता है, बीस लोग उसमें ठस गए। नहीं पसीना आना होगा तो वैसे भी आ जाएगा। अब उसमें जब हम एक दूसरे को हाथ लगा रहे हैं, चल तू आहार दे ले, आहार दे ले, अब तू आहार तो दे ले लेकिन तेरे हाथ तो देख ले। अब तू ही इसको हाथ देना है, तेरे हाथ तो शुद्ध बचे ही नहीं। अब किस-किससे बोलूँ हूँ, हूँ, हूँ! अब क्या करें हूँ हूँ? अब महाराज! इसके अलावा क्या कर सकते हैं? अगर उससे कहते हैं- जा बाहर जा तो वह समझेगा महाराज ने हमको चौके से ही बाहर निकल दिया। अब उसकी समझ में तो आना चाहिए कि महाराज! क्या कह रहे हैं? हाथ धोकर के आ जा, तूझे पता नहीं है, तूने कहाँ हाथ touch कर दिया? ये बातें समझदारी की होनी चाहिए और यह समझ अब आप लोगों के अन्दर भी आ जानी चाहिए। इसलिए भी आ जानी चाहिए कि क्योंकि आप लोगों को पसीने आएँगे महाराज को आहार देने में क्योंकि महाराज A.C में आहार नहीं लेते हैं। इसलिए आपको इस सावधानी के साथ में आहार देना है तो यह क्यों देना? क्योंकि इससे भी हमारे लिए अशुद्धि होती है और स्वेद में भी पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति हो सकती है। आपने उस स्थान पर हाथ लगा दिया, वहाँ पंचेन्द्रिय जीव भी हो सकता है। वह आपके हाथ में भी आ सकता है और वहाँ पर भी मरण को प्राप्त हो सकता है। इसलिए अपने हाथों को सबसे ज्यादा contro। रखा करो, जब आप आहार देते हो।

जीवों की उत्पत्ति के ज्ञान से सूक्ष्म जीवों की और पंचन्द्रिय जीव की भी रक्षा हो जाती है

दीवारों पर हाथ लगाना, दरवाजों पर हाथ लगाना, किसी भी अशुद्ध कपड़ों को छू लेना। इन सब चीजों से इसलिए बचा जाता है क्योंकि यह जैन science सिखाती है कि वह जो virus है, वह कभी भी आपके हाथों में आ जाएँगे। यह transformation of virus इसी तरीके से हो जाता है और जो कीटाणुओं का संक्रमण हो गया, वह आपके भोजन में गया तो वह आपके लिए बीमारी का कारण बनेगा। इसलिए यह जैन science छुआछूत की science नहीं है। यह जैन science आत्म रक्षा की science है कि इसके माध्यम से आप उन जीवों की भी रक्षा करो और अपने पंचेन्द्रिय जीव की भी रक्षा करो। नहीं तो संक्रमण की बीमारियाँ हो जायेंगी, समय से पहले मरोगे। रोग न हो इसलिए ये सुरक्षाएँ रखना जरूरी है। ये संसेदिमा, ये पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति इस स्वेद में होती है, यह हमेशा ध्यान रखो।

सम्मूर्च्छन जीव पंचेन्द्रिय भी होते हैं

इसके अलावा **'सम्मुछिमा'** जीव! क्या बोलते हैं? **'सम्मुछिमा'** का मतलब सम्मूर्छन जीव, ऐसे जीव जिन्हें उत्पन्न होने के लिए केवल बाहरी वातावरण की जरूरत है, किसी उत्पत्ति स्थान विशेष जरूरत नहीं है, किसी condition की जरूरत नहीं है। वह कहीं पर भी उत्पन्न हो सकते हैं, उन्हें सम्मूर्च्छन जीव कहते हैं। वे जीव जहाँ उत्पन्न होंगे वहाँ पर अपना शरीर खुद बना लेंगे। खुद वहाँ पर अपनी पुद्गल की जो अणुओं की वर्गणाएँ होती हैं, उसको ग्रहण कर लेंगे वे जीव उत्पन्न हो जाएँगे। जितने भी ये मच्छर होते हैं, चींटी-चींटे होते हैं, कीड़े-मकोड़े ये सम्मूर्छन जीव कहलाते हैं। इन्हें हमें उत्पन्न नहीं करना पड़ता है। अपने आप ही उत्पन्न हो जाते हैं। कहाँ से आ गए? कहाँ से उत्पन्न हो गए? आप कितना भी खोज लो, science को challenge है। कोई भी science इनकी उत्पत्ति का कारण नहीं बता सकते। ये सम्मूर्च्छन जीव है क्योंकि जीव वहाँ आया, वहाँ पर रुकेगा, उसके आस-पास जो पुद्गल वर्गणाऐं होंगी उसको इकट्ठा करेगा। उससे उस जीव का शरीर बनेगा और उसकी उत्पत्ति हो जाएगी। जैसे ही चलेगा, बाहर आएगा आपको दिखाई देने लगेगा। इसको क्या बोलते हैं? सम्मूर्च्छन जीव। ऐसे स्थान ध्यान रखो जहाँ पर सम्मूर्च्छन जीवों की उत्पत्ति न हो जाए। आप कहीं पर भी खुला हुआ कुछ भी सामान छोड़ दोगे, वहाँ पर भी अपने आप आकर के जीव उत्पन्न हो जाएगा और जीव वहाँ आकर के चलने-फिरने लग जाएगा। चींटी, चींटे, मक्खी, मच्छर अपने आप उत्पन्न हो जाते हैं। किसी भी कमरे को आप कितना भी प्रासुक कर लो, अगर उसमें, उस कमरे में, उस जीव की उत्पत्ति के योग्य अगर वातावरण बना हुआ है, तो वह अपने आप उसमें वह मच्छर उत्पन्न हो जायेगा। मच्छर अपने-आप भी कमरे के अन्दर उत्पन्न हो जाता है। अगर उसके योग्य temperature उसको मिल गया तो वह उसमें उत्पन्न हो जाएगा। इसलिए जहाँ जीव नहीं होते वहाँ भी उत्पन्न हो जाते हैं। उन जीवों को क्या बोलते हैं? सम्मूर्च्छन जीव। यह समझने की कोशिश करो! सम्मूर्च्छन जीव जो सम्मूर्च्छन जन्म से उत्पन्न होते हैं। कितने हो गए ये? सब कौन से जीव हैं? पंचेन्द्रिय भी सम्मूर्छन जन्म वाले होते हैं। यह नहीं समझना कि जितने भी सम्मूर्छन जीव होते हैं, सब पंचेन्द्रिय होते हैं। यह बताया गया कि पंचेन्द्रिय जीव भी सम्मूर्छन जन्म वाले होते हैं तो पंचेन्द्रिय में सम्मूर्छन जीव भी आते हैं तो यह नाभि में, काँख आदि में उत्पन्न होते हैं, ये सम्मूर्छन जीव ही होते हैं। यह सभी पंचेन्द्रिय जीव होते हैं जो अपने आप उस स्थान पर उत्पन्न हो करके अपना शरीर बना लेते है।

पाषाण के अन्दर भी पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति होती है

इसके अलावा एक और जीव होते हैं जिन्हें कहा जाता है- **'उपभेदिमा'** क्या बोलते हैं? बोलने में नहीं आ रहा! **उपभेदिमा।** उपभेदिमा का मतलब होता है- किसी भी स्थान से फोड़ करके वह जीव उत्पन्न हो करके निकल के आ जाना। जैसे कि वैसे वे जीव दिखाई नहीं देंगे, उस स्थान के अन्दर रहेंगे। लेकिन जब आप उस स्थान को तोड़ दोगे तो उसमें से वह जीव प्रकट हो जाएगा। उपभेद हो करके, भेद करने से वह उत्पन्न हो करके बाहर निकल के आएगा। उसको बोलते हैं- उपभेदिमा जीव। अक्सर ये जीव कहाँ उत्पन्न होते हैं? कई ऐसे पाषाण होते हैं- पत्थर, जिनके अन्दर ऐसे पंचेन्द्रिय जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जिसमें पाषाण के अन्दर भी पानी होता है और उसमें ये जीव उत्पन्न हो जाते हैं। एक घटना सुनने में आती है। एक राजा ने एक शिल्पकार को मूर्ति बनाने के लिए कहा। वह शिल्पकार अपने समय का बहुत अच्छा शिल्पकार था और उसका बहुत अच्छा नाम था। उसने बहुत अच्छी मूर्ति बना करके राजा को समर्पित की। मूर्ति बनने के बाद में राजा ने कहा, अपने राज्य में ऐलान करवाया कि इसी के जैसी कोई दूसरी मूर्ति बनाकर के दिखाए तो हम उस शिल्पकार को भी इसी की तरह पुरस्कार देंगे। राज्य में घोषणा हुई और दूसरे शिल्पकार भी आ गए और वह शिल्पकार ने भी समय माँगा कि हमें दो महीने का समय दो, बिल्कुल ऐसी ही, इससे भी अच्छी मूर्ति बनाकर के आपको देंगे और वह मूर्ति बनाकर के दो महीने के बाद लेकर के आया। राजा के सामने रखी गयी। जो पहले वाला शिल्पकार था उसको भी बुलाया गया और उससे कहा गया कि देखो भाई! तुम्हारे जैसी कलाकारी करने वाले और भी लोग हैं, हमारे राज्य में और ऐसा शिल्प बनाने वाले दूसरे लोग भी हमारे राज्य में है हमें इस बात की खुशी है। वह शिल्पकार कहता है- महाराज! लोग तो आपके राज्य में बहुत सारे होंगे, शिल्पकार भी बहुत से होंगे लेकिन मेरे जैसा कोई नहीं। वह कहता है- ऐसा क्यों? जैसी आपने मूर्ति बनाई है, वैसी ही इसने भी बनाकर के दी है। महाराज बाहर से तो मूर्ति एक जैसी लग रही है, बाहर से तो मूर्ति एक जैसी है लेकिन मूर्ति सदोष है, निर्दोष नहीं है। आप किसी भी अच्छे प्रतिष्ठाचार्य को बुलाकर के देख लो और किसी भी और अच्छे वास्तु शास्त्री होते हैं, उनको बुलाकर के पूछ लो। इस मूर्ति में दोष है। अगर कोई अच्छा जानकार होगा तो बताएगा। उपर से colour, आकृति एक जैसा हो जाने से मूर्तिकार नहीं बन जाता है। उसको यह ज्ञान होना चाहिए कि मूर्ति किस चीज से बना रहे हैं और वह वस्तु भी शुद्ध है कि नहीं है। वह राजा पूछता है- ऐसी

क्या बात है, जो आप इस मूर्ति को सदोष कह रहे हो। इसमें क्या अशुद्धि हो गई? वह राजा से कहता है कि आप अपने किसी भी मंत्री को बुलाकर के, मैं जिस स्थान को बता रहा हूँ उस स्थान पर छैनी लगवाओ। राजा के सामने, उसके कहने पर उसके इस उदर के स्थान पर जो मूर्ति थी, वहाँ पर छैनी मारी गई और जब छैनी मारी तो वहाँ से तुरन्त ही फूंट करके एक मेंढक निकल कर बाहर आया और वहाँ उस स्थान पर बहुत पानी भरा हुआ था। यह जब देखा गया तब राजा ने कहा हाँ! वास्तव में अब मानना पड़ेगा शिल्पकार तो बहुत सारे हो सकते हैं लेकिन तुम्हारे जैसा शिल्पकार कोई भी नहीं है। दूर-दूर तक, अन्दर तक चीजें देखने की जो क्षमता होती है, जो ज्ञान होता है उसी के माध्यम से ये कलाकारियाँ चलती हैं। इसको बोलते हैं - **उपभेदिमा**, उसमें उत्पन्न हो गए जीव। जब फोड़ोगे तब बाहर निकलकर आ जायगा ऐसे जीवों को कहा जाता है- **उपभेदिमा।**

जैन दर्शन में प्रतिपादित जीवों की खोज विज्ञान के पास भी नहीं है

यह सब ज्ञान हमें पूर्व आचार्यों ने दिया हुआ है लेकिन हमारा विश्वास बिल्कुल भी उनके ऊपर जमता नहीं है। क्या सुन रहे हो? वह क्या science जाने। scientist में नाम आता है तो newton का आएगा, Einstein का आएगा। समझ आ रहा है? Galileo का आएगा लेकिन कभी भी आप देखोगे इन जैन आचार्यों से बढ़कर के scientist आज भी नहीं है और यह challenge के साथ कहा जा सकता है कि जो science जैन दर्शन के अन्दर बताई गई है, वह science आज तक किसी ने खोज भी नहीं पाई है। इतने भेद ये सब पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति के स्थान बताए जा रहे हैं, गणधर परमेष्ठियों के द्वारा लिखे सूत्रों को हम आपको बता रहे हैं। कितने पढ़ लिए आपने? फिर से याद कर लो। सबसे शुरू से, कहाँ से शुरू किया था? अंडाइया बोलो! बोलो बार-बार बोलो! गणधर परमेष्ठी के सूत्र हैं, बोलोगे तो पुण्य का बंध होगा, ज्ञान का क्षयोपशम बढ़ेगा। **अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुछिमा, उपभोदिमा** और एक अन्त में **उववादिमा। उववादिमा** का मतलब उपपाद जन्म वाले। जिस किसी का भी उपपाद जन्म होगा वह सब पंचेन्द्रिय जीव होंगे। जो देवलोक होते हैं, नारकी लोक होते हैं, इनका जन्म उपपाद जन्म कहलाता है और इन जीवों को भी पंचेन्द्रिय जीव कहा जाता है। यह भी पंचेन्द्रिय होते हैं। पंचेन्द्रिय जीव इतने-इतने स्थानों पर उत्पन्न हो सकते हैं।

जीव विज्ञान के बड़े बड़े शास्त्र आज भी उपलब्ध है जिनका स्वाध्याय करना

चाहिए

एक सूत्रों के माध्यम से हम पूरे संसार में कहाँ-कहाँ पंचेन्द्रिय जीव उत्पन्न हो सकते हैं, उसका ज्ञान कर सकते हैं। इतना बड़ा हमारे पास में computer है। search करो पंचेन्द्रिय जीव कहाँ-कहाँ हैं? बताओ! कौन से computer में आ जायेगा? किसी computer में नहीं आएगा। इसमें निकालेंगे तो आपके लिए निकल कर आएगा। पंचेन्द्रिय जीवों की उत्पत्ति के स्थान कहाँ-कहाँ हैं? यह ।ist बना कर के दे दी। आपको समझ आ रहा है इसी में सब वे योनियाँ शामिल हो जाएँगी। चौदह लाख, चार लाख अब पंचेन्द्रिय जीवों की जो योनियाँ हैं, वह सब इन्हीं जन्मों में शामिल हो जाएँगी। इतने तरह का विज्ञान है, इसी को कहा जाता है- जीव विज्ञान। इस जीव विज्ञान को समझाने वाले शास्त्र हैं, जिन्हें कहते हैं- जीवकाण्ड। जीवकाण्ड का मतलब जिसमें जीवों का ही सब काण्ड है। जैसे आप लोग काण्ड बोलते है न? वह काण्ड तो अलग sense में होता है। काण्ड मतलब होता है- किसी भी एक चीज को जब हम कहीं पर भी इकठ्ठा कर के लेते हैं तो उसे हम काण्ड कहते हैं। खण्ड जिसको हम बोलते हैं, vo।ume जिसको हम बोलते हैं, उसको हम काण्ड कहते हैं। जीवकाण्ड, गोम्मटसार जीवकाण्ड नाम सुना है। उसमें जीवों का इसी तरह से वर्णन मिलेगा। जीव कौन-कौन? कहाँ-कहाँ? कैसे-कैसे उत्पन्न होते हैं? गोम्मटसार कर्मकाण्ड, कर्मकाण्ड में क्या वर्णन मिलेगा? कर्मों की क्या व्यवस्था है? कर्मों को कैसे बंध होते हैं? कर्मों के कैसे उदय होते हैं? कैसे नाश होते हैं? कैसे कर्म के संक्रमण होते हैं? इन सब का वर्णन मिलेगा। वह सब जीवों में अलग-अलग कौन-कौन से कर्म बंधते हैं? कितने स्थानों में जीवों के कौन-कौन से कर्म, किस-किस intensity के साथ पड़ते हैं? प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश ये सब प्रकार के बन्धों का वर्णन मिलेगा। इसका नाम है- कर्मकाण्ड। सुन रहे हैं? कब पढ़ोगे? फुर्सत ही नहीं है महाराज! business में ही इतने फंसे हुए हैं।

संसार के कामों से समय निकाल कर ज्ञान अर्जित करना चाहिए

धन में ही इतना जीवन निकल रहा है, धन के संचय में ही इतना time निकल जाता है कि अपने ज्ञान-विज्ञान को बढ़ाने का समय ही नहीं रहता। क्या समझ आ रहा है? कितना धन संचय करोगे? धन संचय करने से क्या मिलेगा? कितनी कोई चीजें इकट्ठी भी कर लोगे तो वे चीजें आप के लिए ज्ञान तो नही बढ़ायेंगी। वे चीजें आपके लिए

बस इतना ही होगा हमारे पास नहीं थी बस! हमने अपने पास ले ली इतनी संतुष्टि के लिए आदमी अपनी जिन्दगी खराब करता है। अगर हम यह सोचें कोई चीजें हैं, हैं, जहाँ हैं, वहाँ हैं लेकिन आदमी अपनी तृष्णा के कारण से क्या करता है? नहीं! उन चीजों को हमें अपने पास में अपना बना कर रखना है बस! दुनिया में कोई भी अच्छी से अच्छी कार है, है! है! आप वहीं पर रह के खुश नहीं हो सकते हो। नई कार है, ठीक है! एक नई कार का invention हुआ है, बहुत अच्छी कार है। मान लो अंबानी के पास है, अच्छी बात है। वहीं पर खुश हो लो कार तो है, जरूरी नहीं वह हमारे पास हो, हमारी हो। बस! इतनी सी बात के लिए आदमी पूरी जिंदगी उसमें खराब कर देगा। उस कार को प्राप्त करने के लिए परिश्रम करेगा, समय खर्च करेगा और उसके बाद में वह कार ले भी लेगा तब तक उसके लिए उस तरह की न जाने और दूसरी तरह की और कितनी कारें आ जाएँगी। अम्बानी के पास तब तक और दूसरा model आ चुका होगा तब तक तुम उस model को खरीद पाओगे। इस दौड़ में आदमी लगा हुआ है। यह ज्ञान-विज्ञान की दौड़ में आए तो सब कुछ इस ज्ञान में कितना आनंद आता है। जब हम यहीं बैठे-बैठे दुनिया को जान रहे हैं। हमें किसी computer पर जाने की जरूरत नहीं, किसी google को search करने की जरूरत नहीं। हमारे पास ही इतनी-चीजें हैं कि google fail है। इन चीजों के माध्यम से जो हमारे अन्दर ज्ञान का विस्तार आता है, उससे जो हमारे अन्दर विचारों में उदारता आती है, उससे हमें जो जीवों का ज्ञान करके, हमें अपने अज्ञान का नाश करके जो हमारे अन्दर एक सुख-शांति का भाव आता है, वह सुख-शांति आपको बाहरी चीजों से कभी भी नही मिल सकती लेकिन हर आदमी इसी दौड़ में पड़ा हुआ है।

ज्ञान प्राप्त करने में आनंद ही आनंद है

थोड़ा सा और इकट्ठा कर लूँ, थोड़ा सा और समय महाराज! बस! यह काम बन जाए, वह काम बन जाए, फिर ऐसा कर लूँगा, फिर वैसा कर लूँगा और इसी में न जाने कितना समय निकल जाता है और हम इस ज्ञान-विज्ञान से वंचित रह जाते हैं। इस ज्ञान में तो लग गए हम, जो हमें बाहरी science ने दिया। mobile का ज्ञान, google का ज्ञान, computer का ज्ञान, Youtube का ज्ञान इसमें तो हम लग गए। लेकिन इस ज्ञान को हम अभी भी प्राप्त नहीं कर रहे हैं। कितना अच्छा व्यवस्थित ज्ञान है। व्यवस्थित है यह ज्ञान, ऐसा नहीं है कहीं कुछ आपस में कुछ मिलजुल रहा हो और सब गड़बड़ हो रहा हो, कहीं कुछ कह दिया। आचार्य भूल गये हो, आगे कुछ किसी ने कुछ कह दिया ऐसा नहीं होता है। जो

चीज कहीं पर भी लिखी हुई है, कहीं पर भी है, वही चीज आपको उसी का explanation और उसी की तुष्टि आपको दूसरी जगह मिलेगी। अगर detail की जायेगी तो कोई नई चीज नहीं आयगी, उसी चीज का आपको detail मिलेगा और वही चीज आपके लिए दूसरे रूप में कहीं न कहीं लिखी मिलेगी। जितनी-जितनी हमारी समझ बढ़ती है, अज्ञान उतना-उतना ही दूर होता है और अज्ञान को दूर करने में ही जो आत्मा का आनन्द आता है, वह आत्मा का आनन्द आपको बाहरी चीजों की दौड़ में कभी भी आ नहीं सकता। लेकिन हर व्यक्ति के अन्दर एक तृष्णा बैठी हुई है कि हमें कुछ बाहर से प्राप्त करना है। लेकिन आचार्य कहते हैं- बाहर क्या प्राप्त करना है? अगर प्राप्त करना है तो बाहर से ज्ञान प्राप्त करो, वस्तुओं की प्राप्ति से क्या होगा? वस्तुएँ तो रहेंगी कहीं न कहीं, कोई न कोई उनका use करेगा ही। लेकिन हर आदमी को लगता है कि नहीं मेरी ownership में इन वस्तुओं का use मैं करूँ। बस! इतनी सी बात के लिए वह अपनी जिंदगी खराब करता है। अगर यह बात आज की पीढ़ियों को थोड़ी सी जानने में आए तो आज की पीढ़ियाँ भी इस ज्ञान-विज्ञान को समझने की कोशिश करें, इस science को समझने की कोशिश करें, जो जीव विज्ञान हमें आचार्यों ने बताया और इतना perfect रूप से बताया कि आज भी उसके लिए कोई challenge देने वाला नहीं है। कोई science उसका आज भी मुकाबला करने वाला नहीं है, ऐसा यह विज्ञान है। इसलिए हम इस चीज की समझें कि यह जो सूक्ष्म मनुष्य की उत्पत्ति हमें स्त्रियों के शरीर में बताई गई है, उसको हम स्वीकार करें और यह भी मान कर चले कि वह पुरुषों के शरीर में भी होती है लेकिन स्त्रियों के शरीर में अधिक होती है। इसलिए स्त्रियों का शरीर संयम धारण करने के योग्य होते हुए भी उस संयम को धारण नहीं कर सकता। जो संयम पूर्ण रूप से शुद्ध हो और जो संयम पूर्णता को प्राप्त करके शुक्ल ध्यान के माध्यम से उसे केवल ज्ञान प्राप्त करा दे। ऐसे संयम को कभी भी स्त्री प्राप्त नही कर सकती। इसलिए यहाँ पर यह कहा गया है।

प्रवचनसार गाथा - 250

जदि दंसणे हि सुद्धा सुत्तज्झयणेण चावि संजुत्ता।
घोरं चरदु व चरियं इत्थिस्स ण णिज्जरा भणिदा॥२५०॥

सम्यक्त्व से सहित होकर आर्यिका ये, एकादशांग श्रुत को यदि पार पाये।
अत्यन्त घोर तपती सहती ततूरी, पै, निर्जरा करम की इनकी अधूरी॥

अन्वयार्थ- (**जदि**) यदि स्त्री (**दंसणे**) सम्यग्दर्शन से (**हि सुद्धा**) यथार्थ में शुद्ध (**च**) और (**सुत्तज्झयणेण अवि**) सूत्र के अध्ययन से भी (**संजुत्ता**) संयुक्त हो (**व**) तथा (**घोरं चरियं**) घोर तप को (**चरदु**) करे तो भी (**इत्थिस्स**) स्त्री के (**णिजरा**) कर्म निर्जरा (**ण**) नहीं (**भणिदा**)कही है।

स्त्री भी सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकती है

SCAN TO WATCH

क्या कहते हैं? **जदि** अर्थात् यदि वह स्त्री **'दंसणे हि सुद्धा'** देखो! सम्यग्दर्शन से शुद्ध हो सकती है मतलब स्त्री के अन्दर सम्यग्दर्शन हो सकता है। स्त्री के पास में दर्शन विशुद्धि हो सकती है, सम्यग्दर्शन हो सकता है। स्त्री सम्यग्दर्शन से अपनी आत्मा को शुद्ध बना सकती है। अगर कोई स्त्री ऐसी भी हो जो सम्यग्दर्शन से पवित्र हो, **'सुत्तज्झयणेण चावि संजुत्ता'** और जो आचार्यों के द्वारा बताए हुए सूत्र हैं उन सूत्रों के अध्ययन से भी वह संयुक्त हो मतलब सम्यग्ज्ञान से सहित हो। स्त्रियों के लिए भी कहा जाता है कि अंग और पूर्वों में 11 अंग की धारी स्त्री हो सकती है। मतलब 11 अंग तक का ज्ञान स्त्रियों को हो सकता है, पूर्वों का ज्ञान नहीं होता, द्वादशांग में 11 अंगों तक का ज्ञान भी स्त्रियों को होता है तो ऐसा मान लो ज्ञान को भी धारण करने वाली हो। **'घोरं चरदु व चरियं'** और घोर चर्या करने वाली हो। घोर चर्या का मतलब खूब उपवास, खूब बड़े-बड़े व्रत, खूब बड़ी-बड़ी साधनाएँ करने वाली हो। समझ आ रहा है? यह सब कर सकती है मतलब स्त्री के अन्दर सम्यग्दर्शन भी हो सकता है, सम्यग्ज्ञान हो सकता है और सम्यग्चारित्र भी आंशिक रूप से देश चारित्र के रूप में हो सकता है।

स्त्री में कर्मों की पूर्ण निर्जरा नहीं होती, असंख्यात गुणी निर्जरा होती है

लेकिन फिर भी आचार्य कहते हैं- '**इत्थिस्स ण णिज्जरा भणिदा**' इतना सब कुछ करने के बाद भी स्त्री के लिए निर्जरा नहीं होती है। निर्जरा मतलब कर्मों की वह निर्जरा जो केवलज्ञान उत्पन्न करा देती है। वह वाली कर्म की निर्जरा नहीं होगी लेकिन असंख्यात गुणी कर्म की निर्जरा जो उसके देश संयम से आयगी वह जो पाँचवे गुणस्थान के जो योग्य होगी, वह निर्जरा तो आज भी हो सकती है। इसलिए यहाँ निर्जरा नहीं होती इसका मतलब क्या है? कर्म का पूर्ण निर्जरा नहीं होती, पूर्ण क्षय नहीं होता। जिस कर्म की निर्जरा से केवलज्ञान की प्राप्ति हो जाए ऐसी निर्जरा उस स्त्री के लिए नहीं हो पाती है।

'सम्यक्त्व से सहित होकर आर्यिका ये, एकादशांग श्रुत को यदि पार पाये।
अत्यन्त घोर तपती सहती ततूरी पै, निर्जरा करम की इनकी अधूरी।।

ततूरी जानते हो मतलब देखो लिखा है न! सम्यक्त्व से सहित हो सकती हैं, '**आर्यिका**' सम्यग्दर्शन से सहित हो गई, 11 अंग '**एकादशांग**' की धारी हो सकती हैं और अत्यंत घोर तप भी कर सकती हैं। ततूरी सहन कर सकती हैं मतलब धूप, ततूरी का मतलब क्या होता है? मतलब जो गर्मी होती है, ताप होता है, धूप में भी मान लो तपस्या करे, विहार करे ऐसे ततूरी भी सहन कर सकती हैं लेकिन फिर भी उसके लिए केवलज्ञान को उत्पन्न कराने वाली निर्जरा नहीं हो सकती। यह यहाँ पर कहा जा रहा है। समझ आ रहा है कि नहीं आ रहा है आप लोगों को? women cannot effect exhaustion of karmas even though they are pure in faith are ended with spiritual study and practice a severe course of conduct.

स्त्रियाँ देश संयम धारण कर, असंख्यात गुणी निर्जरा कर सकती हैं

कितना ही वह घोर चारित्र का पालन करें लेकिन फिर भी उनको केवलज्ञान की प्राप्ति नहीं होती। यह यहाँ पर आचार्यों ने कहा है। इसलिए भले ही केवलज्ञान नहीं हो, केवलज्ञान तो वैसे ही पंचम काल में नहीं होता है इसलिए स्त्रियों से पुनः कहना है कि इस केवल ज्ञान की प्राप्ति वाली निर्जरा नहीं कर पाती तो कोई बात नहीं लेकिन देश संयम को प्राप्त करके

पंचम गुणस्थान की योग्य जो असंख्यात गुणी कर्मों के निर्जरा होती है वह निर्जरा हम आज भी कर सकते हैं। दो प्रतिमाओं के पालन से 10 प्रतिमाओं के पालन तक भी 11 प्रतिमाओं के पालन तक भी स्त्रियाँ आराम से कर सकती हैं। आर्यिका भी बनती हैं तो उन्हें उपचार से महाव्रत दिए जाते हैं। उसका उपचार क्यों ऐसा किया जाता है? उसकी चर्चा फिर कभी करेंगे। इसलिए स्त्रियों के लिए आज भी सम्यग्दर्शन, ज्ञान और आंशिक चारित्र की प्राप्ति के साधन आज भी उपलब्ध हैं। अपने इस अपवित्र, नश्वर और जीवों की उत्पत्ति वाले शरीर से मोह हटा करके आत्मा की आराधना अगर आज भी स्त्रियाँ करें तो आगे चलकर के वे नियम से स्वर्ग के इन्द्र बनेंगी और बाद में मुनि बन करके मनुष्य पर्याय में मुनि बनकर के नियम से केवल ज्ञान को प्राप्त कर सकती हैं, यह स्त्रियों के लिए सौभाग्य आज भी है। बोलो! महावीर भगवान की जय।

प्रवचनसार गाथा - 251

तम्हा तप्पडिरूवं लिंगं तासिं जिणेहिं णिद्दिट्ठं।
कुलरूववओजुत्ता समणीया तस्समाचारा॥२५१॥

होती अतः कुलवती शुभभाव वाली, आरोग्य, योग्य वय ले, तन को सम्भाली।
आर्या, सवस्त्र रह आचरणा सुधारें, ऐसा कहें जिन करे जग में उजारे॥

अन्वयार्थ- (**तम्हा**) इसलिये (**तप्पडिरूवं**) उन्हीं के योग्य (**लिंग**) लिंग (**तासिं**) उन स्त्रियों का (**जिणेहिं**) जिन भगवान् ने (**णिद्दिट्ठं**) कहा है (**कुलरूववओजुत्ता**) कुल रूप और वय ये युक्त (**समणीया**) श्रमणियों का (**तस्समाचारा**) आचरण आचारशास्त्र के अनुसार होता है।

कहा जा रहा है- **'तम्हा'** अर्थात् इसलिए **'तप्पडिरूवं'** उनका जो प्रतिरूप है, वही लिंग के रूप में **'जिणेहिं णिद्दिट्ठं'** जिनेंद्र भगवान ने कहा है। **'कुलरूववओजुत्ता'** कुल रूप और वय से युक्त हुई **'समणीया तस्समाचारा'** श्रमणियों का आगम के अनुसार ही समाचार होता है, ऐसा यहाँ निर्दिष्ट किया है।

"होती अतः कुलवती शुभ भाव वाली, आरोग्य, योग्य वय ले, तन को सम्भाली।
आर्या, सवस्त्र रह आचरणा सुधारें, ऐसा कहें जिन करे जग में उजारे"।।

Therefore the Jinas has prescribed for them an emblem their nature that is consisting of clothing etc. Those that are endowed with family for and age and practice that course are called nuns.

श्रमणियां की सम्यक्त्व की विशुद्धि क्षायिक सम्यग्दर्शन के योग्य नहीं होती

आर्यिकाओं को श्रमणी भी कहते हैं और उन्हें इनकी भाषा में nuns भी eng।ish में कहा जा सकता है। क्या कहा जा रहा है? जो आर्यिकाएँ पहले की गाथाओं में मुक्ति के योग्य नहीं थी उनके लिए किसी भी प्रकार से मुक्ति का प्रावधान नहीं बनता, उन्हीं आर्यिकाओं के लिए यहाँ कहा जा रहा है कि वे अपने प्रतिरूप के साथ यानी उनका

जो अपना शरीर है, उसी शरीर के अनुरूप ही उनका लिंग होगा। उनका लिंग मुनि के अनुसार नहीं होगा, उनका लिंग स्त्री के अनुसार ही होगा। इसलिए उसको यहाँ प्रतिरूप कहा है। प्रतिरूप का मतलब होता है- अगर कहीं कोई रूप होता है, तो उसी रूप की कोई copy की जाती है तो उसको प्रतिरूप कहते हैं। जैसे जिनेंद्र भगवान होते हैं तो जिनेंद्र भगवान की ही जो हम प्रतिमाएँ बनाते हैं तो वह उनके प्रतिरूप कहलाते हैं। जो प्रतिमाएँ हैं, जिन प्रतिमाएँ उन्हें हम क्या बोलते हैं? प्रतिरूप हैं। उसी तरीके से आचार्य कहते हैं कि यह जो प्रतिरूपक उनका लिंग है, आर्यिकाओं के लिए होता है, श्रमणियों के लिए होता है और इस लिंग को धारण करके वह क्या कर सकते हैं? तो जैसा कि पहले बताया था सम्यग्दर्शन से वह शुद्ध हो सकते हैं, सम्यग्ज्ञान की भी प्राप्ति कर सकते हैं और थोड़ा आंशिक रूप से सम्यग्चारित्र का भी वे पालन कर सकते हैं। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के पालन की पूर्णतया निषेध नहीं है लेकिन आंशिक रूप से इनका पालन हो सकता है। सम्यग्दर्शन से भी शुद्ध होते हैं तो यह भी समझ में आना चाहिए कि वह सम्यग्दर्शन से शुद्ध होने के साथ-साथ वह सम्यक्त्व की विशुद्धि इतनी नहीं बढ़ पाती कि वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाए। समझ आ रहा है? क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाए, उसी भव में उनको मोक्ष की प्राप्ति हो जाए, ऐसा भी नहीं हो पाता।

इस लिंग को धारण करके आर्यिकाएँ क्या कर सकती हैं?

- सम्यग्दर्शन से वह शुद्ध हो सकती हैं।
- सम्यग्ज्ञान की भी प्राप्ति कर सकती हैं।
- आंशिक रूप से सम्यग्चारित्र का भी वे पालन कर सकती हैं।
- सम्यग्चारित्र का देश व्रत के रूप में पालन करती हैं।
- उनके ऊपर महाव्रतों का उपचार भी हो जाता है।
- भीतर से उनका गुणस्थान देशव्रती वाला ही गुणस्थान रहता है

श्रमणियों के लिए सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्र की उत्कृष्टता नहीं होती

SCAN TO WATCH

ज्ञान की भी वृद्धि होती है तो ज्ञान इतना ही बढ़ता है कि वह ग्यारह अंग तक तो ज्ञान हो सकता है लेकिन पूरे द्वादशांग का ज्ञान आ जाए ऐसा भी नहीं हो पाता। जिसे हम बोलते हैं- पूरे द्वादशांग का ज्ञान, 12 अंगों का ज्ञान या 12 अंगों के साथ में भी जो 14 पूर्व होते हैं उनका भी ज्ञान वह उनको कभी नहीं आता। अतः ज्ञानावरण का भी क्षयोपशम उत्कृष्टता के साथ नहीं होता। सम्यग्ज्ञान की भी प्राप्ति

उत्कृष्टता के साथ नहीं होती, सम्यग्दर्शन की भी उत्कृष्टता नहीं होती और सम्यग्चारित्र की भी उत्कृष्टता नहीं होती। सम्यग्चारित्र भी उन आर्यिकाओं के पास में या स्त्री वेश में रहने वाली कोई भी श्रमणियों के पास में उतना ही होता है कि वह अपने लिए एक सम्यग्चारित्र का देश व्रत के रूप में पालन करती हैं लेकिन आचार्यों ने कहा उनके ऊपर महाव्रतों का उपचार भी हो जाता है। भीतर से उनका गुणस्थान देशव्रती वाला ही गुणस्थान रहता है लेकिन बाहर से कहने में उनके लिए महाव्रतों का वह उपचार से पालन करती हैं ऐसा कहा जाता है।

इस लिंग को धारण करके आर्यिकाएँ क्या नहीं कर सकती हैं?

- वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं हो सकती ।
- पूरे द्वादशांग का ज्ञान नहीं हो पाता ।
- ज्ञानावरण का क्षयोपशम उत्कृष्टता के साथ नहीं होता ।
- सम्यग्दर्शन की उत्कृष्टता नहीं होती ।
- सम्यग्चारित्र की उत्कृष्टता नहीं होती ।

आर्यिकाओं में महाव्रतों का उपचार कहा गया है

SCAN TO WATCH

भीतर और बाहर की यह व्यवस्था थोड़ी अलग-अलग ढंग से चलती है तो जब उनके लिए यह कहा गया कि यह अपना प्रतिरूप बना करके अपना लिंग अलग से व्यवस्थापित कर ले और उसी के अनुसार अपना आचरण करें तो यहाँ एक प्रश्न उठता है कि जब उनकी निर्जरा नहीं होती, उनके लिए मोक्ष नहीं होता तो फिर उन्हें क्यों इस तरीके से महाव्रतों का उपचार किया जाता है? क्यों उनके लिए महाव्रतों का आरोपण किया जाता है? उसके लिए भी आचार्य कहते हैं कि उनके भी कुल को प्रकाशित करने के लिए ऐसा किया जाता है। कुल के प्रकाशन का मतलब अच्छे कुल में कोई उत्पन्न हुई स्त्रियाँ हैं तो वह भी कोई सदाचरण उत्कृष्टता के साथ में कर सकें, इससे भी कुल का प्रकाशन होता है। क्योंकि और उससे जो नीचे के पद हैं- क्षुल्लिका वगैरह यह तो कोई भी बन सकता है लेकिन आर्यिका वही बनेगी जो अच्छे कुल में उत्पन्न हुई हो। इसलिए यहाँ लिखा कुल से भी युक्त होना चाहिए, रूप से भी युक्त होना चाहिए और सही वय भी युक्त होना चाहिए। उम्र भी उसकी सही सलामत होनी चाहिए, तब वह आर्यिका बनने के योग्य होती है। आचार्य कहते हैं कि कुल को प्रकाशित करने के लिए भी उनके लिए यह व्यवस्था है कि इस कुल में उत्कृष्ट रूप से, इतने उत्कृष्ट पद तक स्त्री पहुँच सकती है और जब भी कभी उपचार शब्द आता है, तो वह उपचार किसी न किसी निमित्त और किसी न किसी

प्रयोजन को ले करके आता है। स्त्रियों को वास्तव में तो उनका गुणस्थान पाँचवाँ रहेगा, पाँचवें गुणस्थान तक का ही संयम रहेगा लेकिन बाहर से, उपचार से उनको महाव्रती कहा जाएगा। यह दोनों बातें बड़ी विरुद्ध सी हो जाती हैं। कई लोग तो इसी में लड़-भिड़ भी जाते हैं। एक-एक पक्ष भी बन जाते हैं। एक कहते हैं कि आर्यिका श्राविका है और एक कहने लग जाते हैं कि आर्यिका महाव्रती है लेकिन जब तक हम व्यवस्था को ढंग से नहीं समझेंगे, अनेकान्त को नहीं समझेंगे, आचार्यों के अभिप्रायों को नहीं समझेंगे तब तक हम किसी भी भाव की समायोजना कर नहीं पाएँगे।

उपचार - महाव्रतों का मुख्यता से अभाव

श्रावक का उसके लिए व्रत नहीं है लेकिन भीतर से उसका गुणस्थान श्राविका जैसा है क्योंकि श्रावक का जैसे ही पाँचवाँ गुणस्थान होता है वैसा ही गुणस्थान उसका भी होता है। पाँचवें गुणस्थान से ऊपर नहीं उठ सकती। इसका मतलब है कि वह भीतर से महाव्रतों को प्राप्त नहीं किए हैं। लेकिन साथ-साथ यह भी लिखा हुआ है कि वह महाव्रती है, उपचार से है इसको भी स्वीकार करना पड़ेगा। यह उपचार से महाव्रती क्या होता है? आचार्य कहते हैं कि जहाँ पर मुख्यता का अभाव होता है, वहाँ पर उपचार लगाया जाता है। जहाँ कोई चीज मुख्य रूप से दिखाई न दे, वहाँ पर उसे उपचार से कहा जाता है और यह उपचार भी किसी प्रयोजन के साथ होता है, किसी निमित्त के लेकर के होता है। उसके लिए कहा जाता है कि कोई चीज अगर मुख्यता से नहीं है जब हम उसको उदाहरण देकर के किसी के रूप में लाते हैं तो वह उपचार से कहलाती है। जैसे कोई व्यक्ति है- देवदत्त का नाम ग्रन्थों में famous रहता है, कोई व्यक्ति है उसको कहा गया कि उसको गुस्सा बहुत आता है, बहुत क्रूर है तो उसके लिए कहा गया कि यह अग्नि की तरह क्रूर है, अग्नि के समान क्रूर है या यह शेर की तरह क्रूर है, सिंह के समान निर्दयी है तो क्या कहा जाएगा? वह व्यक्ति के लिए उपचार से अग्नि की या सिंह की उपमा दी जा रही है। इसको बोलते हैं- उपचार। यह वह doctor वाला उपचार नहीं है। यह उपचार का मतलब है- जब कोई चीज मुख्यता से देखने में न आ रही हो तब हम किसी भी रूप में उसकी व्यवस्था बना देते हैं तो वह कहलाती है- उपचार या व्यवहार। औपचारिक रूप से हम इसको इस रूप में कह सकते हैं। जब हमने किसी भी व्यक्ति के लिए कहा कि यह व्यक्ति कैसा है? सिंह के समान क्रूर है या अग्नि के समान क्रोधित होने वाला है तो यह अग्नि है या यह सिंह है ऐसा हमने उस व्यक्ति के लिए कहा था भैया! यह आदमी नहीं है, यह तो आग है, यह आदमी नहीं है, यह तो शेर है। क्या मतलब हुआ? क्या वह वास्तव में

शेर हो गया, सिंह हो गया या वह वास्तव में अग्नि हो गया? कुछ भी नहीं हुआ। क्या हुआ? उपचार से हम उसको इस तरीके से लौकिकता में व्यवहार में कह देते हैं। मतलब कुछ उसके अन्दर quality दूसरे से जो होती है, उससे match कर रही है लेकिन वह पूरा का पूरा आग नहीं हो गया या पूरा का पूरा सिंह नहीं हो गया। कुछ उसकी quality उसकी तरह दिखाई देती है। इसको बोलते हैं- उपचार। यह उपचार समझने की कोशिश करो जब यह उपचार समझ में नहीं आता है तो प्रचार बड़ा गलत हो जाता है। अर्यिकाओं के विषय में बड़ी लड़ाई-झगड़े भी पड़े हुए हैं, पड़े ही रहते हैं और बड़ी वैमनस्यताएँ भी बढ़ती चली जाती हैं। उन सब का कारण यही है कि सही व्यवस्था को समझने के अनुसार ही हम अपनी समझ सही बना सकते हैं। हर किसी को ग्रंथ की लिखी हुई बात समझ में आए या न आए लेकिन एक अभिप्राय अगर हम अनेकांतिक ढंग से समझने की कोशिश करें तो हम समझ सकते हैं। उपचार से उनको महाव्रती कहा है तो हमें स्वीकार करना है कि वह उपचार से महाव्रती है लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं है कि वह महाव्रती ही हो गयी हैं। अब समझ में आ गया? उपचार किससे होगा? कोई मुख्य चीज है, उसकी उनके अन्दर एक कल्पना की जा रही है। किसी quality को देखते हुए, उसमें उनके अन्दर कोई एक संबंध बनाया जा रहा है।

अंतरंग विशुद्धि के लिए शरीर आवश्यक है

समझ आ रहा है? महाव्रती कौन होते हैं? मुनि महाराज होते हैं। जो संपूर्ण परिग्रह का त्यागी हो करके पाँच प्रकार के पाप से बिल्कुल मुक्त होते हैं, वह महाव्रती हुए। अब उनके लिए पूर्ण परिग्रह का त्याग होना नहीं। वस्त्र रखना उनके लिए आवश्यक है, बिना वस्त्र का शरीर हो नहीं सकता, परिग्रह उनके लिए आया। इसी कारण से उनके लिए सकल संयम नहीं हुआ। सकल संयम नहीं होने के और भी कारण बताए गए कि उनका शरीर ही इस तरीके का होता है, उसमें जीवों की उत्पत्ति होती रहती है, जीवों की मृत्यु होती रहती है इसलिए प्राणी संयम भी नहीं पल सकता। प्राणी संयम नहीं पल पाएगा, जीवों की रक्षा नहीं हो पाएगी, सकल संयम का पालन नहीं होगा। पालन नहीं होगा तो वह कभी भी पूर्ण सम्यग्चारित्र का पालन उनके द्वारा नहीं हो सकता। सम्यग्चारित्र नहीं है तो रत्नत्रय नहीं, रत्नत्रय की पूर्णता नहीं तो कभी भी निर्विकल्प ध्यान नहीं, शुक्ल ध्यान नहीं। शुक्ल ध्यान नहीं तो कभी भी केवलज्ञान नहीं, यह उनकी एक व्यवस्था है। बाहर और भीतरी दोनों कारणों के मिलने से ही कोई भी कार्य घटित होता है। शरीर भी

हमारा बाहरी कारण है, अंतरंग की विशुद्धि को बढ़ाने के लिए, अंतरंग की एकाग्रता को बढ़ाने के लिए। ध्यान को भी निर्विकल्प बनाने के लिए या शुक्ल ध्यान के लिए भी शरीर भी आवश्यक रखा गया है।

महाव्रती कौन होते हैं?

- मुनि महाराज होते हैं।
- जो संपूर्ण परिग्रह का त्यागी हो
- जो पाँच प्रकार के पाप से बिल्कुल मुक्त होते हैं।

आर्यिकाओं के ध्यान योग्य उत्कृष्ट संहनन नहीं है

तभी ध्यान के लिए कहा गया है **'उत्तम संहननस्यैकाग्र चिंतम्,एकाग्र चिन्ता निरोधो ध्यानं'** जो ध्यान हमें केवलज्ञान कराएगा वह कैसा होना चाहिए? वह व्यक्ति उत्तम संहनन वाला होना चाहिए। उत्तम संहनन, वह जो वज्रवृषभनाराच संहनन ही उत्तम संहनन कहलाता है। इसी के साथ ही वह शक्ति आएगी कि वह जो चित्त की एकाग्रता बने, वह ध्यान बने जो **'एकाग्र चिंता निरोधो ध्यानं'** यह जो कहा जाता है कि यह ध्यान उन्हीं को लगेगा जिनके पास में पहले इतनी बाहरी योग्यता हो कि उनके पास में उत्कृष्ट संहनन हो। वह बाहरी योग्यता कैसे आएगी? वह योग्यता तो आपको अपने ही कर्म से प्राप्त शरीर के कारण से आएगी। संहनन एक ऐसी चीज है जो हमें पिछले जन्म के बंधे हुए कर्म के फल से मिलेगा। इस जन्म में हम अपने संहनन को नहीं बढ़ा सकते हैं। अपने शरीर की शक्ति बढ़ा सकते हैं, संहनन नहीं बदला जा सकता है। किसी भी प्रकार की चीजों को खाने-पीने से संहनन नहीं बदल सकता हैं। हमारे शरीर की कोई भी जो muscles हैं, वह मजबूत हो सकती हैं। blood है उसका change हो सकता है, कोई भी चीजें change हो सकती हैं लेकिन कभी भी संहनन नहीं बदल सकता है। हड्डियों का जो बल मिला है वह उतना ही रहेगा तो यह चीजें न तो gym से बढ़ाई जा सकती हैं, न कोई exercise से बढ़ाई जा सकती हैं, न किसी medicine से बढ़ाई जा सकती हैं। यह तो जैसा मिला है वैसा ही होगा। आर्यिकाओं के लिए या स्त्रियों के लिए इस प्रकार का संहनन मिलता ही नहीं है, यह सिद्धान्त है। उन्हें उत्कृष्ट संहनन नहीं है तो इसका मतलब है कि उनके लिए उत्कृष्ट ध्यान की वह योग्यता भी नहीं आती। जब यह योग्यता नहीं आती इसी कारण से उनके लिए केवलज्ञान को प्राप्त कराने वाली निर्जरा नहीं होती और उसी कारण से उनको मोक्ष नहीं होता।

कुल को प्रकाशित करने के लिए आर्यिकाओं में महाव्रतों का आरोपण किया गया है

फिर आचार्य कहते हैं कि जब यह सम्यग्चारित्र की पूर्णता नहीं है तो उनके लिए मोक्ष कैसे हो सकता है? इसलिए उनका जो प्रतिरूप है, वह स्त्रियों के अनुरूप ही रहेगा पुरुषों के अनुरूप नहीं हो पाएगा। कुल, रूप और वय यह तीनों से युक्त या इन तीनों की सही समायोजना से जो सहित होती हैं वही आर्यिका बनने के योग्य होती हैं और उस आर्यिका बनने के लिए जो निमित्त है वह सबसे पहले कुल के प्रकाशन का निमित्त आ जाता है। उपचार क्यों किया जा रहा है? उनका कुल उत्कृष्ट है और उत्कृष्ट कुल में ही यह कार्य हो सकता है, उत्कृष्ट कुल की स्त्रियाँ ही आर्यिका बन सकती हैं। इस बात को प्रकाशित करने के लिए उन्हें महाव्रती का जैसा कहा जाता है, महाव्रती का आरोपण किया जाता है। वस्तुतः वह महाव्रती नहीं होती हैं। अब महाव्रती कहा भी जाएगा और महाव्रती होती भी नहीं है इस बीच के द्वंद्व को अगर आप स्याद्वाद शैली से नहीं समझोगे या अंतरंग और बहिरंग शैली के अनुसार नहीं समझोगे तो आपको कभी भी स्त्रियों की व्यवस्था समझ में नहीं आएगी। इन स्त्रियों की व्यवस्था वैसे भी बड़ी विचित्र है क्योंकि जो चीज line पर नहीं है, line से हटकर के है और उसकी व्यवस्था बनाई गई है, तो कहीं न कहीं वह चीज विवाद का भी कारण बनती आई है और आज भी बन रही है। समझ आ रहा है? दिगंबर और श्वेतांबर संप्रदाय में भी यह चीज विवाद का कारण बनी हुई है। श्वेतांबर लोग स्त्रियों की मुक्ति का कथन करने लगे करने तो लगे लेकिन उनके भी शास्त्रों से वह चीज सिद्ध नहीं होती है। हाँ! उन्होंने कहा कि मल्ली कुमारी यह तीर्थंकर हुए। यहाँ तक आचार्यों ने उनके ऊपर आक्षेप किया, अगर भैया मल्ली कुमार नाम के तीर्थंकर स्त्री थे तो कोई मंदिर तो दिखाओ जिसमें मल्ली कुमारी की प्रतिमा स्त्री के रूप में लगी हो। कहीं मंदिर में कहीं प्रतिमा स्त्री की लगी हो और स्त्री का पूरा खुला शरीर दिखाया गया हो और फिर उसको आप पूज रहे हो। बताओ! कोई अगर मल्ली कुमारी तीर्थंकर हुए? आचार्य कहते हैं कि ऐसा कुछ भी नहीं है, यह योग्यता ही नहीं है और यह योग्यता इसलिए भी नहीं है कि पहले भी कहा जा चुका है श्वेतांबरों का भी जो सिद्धान्त है बहुत कुछ दिगंबरों के बिल्कुल ही निकट है लेकिन कुछ चीजें उन्होंने बिल्कुल अपनी अलग बना ली हैं। अपनी परंपरा को अलग दिखाने के लिए या अलग करने के लिए उनके यह भी लिखा हुआ है कि अगर कोई भी जीव सम्यग्दृष्टि है, यह सिद्धान्त है, अगर कोई जीव सम्यग्दृष्टि है तो उस सम्यग्दृष्टि जीव को अगला जन्म कभी भी स्त्री पर्याय या नपुंसक पर्याय के रूप में नहीं मिलता। यह सिद्धान्त दिगंबरों में भी है और श्वेतांबरों में भी है। स्त्री

पर्याय के रूप में जीव को सम्यग्दर्शन के साथ में पर्याय मिल ही नहीं सकती है।

आपने छहढाला में भी पढ़ा होगा-

वान भवन षंड नारी, थावर विकलत्रय में नहिं उपजत् अविरत सम्यक् धारी।।

क्या होता है? जीव भवनवासी देवों में, वान व्यन्तर देवों में, स्त्री पर्याय में, दुष्कुल में, अल्प आयु वालों में, दरिद्रता के स्थानों में कभी भी सम्यग्दृष्टि जीव का जन्म होता ही नहीं है। अब जो तीर्थंकर बन रहे हैं जो इसी भव से मोक्ष जाएँगे, अगर हमने उसको स्त्री बना दिया तो अगले जन्म में उनको सम्यग्दर्शन था नहीं इससे यह सिद्ध होगा और सम्यग्दर्शन था तो वह कभी भी स्त्री बन नहीं सकता। अब इनको इसी जन्म में अगर सम्यग्दर्शन नहीं है तो तीर्थंकर प्रकृति का बंध कैसे होगा? पंचकल्याणक कैसे होंगे? सब व्यवस्थाएँ बिगड़ जाएगी। इससे सिद्ध होता है कि यह जो भले ही व्यवस्था बनाई गई है, किसी ने वे अपने ढंग से बना ली है लेकिन कोई भी व्यवस्था आगम के अनुकूल सिद्ध होती नहीं। किसी भी स्त्री का सुमेरु पर्वत पर कभी अभिषेक नहीं होता है। इंद्र भी ले जाएगा सुमेरु पर्वत पर तो बालक को ही लेकर जाता है, बालिका का आज तक कोई उल्लेख नहीं आया। किसी भी शास्त्र में नहीं कि सुमेरु पर्वत पर उसका न्वहन कराया जाता हो। ये चीजें सिद्ध करती है कि कभी भी स्त्री पर्याय से उसके लिए मुक्ति नहीं होती।

आर्यिकाओं के लिए आचार्यों ने आगम अनुकूल आचरण करने योग्य बताया है

इसलिए आचार्यों ने कहा स्त्रियाँ अपने योग्य आचरण को करें। **'तस्समाचारा'** का मतलब है- जैसा समाचार, जैसा आचरण।, समीचीन आचरण मूलाचार आदि में लिखा हुआ है वैसा आचरण अपनाएँ। बाहर से मुनि के योग्य हर आचरण को अपनाएँ, सभी महाव्रतों को अपनाएँ। जितने भी मूल गुण आदि हैं उनको अपनाएँ लेकिन अपने योग्य अपनाएँ जो उनके प्रतिरूप के योग्य है वही करें। अब इसका मतलब यह नहीं है कि मुनि के अनुरूप सब कुछ करना है तो सब कुछ करें, यहीं पर गलती हो जाती है। अनेकान्त धर्म हमेशा इस व्यवस्था के साथ चलता है, मर्यादा के साथ चलता है कि आपको यह भी कहा जाएगा कि हाँ! आप इस के बराबर हो और यह भी कहा जाएगा कि आप बराबर होते हुए भी अपनी योग्यता के अनुसार हो। इस बात को बड़ा समझना कठिन होता है। आज के बेटे-बेटियों के लिए बस

ही बात समझ में आती है। बराबर है, तो फिर सब बराबर हो गया। बराबर नहीं है, तो लड़ाई शुरू हो गई। यहाँ आचार्य क्या कह रहे हैं? महाव्रत भी है तो भी महाव्रतों जैसा आचरण भी है लेकिन फिर भी पूरा आचरण महाव्रतों जैसा नहीं करना। अब देखो! महाव्रतों की तरह विहार करना, महाव्रतों की तरह अहिंसा का पालन करना। देखते हुए चलना, भाषा समिति बोलना, पाँचों समितियों का पालन करना, महाव्रतों की तरह छह आवश्यकों का पालन करना। महाव्रतियों की तरह पाँच महाव्रतों का पालन करना लेकिन फिर भी खड़े होकर के आहार नहीं लेना। बैठ कर के ही आहार लेना, हाथ में ही आहार लेना खड़े होकर के आहार नहीं लेना। हाथ में ही आहार लेना लेकिन बैठ करके लेना। अब जब महाव्रती हैं तो फिर महाव्रती की तरह ही सब कुछ होना चाहिए था। खड़े होकर के भी आहार लेना चाहिए था, केवल बैठकर के आहार लेना है और हाथ में आहार लेना है, इसकी व्यवस्था तो बन गई लेकिन खड़े होकर के आहार नहीं ले सकते हो, स्थिति भोजन नहीं हो सकता। यह क्या हो गया? क्यों रोक दिया गया? यही समझने की जरूरत है। जहाँ पर एक समानता कही भी जाए, उनके जैसा कहा भी जाए तो यह मत समझ लेना कि हम completely वही हो गए हैं। उनके जैसा और वह होना इसमें बहुत अन्तर होता है। अग्नि की तरह किसी व्यक्ति को कहना और अग्नि हो जाना इसमें अन्तर होता है। शेर की तरह किसी को कहना और शेर हो जाना इसमें अन्तर होता है। ऐसे ही महाव्रतियों की तरह कहना और महाव्रती हो जाना इसमें अन्तर होता है।

सम्यग्दृष्टि जीव का जन्म कहाँ नहीं होता?

- भवनवासी देवों में
- वान व्यन्तर देवों में
- स्त्री पर्याय में
- दुष्कुल में
- अल्प आयु वालों में
- दरिद्रता के स्थानों में

आर्यिकाओं में अट्ठाईस मूलगुण पल नहीं सकते

महाव्रतों का पालन करो लेकिन जितना कर सकते हो, उतना ही करो। आपके लिए तीन दिन अशुद्धि के आयेंगे, चौथे दिन आपको स्नान करना पड़ेगा। उसके बिना स्त्री की शुद्धि नहीं होती। आपको नहाना पड़ेगा। क्या करेगा? अस्नान व्रत नहीं रहेगा। आपके लिए वस्त्र रखना ही है। अचेलकत्व नाम का आपका जो सात गुण होते हैं, अन्य 7 गुण, 28 मूल गुणों में उसमें अचेलकत्व गुण भी जाता है। वह आपका नहीं चलेगा, पलेगा ही नहीं तो यह मूल गुण कम होगा। आप खड़े होकर

के भोजन नहीं कर सकते हो क्योंकि यह केवल दिगंबर के लिए ही है। जो जिन रूप में ही होगा, जिन लिंग के ही प्रतिरूप होगा, उसी के लिए ही यह व्यवस्था है अन्य किसी के लिए व्यवस्था नहीं है। जिन लिंग वह सबसे अलग चीज है। **'जिन-लिंग धरानरा'** वह नरा ही होते हैं, नारी नहीं होती है। जिन लिंग को धारण करने वाला वह अपने आप में सब लिंग धारियों से अलग हो जाता है। जब वह खड़े होकर के आहार लेता है तो उसकी यह प्रक्रिया सब जितने भी अन्य मति साधु हो या अपने भी मत के जो साधु हो, इधर-उधर कोई भी जो छोटे स्तर पर अपना जीवन चला रहे हो, वह सब उससे अलग हट जाएँगे। यह व्यवस्था केवल खड़े होकर के आहार लेने की दिगंबर मुनि महाराज के लिए ही है और किसी के लिए नहीं है। हाँ! यह बताने के लिए इसलिए आचार्य कुन्द-कुन्द देव ने कहा कि **'पाणि पत्ते न भुंजे सचेलस्य'** जो सचेल है, वह कभी भी पाणिपात्र में भोजन न करे, ऐसा भी कहा है। यानी अपने ही हाथों में भोजन करने की एक वस्तुत: जो व्यवस्था है, वह उत्कृष्ट रूप से निष्परीग्रही के लिए ही है। लेकिन फिर भी यह व्यवस्था धीरे-धीरे आर्यिकाओं में भी आ गई और आर्यिकाएँ भी हाथ में भोजन कर लेती हैं लेकिन अगर आचार्य कुन्द-कुन्द देव के उस वचन को याद रखा जाए तो सचेल के लिए पाणि पात्र में भोजन करने का मना है। **'खेड़े बिना कादव्वं पानी पत्ते सचेलस्य'** खेल-खेल में भी कभी भी भोजन पाणिपात्र में सचेल को नहीं करना चाहिए ऐसा भी कहा है। भोजन की स्थिति से लिंग की अलग पहचान होती है तो बैठ करके भोजन करना यह नियामक हो गया। इससे भी सिद्ध हो गया कि वह महाव्रती होते हुए भी महाव्रतों जैसा आचरण कर रही हैं, महाव्रती नहीं हो गई है। समझ आ रहा है?

आर्यिका महाव्रती क्यों नहीं?

- पूर्ण परिग्रह का त्याग नहीं होता।
- वस्त्र रखना उनके लिए आवश्यक है।
- इसलिए सकल संयम नहीं हुआ।
- प्राणी संयम नहीं पल सकता।
- पूर्ण सम्यग्चारित्र का पालन नहीं।
- रत्नत्रय की पूर्णता नहीं।
- निर्विकल्प ध्यान नहीं।
- शुक्ल ध्यान नहीं।
- केवलज्ञान नहीं।

दिगम्बरत्व की पहचान निर्ग्रंथ लिंग से ही है

एक आचारसार नाम का ग्रंथ है,

उसमें आचार्य महाराज लिखते हैं कि स्त्रियों की कभी भी प्रतिमाएँ नहीं बनाई जाती हैं और स्त्रियों के कभी भी स्तवन नहीं रचे जाते हैं। यह देखो कितनी व्यवस्थाएँ बनी हुई हैं। आचार्यों ने कितनी मर्यादाएँ बना करके रखी हैं। स्तवन मतलब स्तुतियाँ। आज तक के इतिहास में कहीं पर भी आर्यिकाओं के गुणगान करने वाली स्तुतियाँ नहीं मिलेंगी। कहीं भी स्त्रियों की प्रतिमाएँ नहीं मिलेंगी। चाहे वह कितनी बड़ी आर्यिका रही हो, कुछ भी रहा हो यह नियम है। लेकिन वर्तमान में यह नियम भी खण्डित होते हुए देखने में आ रहे हैं। आर्यिकाओं का भाव इतना बढ़ रहा है वर्तमान में कि मूल जो परंपराएँ हैं, आचार्यों के जो ग्रंथ हैं और जो धाराएँ हैं उसका भी उल्लंघन कर रही हैं। अपने आप को बहुत बड़ा बड़े पद पर मानने वाली विदुषी और बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त आर्यिकाएँ बन चुकी हैं। आर्यिकाओं की कभी भी स्तुतियाँ नहीं होती, उनके कभी भी स्तवन नहीं होते, उनकी कभी भी आरतियाँ नहीं होती। उनकी कभी भी पूजाएँ नहीं होती। जब स्तवन नहीं होगा तो पूजा कहाँ से हो जाएगी। सोचने की बात है। यह लिखा हुआ है, शास्त्र में लिखा हुआ है, आचारसार में लिखा हुआ है कि उनके अगर उनको मुक्ति हो रही है, तो फिर उनकी प्रतिमाएँ और स्तवन क्यों नहीं किए जाते हैं? ऐसा प्रश्न उठाया गया आचारसार नाम के ग्रंथ में, आप पढ़ लेना इसलिए उनके लिए कहा गया कि उन्होंने मुक्ति को जलांजली दे दी। क्यों दे दी? क्योंकि उनके लिए कभी भी प्रतिमाएँ नहीं बनती, उनके कभी भी स्तवन नहीं होते। जब स्तवन नहीं होता तो पूजन कैसे हो जाएगा? यह सब चीजें एक विशेष रूप से थी। निर्ग्रन्थ लिंग की दिगम्बरत्व में जितनी प्रतिष्ठा है और दिगम्बरत्व की जो पहचान है, वह जितना निर्ग्रन्थ लिंग के साथ है, अन्य सब लिंग औपचारिक रूप से हैं, वह औपचारिक लिंग की बराबरी निर्ग्रन्थ लिंग के साथ कभी नहीं हो सकती। हर सुधी श्रावक को यह बात हमेशा ध्यान में रखनी , जानने में आनी चाहिए। इसमें कोई पंथवाद नहीं होता। इसमें कोई भी अपना तेरा नहीं होता है, इसमें कोई गुरु परंपरा नहीं होती। यह परंपरा एक निर्ग्रन्थ लिंग कि जो बनाए रखने की परंपरा है, यह अपने आप में अलग और विशिष्ट परंपरा है।

SCAN TO WATCH

आर्यिकाओं के स्तुति-स्तवन नहीं होते-आचरण यथायोग्य आगमानुसार होना चाहिए

पंच परमेष्ठी के स्तवन होते हैं, पंच परमेष्ठी की ही पूजा होती हैं, पंच परमेष्ठी की ही आरती होती है और उन्हीं की स्तुति करने के लिए कहा गया है। क्षुल्लक, ऐलक, आर्यिकाएँ यह सब काम चलाऊ चीजें हैं, औपचारिक जिसको बोलते हैं। उपचार की महिमा इतनी नहीं बढ़नी चाहिए कि वह महाव्रतों के सामने खड़ी हो जाए दीवार बन कर के या महाव्रतों की तरह ही जो है उनका सब बिल्कुल बराबर सा होने लग जाए, यह व्यवस्था ही नहीं है। इसको यह नहीं समझना चाहिए कि स्त्रियों को नीचा किया जा रहा है। जिस लिंग की पहचान जिन-लिंग के माध्यम से आचार्यों ने की है, उसकी पहचान उसी रूप में होनी चाहिए। उसके equal अगर कोई चीज आती है, तो इसका मतलब है कि हम जिन लिंग को हानि पहुँचा रहे हैं, यह सीधी सी बात है, समझने की बात है। आप आचार्य कुन्दकुन्द देव के ग्रंथ पढ़ें, इन ग्रंथों को पढ़ें तो इससे आपको पता पड़ेगा कि यह सब जो आचरण कहा गया है। कई लोग यह कहने लग जाते हैं- देखो! यह क्या लिखा है? **'श्रमणिया तस्समाचारा'** उनका समाचार भी श्रमणियों का, जैसा मूलाचार में लिखा है वैसा ही करना चाहिए मतलब मूलाचार में जैसे मुनियों के लिए लिखा है वैसा ही सब कुछ श्रमणियों के लिए करना चाहिए। फिर करके दिखाओ! मूलाचार में तो मुनि महाराज के लिए लिखा है- खड़े होकर के आहार करेंगे, तुम भी खड़े होकर के आहार कर लो। मुनि महाराज के लिए तो नग्न रहना है, तुम भी नग्न होकर दिखा लो। जैसा मूलाचार में लिखा है वैसा ही सब करना है तो करके दिखाओ, कैसे करोगे? मूलाचार में तो मुनि महाराज के लिए लिखा है कि वे आतापन योग कर सकते हैं, अभ्रावकाश योग कर सकते हैं, प्रतिमा योग लगा सकते हैं। लेकिन ये सब चीजें आर्यिकाओं के लिए निषेध है, हर चीज मूलाचार में लिखी है वैसी ही हमें करना है। ऐसी जिद भी कुछ आर्यिकाएँ पकड़ी रहती हैं तो उसके लिए भी आचार्य कहते हैं कि देखो! यथायोग्य हर चीज होती है। अपनी योग्यता के अनुसार ही आपको आचरण करना है। यथा योग्य का मतलब होता है- आपके योग्य जितना आचरण है, उतना ही आप करें। अगर मूलाचार में लिखा है कि मुनि महाराज को नमोस्तु बोलना तो आप भी आपके लिए नमोस्तु बुलवा लो फिर वंदामि क्यों बुलवाते हो। कुछ तो अलग है न तभी तो उनके लिए वंदामि बोलने को कहा, मुनि महाराज के लिए नमोस्तु बोलने को कहा। पंच परमेष्ठी के लिए जो शब्द है, जो संज्ञाएँ हैं, जो पूजा का व्यवहार है, जो स्तुति करने की अपनी एक अलग परिभाषा है वैसी चीजें कभी भी आर्यिकाएँ, क्षुल्लक और ऐलकों के साथ में नहीं होती है। यह जिनागम की व्यवस्था है। इसे कोई समझने की कोशिश करे तो करे नहीं करे तो आदमी अब यह समझने लग जाता है

SCAN TO WATCH

कि अपनी किसी परंपरा के अनुसार बोल रहे हैं। जबकि यह कोई परंपरा नहीं, यह भगवान जिनेंद्र देव की परंपरा है, यह आचार्य कुंदकुंद की परंपरा है। आर्यिकाओं के लिए इस तरीके से कभी भी जो यह स्तवन होना, पूजन होना, बड़े-बड़े उनके ऊपर स्तुतियाँ होना यह सब चीजें पहले कभी नहीं होती थी। ऐसा आचारसार में लिखा हुआ है। अब होने लगा तो इसका मतलब है- यह भी हमने परंपरा का खण्डन खुद कर दिया। आचार मार्ग के विरुद्ध हम खुद चल रहे हैं। आर्यिकाओं के लिए भी आचार्यों की तरह 36 मूल गुण का धारी आचार्याणि तक लिखा जाने लगा है। क्या होता है? क्या कभी आर्यिका किसी आचार्य के बराबर हो सकती है। आचार्य जो आचार्य परमेष्ठी के रूप में हैं, 36 मूल गुणों के धारी हैं उनके बराबर में क्या कभी स्त्री इतनी ऊँची पहुँच सकती है। कितनी ही पढ़ी-लिखी हो जाए, कितनी ही ज्ञानी हो जाए, ग्यारह अंग से ज्यादा तो किसी को ज्ञान हो ही नहीं सकता है। उसकी अपनी योग्यता है और उस योग्यता को अगर वह नहीं समझती है, तो इसका मतलब है कि वह सब कुछ समझ कर के भी गलत कर रही है। यह आर्यिकाओं को समझना चाहिए उनके लिए यह चीजें इतनी उपयुक्त हैं कि उनका आचरण बड़ा व्यवस्थित, मर्यादित और बड़ी आगम की मर्यादा के अनुसार बनाया गया है और उसी मर्यादा में रहकर के वह आचरण करती हैं तभी अपने संयम का पालन कर पाती हैं। नहीं तो उनका संयम वैसे भी नहीं पल रहा है और इस प्रकार की प्रवृतियाँ होने लग जाती हैं तो ख्याति-पूजा-लाभ में बहने वाले लोग कभी भी संयम का पालन कर नहीं सकते। यह बिल्कुल सही बात है। आचार्य कुन्दकुन्द देव कहते हैं- अगर आपको इस तरीके की ख्याति पूजा-लाभ की इच्छाएँ हैं कि हमारी पूजाएँ हो, हमको आचार्याणि कहा जाए। हमको यह पद दिये जाएँ तो आप कभी भी संयम के योग्य नहीं हो। ठग रहे हो आप दुनिया को! मार्ग भी बदल रहा है और आप दूसरों को ठग भी रहे हो। आप अपनी महत्ता बढ़ाने की, अपनी महत्वाकांक्षा को बढ़ाने की कोशिश में लगे हो। इससे आपको कोई भी जिन दर्शन के अनुसार जो लाभ मिलना चाहिए, वह आपकी आत्मा का लाभ कभी भी आपको आत्मा की भावना, यह सब चीजें आ ही नहीं सकती क्योंकि यह चीजें बिल्कुल विरोधी हैं, शुद्धात्मा की विरोधी हैं, शुद्धात्मा की भावना की विरोधी हैं, आचार्य ऐसा कहते हैं। ख्याति-पूजा- लाभ की इच्छा में पड़ने वाले साधक कभी भी अपनी शुद्धात्मा का लाभ प्राप्त नहीं कर सकते, सम्यग्दर्शन की भावना ही नहीं होती। ऐसी स्थितियाँ जब हमारे सामने आती हैं तब हमें समझ में आता है कि यह जो प्रतिरूप है वह केवल एक व्यवस्था है, निमित्त है। प्रयोजन के अनुसार उनके लिए अलग व्यवस्था बनाई गई है। उससे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि हम भी उन्हीं की तरह हो गए।

पर-वस्तु में ममत्व भाव भी मूर्च्छा परिग्रह है

एक चीज और आती है। कई बार कोई व्यक्ति सोच सकता है, विचार भी आता है तर्क भी उपस्थित किया जा सकता है कि आप अगर कहते हो कि मूर्छा परिग्रह है। क्या कहा जाता है? मूर्छा परिग्रह है। फिर आप हमारी एक साड़ी के पीछे क्यों पड़े हो? एक वस्त्र के पीछे क्यों पड़े हो? परिग्रह तो किसका नाम है? मूर्छा का नाम है, यही तो कहा गया है। देखो! तर्क देने वाले हर तरीके के तर्क दे सकते हैं, अपने ही शास्त्रों के अनुसार अपनी ही चीजें निकाल कर के तर्क दे सकते हैं। लेकिन जिन्हें संपूर्ण आगम का ज्ञान नहीं होता वह किसी भी तर्क के माध्यम से अगर कोई बात सिद्ध भी करते हैं तो भी वह अज्ञानी ही कहलाते हैं। मूर्छा यदि परिग्रह है, तो मूर्छा भीतरी भाव का नाम है, यह ठीक है! क्या इससे फिर यह अर्थ निकाल लिया जाए कि केवल मूर्छा का नाम ही परिग्रह है, बाहर कितना भी परिग्रह पड़ा रहे उसका नाम कोई परिग्रह नहीं है। यही बात फिर श्रावक पर भी लागू हो जाएगी अगर आर्यिका पर लागू होगी। फिर श्रावक को भी हम क्यों कहेंगे कि परिग्रह का परिमाण बनाओ। पाँचवाँ जो श्रावक का एक अणुव्रत है, **'परिग्रहपरिमाणव्रत'** उसको भी फिर हमें खण्डित करना पड़ेगा, छोड़ना पड़ेगा। बोले! इसकी तो जरूरत ही नहीं है। मूर्छा परिग्रह, परिग्रह अपने पास में रखो लेकिन उससे कोई मूर्छा नहीं रखो। इसका नाम है- मूर्छा परिग्रह क्योंकि मूर्छा का नाम ही परिग्रह है। हमारे अन्दर मूर्छा नहीं है। हमारे घर में tv set रखा हुआ है, sofa set, fridge set है, सब set है सब रखे हैं। अपनी-अपनी जगह पर रखे हुए हैं। हमें कोई उसे मूर्छा नहीं है। बस! काम लेते हैं, चलता है। उसके टूट जाने से, मिट जाने से हमें कोई फर्क नहीं पड़ता। फिर आता जाएगा दूसरा आ जाएगा, जब आएगा आ जाएगा। खराब हो जाए हो जाए, हमें चलो कोई चिंता नहीं, हमें कोई मूर्छा नहीं लेकिन उसका use कर रहे हैं। बोलो! अगर इस प्रकार से सूत्र की व्याख्या की जाएगी तो कोई भी व्यवस्था अपरिग्रह की बनेगी ही नहीं। परिग्रह परिमाण व्रत का फिर कोई पालन करेगा ही नहीं, अपरिग्रही कोई होगा ही नहीं। फिर तो साधु भी यही कहेगा हमारे लिए भी फिर जब आर्यिकाओं के लिए है तो फिर हमारे लिए भी क्या फर्क पड़ रहा है? कुछ भी रखे अपने पास में, मूर्छा नहीं है परिग्रह नहीं है। समझ आ रहा है? आचार्य कहते हैं- ऐसी कभी भी गलत व्याख्याएँ नहीं करना चाहिए। यह भी व्याख्याएँ होती हैं कि एक वस्त्र रखने से हमारे ऊपर क्या फर्क पड़ता है? हमारे लिए कोई मूर्छा तो नहीं उससे तो आचार्य कहते हैं- उसमें मूर्छा है। क्यों है? क्योंकि आपको उस वस्त्र की संभाल करनी पड़ती है। अगर वह वस्त्र हवा से कहीं उड़ जाता है तो आपको उसे संभाल कर के अपने ही पास रखना पड़ता है। अपने बदन

पर पड़ा हुआ भी वस्त्र अगर कहीं इधर-उधर हो जाता है तो उसे भी संभाल कर के अपने ही पास में रखना पड़ता है। मेरा ही है, मुझे ऐसे संभाल कर रखना है। उसका परावरण करना है। यह चीज बताती है कि हमारी अपने शरीर से भी मूर्छा है और उस परिग्रह से भी मूर्छा है। उसके बिना हमारा काम चल नहीं सकता है। तर्कों की कितनी भी आप लंबी व्याख्या कर ले, तर्क कभी भी समाप्त नहीं हो सकते अगर हम उस वस्तु स्थिति को वास्तव में neutral होकर के सोचने की कोशिश न करें।

यथाजात रुप को धारण करने वाला दिगम्बर लिंग

एक तर्क यह भी उठाया जाता है जब मुनि महाराज नग्न होते हैं तो क्या मुनि महाराज को लज्जा नहीं आती है? नहीं समझ आ रहा है? स्त्रियों के लिए लज्जा आती है। उनके लिए तो आपने 2 दिन पहले प्रवचन में उनका आभूषण बना दिया कि स्त्रियों को तो लज्जा आनी चाहिए। एक प्रश्न यह भी उठता है, उठाया जा सकता है, बहुत सी स्त्रियों उठा लेती हैं। कुछ सोचती भी रह जाती हैं, कुछ कह नहीं पाती लेकिन अपने मन में सबके संप्रेषण से प्रश्न आ जाते हैं। आपने स्त्रियों के लिए तो लज्जा को आभूषण बना दिया। स्त्रियों के लिए तो लज्जा आ रही है और आप जो है दिगम्बर हो गए। आपने बिल्कुल वस्त्र उतार दिये, आपको लज्जा नहीं आती। अगर कहो कि आपको लज्जा नहीं आती है तो फिर हम भी कह सकते हैं कि हमें भी लज्जा नहीं आती। क्योंकि दो ही चीजें तो हैं- या तो निर्लज्ज या सलज्ज। या तो लज्जा से रहित हो जाना, निर्लज्ज हो जाना या लज्जा से सहित हो जाना। आप बताओ कि आपके लिए क्या है? अगर यह कहा जाए कि आप निर्लज्ज हो गए तो हम भी निर्लज्ज होने के लिए तैयार हैं। अगर आप सलज्ज हो तो फिर हम भी लज्जा सहित हो करके अपना पालन करने के लिए तैयार हैं तो आचार्य इसके लिए भी समाधान देते हैं। यह ध्यान रखो कि निर्लज्ज और सलज्ज में क्या अन्तर होता है? निर्लज्ज का मतलब क्या होता है? जिसे लज्जा नहीं रही उसका नाम निर्लज्ज नहीं है। जो लज्जा के साथ होते हुए भी विवेक से नीचे गिर रहा है, असभ्यता के साथ आ रहा है उसको निर्लज्ज कहा जाता है। मान कर चलो, घर में कोई भी व्यक्ति सिगरेट नहीं पीता। घर में एक लड़का है जो सिगरेट पीने की कोशिश करता है लेकिन घर में सबके सामने नहीं पीता, कहीं एकान्त कोने में पी लेता है। हम उसको क्या बोलेंगे? माता-पिता के सामने नहीं पी रहा है, घर वालों के सामने नहीं पी रहा है। क्यों?

SCAN TO WATCH

क्योंकि वह सलज्ज है, एकान्त में पी रहा है वहाँ वह निर्लज्ज है, एकान्त में निर्लज्ज हो रहा है और सबके सामने सलज्ज हो रहा है। ऐसा जो सलज्जता और निर्लज्जता का जो mix व्यवहार करेगा उसके लिए यह मार्ग नहीं है। आप क्या कहोगे मुनि महाराज के लिए? मुनि महाराज निर्लज्ज है कि सलज्ज हैं? कोई आपसे पूछने लगे कोई श्रावक भी, कोई non-jain व्यक्ति भी आप जैनों से पूछने लगे आप क्या उत्तर दोगे? बताओ? आप के महाराज को लज्जा क्यों नहीं आती? आपके महाराज बिल्कुल निर्लज्ज क्यों रहते हैं? आप क्या बोलोगे? आपके पास भी कोई उत्तर है कि नहीं? निर्लज्ज और सलज्ज यह परिभाषा या यह शब्द वहाँ लगते हैं जहाँ आदमी अपने दोषों को छिपाता है या एकान्त में उन दोषों को प्रकट करता है। यह ध्यान रखो! कितनी ही ऐसी चीजें होती हैं जो हम सबके सामने नहीं करते हैं, एकान्त में करते हैं। एकान्त में हम बिल्कुल निर्लज्ज हो जाते हैं और सबके सामने हम सलज्ज हो जाते हैं। सलज्ज और निर्लज्ज ये शब्द दोनों वहाँ हैं, जहाँ हमारे अन्दर कोई दोष हो और हम उन्हें सबके सामने न रख सके, प्रकट न कर सके। वहाँ पर इन शब्दों का प्रयोग हो जाता है- सलज्ज और निर्लज्ज। लेकिन जहाँ व्यक्ति का व्यक्तित्व सलज्जता और निर्लज्जता से इतना ऊपर उठ जाता है कि उसे यह भाव नहीं आता कि मैं लज्जा सहित हूँ या निर्लज्ज हूँ, वहाँ उसको कहा जाता है- यथाजात दिगंबर रूप को धारण करने वाला मुनि लिंग, वह इन दोनों से ऊपर उठी हुई चीज है। उसको न हम सलज्ज कहेंगे, न निर्लज्ज कहेंगे आप समझने की कोशिश करो। इन दोनों से ऊपर उठी हुई चीज है। लज्जा आएगी तो क्या करेगा? क्या करेगा लज्जा आएगी? नग्न को दिखाएगा नहीं क्या? अब आहार करने के लिए खड़ा है क्या करेगा? अब लज्जा आएगी तो आहार कैसे करेगा? विहार कैसे करेगा? कायोत्सर्ग कैसे करेगा? कैसे स्त्रियों के बीच में खड़ा होगा? कैसे बोलेगा? लज्जा नहीं है तो क्या निर्लज्ज हो गया? वह निर्लज्जता नहीं है, जो निर्लज्जता आपके पास में है। ऐसी भी चीजें होती हैं जो जैसे संज्ञी असंज्ञी से ऊपर उठे हुए अरिहंत भगवान कौन हैं? न संज्ञी हैं और न असंज्ञी हैं। न मन सहित हैं और न मन रहित हैं। ऐसी जैसी एक तीसरी stage होती है, ऐसी ही मुनि महाराज की यह एक अवस्था होती है। न वे सलज्ज हैं, न वे निर्लज्ज हैं। वे इन दोनों ही चीजों से ऊपर उठे हुए हैं। अब कोई कहे महाराज! थोड़ा समझाओ तो कैसे। हम आपसे पूछते हैं आपके घर में आपका छोटा बच्चा होता है- 2 साल का, 4 साल का, अब तो 4 साल के बच्चे अब इतने नहीं रहते। साल 2 साल का बच्चा होता है। जब वह चलने लग जाता है, खड़ा होकर के पैरों से भी चलने लग जाता है तो भी नग्न होकर के घर में घूमता रहता है, घूम लेता है। आप उसे देखो कि वह क्या है? क्या उसे बिल्कुल नग्न रहने में लज्जा आ रही है? क्या वह लज्जा से सहित है? उसकी मानसिकता को आप परखो। वह नग्न रहने में भी

उतना ही प्रसन्न है जितना कपड़े पहनकर करके प्रसन्न है और नग्न रह कर के भी वह इतना ही घूम लेगा, कहीं भी घुमा लाओ उसको वह कभी नहीं कहेगा कि मुझे कपड़े पहना दो। कब तक? जब तक कि उसके अन्दर यह भाव न आ जाए कि "मुझे लज्जा आ रही है" समझ में आ रहा है न? जब तक कि उसके अन्दर यह sense develop नहीं हुआ कि मुझे लज्जा आ रही है। मेरे अन्दर कोई विकार आ सकता है, इस बात का उसके अन्दर जब तक कोई डर नहीं आता तब तक वह न सलज्ज कहलाएगा, न निर्लज्ज कहलाएगा। वह भी सलज्ज और निर्लज्ज से ऊपर उठा हुआ कहलाएगा। इसीलिए मुनि महाराज की उपमा दी जाती है कि यथाजात बालक की तरह! यथाजात का मतलब जो अभी जन्म लिया है। ऐसे बालक की तरह वह मुनि महाराज भी निर्विकार होते हैं और प्रसन्न रह करके समाज के बीच में और सब के बीच में रह लेते हैं। इसलिए उन्हें हम निर्लज्ज और सलज्ज इस श्रेणी से ऊपर उठा हुआ कहते हैं। समझ आया? ये समझने की चीजें हैं, ये common sense की बातें हैं, आप लोगों को मालूम होना चाहिए। तभी आप इन चीजों की व्याख्या कर पाओगे, समझा पाओगे, नहीं तो इन बातों पर कभी court case भी लग जाएँगे। court में भी जो वकील के सामने argument करने पड़ेंगे तो आपको भी इसी तरीके के ही व्याख्यान देने पड़ेंगे, उनको समझाना पड़ेगा। हम उस बेटे की बात नहीं कर रहे हैं जो एकान्त में सिगरेट पी रहा है और फिर सबके सामने नहीं पी रहा है। किसी स्त्री से या किसी से एकान्त में मिल रहा है और सबके सामने नहीं मिल रहा है, उसकी चर्चा यहाँ पर नहीं है, उसका उदाहरण यहाँ नहीं है। यहाँ पर किसका उदाहरण बैठेगा? उस **यथाजात बालक** का जो अभी उस भाव में नहीं आया कि मुझे पता ही नहीं कि मैं सलज्ज हूँ कि निर्लज्ज हूँ? मैं तो अपने आप में मस्त हूँ, अपने आप में आनंदित हूँ। उसके अन्दर इतनी यह निर्विकारता का भाव जब आ जाता है तो वह चीज समाज में अपने आप आदरणीय हो जाती है और इसलिए समाज इस निर्ग्रंथ लिंग को हमेशा से स्वीकार करती आई है और हमेशा स्वीकार करती रहेगी। इसमें किसी को कोई भी विरोध इसलिए नहीं होता है। इसी का नाम भाव लिंग है और जो इसके साथ में यह ऊपर दिख रहा है वह द्रव्य लिंग है। ऐसी प्रसन्नता, ऐसी निश्छलता, ऐसी निर्विकारता जहाँ रहती है, वहीं पर यह भाव लिंग और द्रव्य लिंग दोनों साथ-साथ चलते हैं। अलग से कोई भाव लिंग नहीं आता। द्रव्य लिंग के बिना कभी भाव लिंग नहीं होता और भाव लिंग के बिना कभी द्रव्य लिंग भी नहीं होता।

स्त्रियाँ यथायोग्य मर्यादा पूर्वक आचरण करके आर्यिका बन सकती हैं

इसलिए यह समझने की कोशिश करो कि अर्यिकाओं की अपनी कितनी मर्यादाएँ हैं? उनकी अपनी उस मर्यादा में रहकर के उन्हें आचरण करना है। इसलिए आचार्यों ने यहाँ लिखा है कि **'कुलरूववओ जुत्ता'** अपने कुल के योग्य आचरण करो। इसलिए आपके लिए आर्यिका तक पहुँचने का प्रावधान है। रूप का मतलब ऐसा रूप होना चाहिए जो कि देखने में बुरा न लगे। समझ आ रहा है? रूप का मतलब कोई भी वहाँ पर सुंदरता का competition नहीं हो रहा है। रूप का मतलब जो समाज के लिए सबके लिए ग्रहण करने योग्य हो, सब लोग उसको देख कर के कोई भी अपना बुरा मन न बनाएँ, अंग-उपांग हंसी का पात्र न बने, ऐसा रूप होना चाहिए और वय भी ऐसी होनी चाहिए, उम्र भी ऐसी होनी चाहिए कि वह अपनी क्रिया अपने हाथ से कर सकें। वह भी न तो अति बाल हो और न अति वृद्ध हो। ऐसा नहीं हो कि कमर तो जो है धरती पर झुक रही हो, bend हो गई हो। अब हमें आर्यिका बनना है तो उस स्थिति में अब फिर आर्यिका बनना possible नहीं होता। एक अच्छी वय जिसमें बुद्धि भी सही चल रही हो, न तो बिल्कुल बाल बुद्धि हो और न बिल्कुल अधेड़ बुद्धि! हो जाए तो दोनों ही बुद्धियाँ खराब हो जाती हैं। इसलिए कहा जाता है कि जब तक बीच की उम्र है तब तक व्रत ले लो। बीच की उम्र में व्रत लेते-लेते अधेड़ बुद्धि वाले हो जाओगे तो संभल जाओगे क्योंकि पहले से संभलते हुए गए हो और last की उम्र में जाकर के अगर व्रत लेने की भाव करोगे तो फिर नहीं संभल पाओगे। क्योंकि वहाँ पर आपको फिर समझने का भाव नहीं आता। आप इतने ज्यादा habitual हो चुके होते हो कि आपको दूसरों के समझाने का भाव आ चुका होता है क्योंकि आप अपने घर पर अनुशासन करके आए हो, आप अपने बच्चों को संभालते हुए आए हो, सब पर अपना अधिकार जमाते हुए आए हो। अब आप कोई भी बात समझने के फिर mood में नहीं रहते हो, योग्य नहीं रहते हो। इसलिए आचार्य महाराज बूढ़ों को दीक्षा नहीं देते। बीच के वाले फिर भी सोचें तो यही एक उम्र होती है। अगर आप पहले से अपने को उस भाव में ढालते चले जाओगे तो last तक संभल जाओगे फिर बुढ़ापा बिगड़ेगा नहीं और केवल यह सोचोगे कि बुढ़ापे में जाकर के सब कुछ कर लूँगा तो फिर बड़ा मुश्किल हो जाएगा। फिर तो आप जहाँ बैठ गए तो आपको कोई उठा नहीं सकता है। बोले! हमें तो यही बैठना है। क्या करना है? हमें नहीं जाना, हमें नहीं उठना, हमें नहीं कुछ करना ऐसा भाव आ जाता है। सबके साथ रहकर के सबके जैसा, सब के अनुरूप, सबके अनुकूल, आचरण करने की भावना यह एक तभी रहती है जब तक हमारी बुद्धि सही रहती है। इसलिए आचार्यों ने कहा **वय** भी युक्त होनी चाहिए, उपयुक्त होनी चाहिए, appropriate age होनी चाहिए उसकी ताकि उसके लिए किसी भी प्रकार की बुद्धि की विकलता न रहे और बुद्धि की हीनता का कोई भी आचरण दिखाई

न दे। ऐसा आचरण श्रमणियों के लिए करने योग्य है जो आचरण पहले मूलाचार आदि में लिखा हुआ है और उसी आचरण के अनुसार जो चलती हैं उन्हीं के लिए कहा गया कि हाँ! यह भी रत्नत्रय की आराधना करने वाली स्त्रियाँ हैं और ऐसी स्त्रियाँ पहले भी हुई हैं। आगे की गाथा पढ़ते हैं-

प्रवचनसार गाथा-252

वण्णेसु तीसु एक्को कल्लाणंगो तवोसहा वयसा।
सुमुहो कुंछारहिदो लिंगग्गहणे हवदि जोग्गो॥

हैं तीन वर्ण जिनमें इक वर्ण वाला, आरोग्य से सहित हो, मुख सौम्य धारा।
सामर्थ्यवान तप में दृढ़ अंग वाला, नाबालवृद्ध पर हो मुनि लिंग वाला॥

अन्वयार्थ- (तीसु वण्णेसु) तीन वर्णों में से एक वर्ण वाला (कल्लाणंगो) अच्छे शरीर वाला (वयसा) उम्र से (तवोसहा) तप से सहन करने वाला (सुमुहो) अच्छे मुख वाला (कुंछारहिदो) अपराध रहित व्यक्ति ही (लिंगग्गहणे) जिनलिङ्ग को ग्रहण करने के (जोग्गो हवदि) योग्य होता है।

जिनलिंग धारण करने से पूर्व पुरुषों के लिए आगम में मापदण्ड

अब देखो! स्त्रियों की तरह पुरुषों के लिए भी यहाँ कहा जा रहा है कि कौन यह जिन लिंग को धारण करने योग्य होता है? उसकी यह योग्यताएँ, बाहरी योग्यताएँ भी बताई जा रही हैं। जैसे interview होते हैं न आपके, आपकी personality को देखा जाता है, health test भी होते हैं। उसी तरीके से यहाँ पर भी जिन लिंग को धारण करने वाला ऐसा नहीं कि कोई भी कर ले। उसके लिए भी कुछ योग्यताएँ बताई जा रही हैं **'वण्णेसु तीसु एक्को'** तीन वर्ण हैं। उत्कृष्ट वर्ण तीन कहलाते हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, इनमें से कोई भी एक वर्ण वाला हो सकता है। **'कल्लाणंगो'** जिसका अंग जो है, शरीर जो है कैसा हो? कल्याण प्रद मतलब अच्छा हो! भद्र हो! देखने में अच्छा लगता हो! **'तवोसहा'** तप को सहन करने वाला हो! **'वयसा'** मतलब अपनी उम्र से वह तप को सहन कर सके। **'सुमुहो'** जिसका मुख भी अच्छा हो। लोग उसको देखकर के मुँह न बनाएँ ऐसा भी देखना पड़ता है। **'कुंछारहिदो'** और लोक में जिसकी कोई **'कुंछा' मतलब** निंदा न होती हो, कहने का मतलब कोई जिसके कहीं धाराएँ न लगी हो। कोई court case न चल रहे हो, खोटे आचरण पहले न रहे हो, लोक में जिसका अपवाद न हो। कहीं आपने तो दीक्षा दे दी और बाद में लोग कहे महाराज यह क्या है? इस पर तो court

case चल रहा था। ऐसा नहीं हो सकता जैसे वर्तमान में टिकट दे दी जाती है न! किसी को भी टिकट पकड़ा दो। वह ऐसी टिकट नहीं है कि टिकट देने के बाद में फिर कोई निंदा करें कि भाई इस पर यह धारा लगी हुई है इसको यह टिकट क्यों मिल गई। टिकट तो राजनीति की मिल सकती है लेकिन धर्म नीति की टिकट यहाँ पर इस तरीके से नहीं दी जाती। यह भी एक आचार्यों के लिए सब कुछ देखने वाली चीज होती है, तो **'कुंछा' रहित** होना चाहिए, अपवाद से रहित होना चाहिए। पहले जिसका में कोई अपवाद न हुआ हो, लोक में किसी तरीके का अपवाद प्रकट न हो। कोई पुलिस में arrest न हुआ हो, यह सब चीजें होती हैं तब जाकर के **'लिंगग्गहणे हवदि जोग्गो'** वह इस जिन लिंग को ग्रहण करने के योग्य होता है। इसलिए निरपवाद जीवन जीना भी अपने आप में एक बड़े सौभाग्य की बात होती है तब जाकर के वह जिन लिंग को धारण कर पाता है। आगे पढ़ते हैं- क्या लिखा है?

हैं तीन वर्ण जिनमें इक वर्ण वाला, आरोग्य से सहित हो, मुख सौम्य धारा।
सामर्थ्यवान तप में दृढ अंग वाला, नाबालवृद्ध पर हो मुनिलिंग वाला॥

पंचम काल में जिनलिंग की गुणवत्तापूर्ण व्यवस्था

समझ आ रहा है? he is a fit one for accepting the ascetic emblem who has from the three casts whose limbs are healthy, whose age can stand the astortise, who is of winning appearance and whose character is free from any scandal. कोई scandal में फंसा हुआ नहीं होना चाहिए। यह जब होता है तब जाकर के इस तरीके से जिन लिंग की व्यवस्था सही बनती है, योग्य कहलाता है। अब देखो! अब आप सोचोगे कि पहले तो चोर लोग भी दीक्षा ले लेते थे। अंजन चोर, विद्युतचर चोर, ऐसे चोरों ने भी दिक्षाएँ ली हैं, कल्याण कर लिया है। पहले का जो समय होता था वह अलग समय था। आज का जो समय है वह एक अलग समय है। आज का समय क्या है? पहले के समय में और आज के समय में बड़ा अन्तर है। पहले के समय में यदि व्यक्ति कहीं कोई कुछ चोर या वैसा कोई व्यसनी हुआ भी करता था तो वह केवल एक गांव के लोगों को पता रहता था। दुनिया को पता नहीं रहता था, whatsapp नहीं थे, mobile नहीं थे। अब सब कुछ है और दूसरी बात यह है कि पहले व्यक्ति दीक्षा लेकर के जंगल में रह सकता था। अपनी आत्मसाधना में लीन हो गया। उसे मतलब ही क्या है? जब कभी कहीं आहार करने के लिए जाता है तो उससे भी कोई उसका परिचय नहीं रहता। वन से गया, जंगल से गया, शहर में गया आहार करके आया और अपनी साधना

करने बैठ गया। पहले के समय में और आज के समय में बड़ा अन्तर है। पहले अगर कोई भी कुरूप भी होगा चल जाएगा लेकिन आज क्या है? उसे समाज के बीच में रहना है, उसके चर्चे दीक्षा होने से पहले ही होने लग जाएँगे क्योंकि सबको मालूम होगा, उसका character certificate सबके पास में होगा। कोई कुछ भी उसकी दीक्षा में व्यवधान बन जाने के लिए भी whatsapp कुछ भी कर सकता है कि ऐसे व्यक्ति को दीक्षा क्यों दी जा रही है? आज के समय की परिस्थितियों के अनुकूल यह व्यवस्था है कि पंचम काल में यह व्यक्ति योग्य हो जिसके अन्दर इस तरीके की गुणवत्ताएँ हो। फिर भी कुछ चीजें ऐसी होती हैं कि जो व्यसन के रूप में न हो करके आदमी का एक standard बन जाती हैं। जैसे- मान लो अब कोई व्यक्ति खाया-पिया पहले अच्छा हो। मान लो पहले लोगों को पता भी हो कि भाई यह सिगरेट पीता है, यह शराब भी पीता है लेकिन अगर कोई व्यक्ति कभी सहसा बिल्कुल छोड़ कर के अपना आचरण बिल्कुल निर्मल बना लेता है तो भी समाज के लोग उसको स्वीकार कर लेते हैं बशर्ते कि वह उच्च कुल का होना चाहिए, बात का धनी होना चाहिए। अगर कभी गलत क्षेत्र में चला भी गया, कुसंगति के कारण से कोई गलत काम में पड़ भी गया लेकिन अगर वह सहसा बदल जाता है, तो भी वह accept कर लिया जाता है। समाज से पूछा जाता है, अगर समाज accept कर लेती है तो वह भी दीक्षा के योग्य हो जाता है। लेकिन वे व्यसन इतने ही होने चाहिए कि उसके लिए कोई बड़ी-बड़ी जेल जाना और यह सब काम में नहीं होना चाहिए।

योग्यता होने पर परिवर्तन हो जाता है

उसका character इतना तो होना चाहिए कि वह इतना समझ में आए कि भाई यह कुसंगति के कारण से ऐसा हो गया था। ऐसी भी दीक्षाएँ हो चुकी हैं। आचार्य शांतिसागर जी महाराज के समय पर एक व्यक्ति था, जो कहना चाहिए मतलब इसी तरीके का था। वह सब कुछ में लिप्त था लेकिन बाद में आचार्य शांतिसागर जी महाराज ने भी उनको दीक्षा दी और वह बहुत तपस्वी मुनि महाराज बने। जिसका character एकदम से बदल जाए वह भी व्यक्ति इस ढंग से योग्यता के साथ में अपना परिवर्तन कर सकता है, हो जाता है। कई लोगों के बारे में ऐसा सुनने में आता है कि दीक्षा से एक दिन पहले तक भी सिगरेट पीते रहे, तंबाकू खाते रहे। हाँ! छोड़ दिया तो छोड़ दिया। उनको मालूम था कल से जब छोड़ना है दीक्षा ले रहा है, कल से सब

छोड़ना है। छोड़ दिया तो छोड़ दिया लेकिन ये सब चीजें सामान्य चीजें हैं, जो एक समाज में acceptable हैं। तंबाकू खा लेना या सिगरेट पी लेना या कोई पुराना एक आदत पड़े होना। अगर उसे मालूम है कि भाई अब हमारी कल दीक्षा होनी है तो वह भी तैयार है। कल से अब कुछ भी जीवन भर कुछ भी नहीं करना है। ऐसे भी case हुए हैं, नाम नहीं खोल रहा हूँ। ऐसा भी हो जाता है लेकिन यह जरूरी है कि उसके बाद में वह दृढ़ प्रतिज्ञ होना चाहिए, पाप भीरू होना चाहिए। उससे बाद में अपने पाप से दहल लगने वाला उसका भाव होना चाहिए और इसी तरीके का भाव रहेगा तो ही वह अपने चरित्र में दृढ़ हो पाता है। इसलिए ये चीजें समझने की हैं कि एक तो यहाँ पर जो चतुर्थ वर्ण है, जिसे शूद्र वर्ण कहते हैं, उसके लिए यहाँ जिन लिंग को धारण करने की योग्यता नहीं बताई गई। तीन उच्च वर्णों में से कोई भी वर्ण वाला जिन लिंग धारण कर सकता है। ब्राह्मण भी, क्षत्रिय भी, वैश्य भी, क्षत्रिय और वैश्य तो करते ही थे, ब्राह्मण भी करते हैं। ऐसे खूब उदाहरण आपको आगम में मिलेंगे। क्षत्रिय के उदाहरण तो पूरे सब तीर्थंकरों के है ही हैं। सभी महापुरुषों के सब क्षत्रिय थे। ब्राह्मणों के उदाहरणों में आपको यह जितने भी इंद्रभूति वगैरह जो भगवान के गणधर बने ये सब क्या थे? सब ब्राह्मण थे। पाँच-पाँच सौ संख्या में एक-एक इंद्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति ये सब ब्राह्मण थे और वैश्यों में भी हैं। हाँ! शूद्र जिन लिंग धारण नहीं कर सकता। क्षुल्लक दीक्षा तक के लिए उसके लिए प्रावधान है। वह भी सक शूद्र का! उसमें भी दो facu।ty होती हैं। एक सक शूद्र, एक असक शूद्र। उनकी भी शुद्धियाँ करके उन्हें क्षुल्लक दीक्षा तक उनके लिए योग्यता बनाई जाती है। इस तरीके से यह जो योग्यता है, उस योग्यता में ये चीजें अपने आप चलती रहती हैं।

जिनलिंग धारण करने वाला ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य वर्ण में से एक वर्ण वाला होना चाहिए

इसलिए कहा गया तीन वर्ण में से कोई भी एक वर्ण वाला होना चाहिए। ब्राह्मण में भी इस तरीके से दीक्षा ली हैं, बहुत सारे ब्राह्मण लोग है न और वैश्य में भी मतलब जो बड़े-बड़े सेठ वैश्य का मतलब बनिया वृत्ति वाले जो व्यापारी लोग होते हैं, उन्हें वैश्य बोलते हैं। वैश्य व्यापार संगठन भी शहरों में बने रहते हैं तो यह लोग भी दीक्षा लेते हैं और उनमें भी बड़े-बड़े सेठ लोग हुए हैं। जैसे जंबू स्वामी वगैरह ये सब वैश्य ही थे। जंबू स्वामी जो जम्बू केवली वगैरह हुए न, ये सब भी वैश्यों की श्रेणी में ही आते थे। बड़े-बड़े सेठ व्यापारी सुकुमाल सेठ, यह सब सेठ ही कहलाते थे। इस तरीके के लोग भी दीक्षा लेते हैं तो यह कहा गया कि देखो!

कुल का भी कितना फर्क पड़ता है। अब हर चीज एकान्त रूप से ऐसा नहीं है कि भाव से ही धर्म होता है तो भाव प्रधान धर्म है। भाव भी है लेकिन उस भाव के साथ-साथ यह भी देखा जाता है कि आपका वह भाव अच्छा तभी बनेगा जब आपके पास में ये सब योग्यताएँ हो। जाति भी उच्च होनी चाहिए, कुल भी उच्च होना चाहिए। जो माता का पक्ष होता है वह जाति कहलाती है और पिता का पक्ष होता है वह कुल कहलाता है। यह दोनों ही पक्ष जो है, अच्छे होना चाहिए। इस तरीके से इन सब योग्यताओं के साथ में दीक्षा देने की बात आचार्यों ने कही है। इस तरह से यह स्त्रियों के लिए भी योग्य है और पुरुषों के लिए भी योग्य है। अतः आपको overal। यह समझना है कि कहीं पर भी अगर हम जिनवाणी को पूरा ध्यान से पढ़ते हैं तो उसमें कोई विवाद नहीं आता लेकिन अगर हम सिद्धान्त विरुद्ध चलते हैं, आचार्यों के अभिप्राय को नहीं समझते हैं तो विवाद पैदा हो जाते हैं। इसीलिए आचार्य कहते हैं- आप समझने की कोशिश करो विवाद मत करो। **'विवादो ना कर्तव्यः'** विवाद नहीं करना है क्योंकि विवाद करने से शुद्धात्मा की भावना का घात होता है। हमारे अन्दर शुद्धात्मा की भावना भी तब तक बनी रहेगी जब तक हम निष्पक्ष होकर के हर चीज को स्वीकार करें और किसी भी तरीके के विवाद में न पड़ें।

प्रवचनसार गाथा-253

जो रयणत्तयणासो सो भंगो जिणवरेहि णिद्दिट्ठो।
सो सव्वंगेण पुणो न होइ सल्लेहणा अरिहो॥२५३॥

सम्यक्त्व बोध व्रत भंग हि भंग होता, ऐसा कहे जिन सुनो मन दंग होता।
निर्ग्रन्थ साधु फिर वो नहि हो सकेगा, हो अंग भंग जिसका मन रो सकेगा॥

अन्वयार्थ- (जो रयणत्तयणासो) जो रत्नत्रय का नाश है (सो भंगो) वह ही विनाश है(जिणवरेहि) जिनेन्द्रदेव ने ऐसा (णिद्दिट्ठो) कहा है (पुणो) तथा (सो) वह (सव्वंगेण) सर्वांग से (सल्लेखना अरिहो) सल्लेखना के योग्य (ण होइ) नहीं होता है।

आचार्य कुन्द-कुन्द देव विरचित प्रवचनसार ग्रंथराज का स्वाध्याय चल रहा है। चारित्र चूलिका अधिकार के माध्यम से कुछ विशेषताओं को बताया जा रहा था। स्त्री प्रकरण संबंधी कुछ ग्यारह गाथाएँ आयी थी, उनका भी विवरण आपके सामने रखा था। इसी के आगे अभी एक गाथा और है जो स्त्री के साथ-साथ पुरुष से भी जुड़ी हुई है। जिसके माध्यम से हम आचार्य क्या कह रहे हैं, यह जानने की कोशिश करेंगे।

आचार्य कहते हैं- **'जो रयणत्तयणासो'** जो रत्नत्रय का नाश या विनाश है, **'सो भंगो'** वही भंग है मतलब वास्तविक विनाश वही है। **'जिणवरेहि णिद्दिट्ठो'** ऐसा जिनेन्द्र भगवान ने कहा है **'सो सव्वंगेण पुणो ण होई सल्लेहणा अरिहो'** जहाँ पर रत्नत्रय का विनाश हो जाता है, वह पूरे अंग के साथ में कभी भी सल्लेखना के योग्य नहीं होता है। इसी भाव को आचार्य महाराज ने लिखा है-

सम्यक्त्व बोध व्रत भंग हि भंग होता, ऐसा कहे जिन सुनो मन दंग होता।
निर्ग्रन्थ साधु फिर वो नहि हो सकेगा, हो अंग भंग जिसका मन रो सकेगा॥

दुरपवाद में न पड़ा हो ऐसा व्यक्ति ही निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य होता है

क्या कहा जा रहा है? पिछली गाथा में यह बताया था कि निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य कौन होता है? और यह बताया था कि चार वर्ण होते हैं- ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य और क्षुद्र। उनमें तीन वर्ण वाले इस निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य हो सकते हैं। उसके साथ-साथ यह भी बताया था

कि वह अच्छे कुल का होना चाहिए, उसका रूप-रंग भी अच्छा होना चाहिए और जो सबके लिए ग्रहण करने योग्य हो, किसी भी प्रकार के दुरपवाद में न पड़ा हो ऐसा व्यक्ति ही निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य होता है। उसी को यहाँ कहा जा रहा है। लेकिन इस गाथा में एक शब्द आया है- **'ण होई सल्लेहणा अरिहो'** वह सल्लेखना के योग्य नहीं होता है। निर्ग्रंथ दीक्षा के जो योग्य है, वही वस्तुतः सल्लेखना के योग्य है, यह यहाँ पर एक भाव निकल रहा है। आप सोच सकते हो कि सल्लेखना तो कोई भी कर सकता है। लेकिन यहाँ आचार्य यह कह रहे हैं कि जो वस्तुतः निर्ग्रंथ दीक्षा लेगा वही ढंग से सल्लेखना कर पाएगा और उसी की सल्लेखना होती है क्योंकि वह पूर्ण रूप से सल्लेखना के योग्य कहलाएगा। जब वह बाहर से भी योग्य होगा तभी वह भीतर से योग्य होता है। अगर वह बाहर से, शरीर से योग्य नहीं है तो भीतर से भी अपनी आत्मा की योग्यता को धारण नहीं कर पाता है। बाहर की योग्यता बताई थी कि बाहर से उसके शरीर के सब अंग-उपांग अच्छे होने चाहिए और कोई भी अंग-उपांग हीन इत्यादि भी नहीं होना चाहिए, विकृत भी नहीं होना चाहिए। तभी वह बाहर से निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य होगा और जब वह बाहर से इस तरीके से योग्य हो जाएगा तभी उसकी आत्मा में सम्यक् दर्शन-ज्ञान-चारित्र रूप रत्नत्रय का भाव घटित होगा।

निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य कौन होता है?

- ब्राह्मण, क्षत्रीय और वैश्य
- वह अच्छे कुल का होना चाहिए।
- वह अच्छे कुल का होना चाहिए।
- जो सबके लिए ग्रहण करने योग्य हो।
- किसी भी प्रकार के दुरपवाद में न पड़ा हो।
- सल्लेखना के योग्य हो।
- शरीर के सब अंग-उपांग अच्छे होने चाहिए।
- अंग-उपांग हीन इत्यादि नहीं होना चाहिए।
- अंग-उपांग विकृत भी नहीं होना चाहिए।

शरीर सम्बन्धी विकृतियाँ, जिन-लिंग सही नहीं होने से पुरुष भी निर्ग्रन्थ दीक्षा के योग्य नहीं होते

स्त्री प्रकरण में आपको यह भी बताया था कि स्त्रियों के अन्दर वह रत्नत्रय क्यों नहीं घटित होता है? क्योंकि उनके ऊपर वस्त्र का आवरण होता है। एक साड़ी रखने का उनके लिए नियम ही है कि उन्हें एक साड़ी रखना ही है। एक से अधिक नहीं रखना लेकिन एक

तो रखना ही है। यह जो उनके लिए नियम बन गया तो वह परिग्रह से सहित हो गई और परिग्रह से सहित होने के कारण से उनके अंतरंग में कभी भी रत्नत्रय की पूर्णता का भाव नहीं आ पाता। यही वजह यहाँ बताई जा रही है कि जैसे स्त्री के लिए योग्यता नहीं बनती वैसे कुछ पुरुष भी होते है जिनमें यह योग्यता नहीं बनती। उन पुरुषों में भी यहाँ बताया जाता है, जो यहाँ एक शब्द आया है **'सो सव्वंगेणपुणो'** यही शब्द आचार्य जयसेन महाराज के टीका में भी आया है और उन्होंने वहाँ पर लिखा है- **'से संभंगेणपुणो'** यह नीचे विशेषार्थ में लिखा हुआ है। मतलब अगर शरीर पूरा सही भी हो लेकिन अगर शरीर के कुछ विशेष अंग कुछ खराब हो, कुछ विकृतियाँ हो तो वह भी निर्ग्रंथ दीक्षा के योग्य नहीं होता है। जिन लिंग को धारण करने वाले के लिए जो शरीर का पहचान है-लिंग, वह भी सही होना चाहिए। यह यहाँ इस गाथा में बताया गया है। जो अंडकोष, वृषण इत्यादि होते हैं, वह भी सही होने चाहिए और वह देखने में भी जिन लिंग अच्छा होना चाहिए। ऐसा नहीं होना चाहिए जिसके माध्यम से लोगों के लिए कोई उपहास का भाव बने। समझ आ रहा है? यह इसलिए बताना जरूरी है कि पुरुष होने मात्र से यह नहीं समझ लेना कि हम जिन दीक्षा के योग्य हैं। पुरुष होने के साथ-साथ स्त्रियों के लिए तो निरावरण रूप दीक्षा है ही नहीं लेकिन पुरुषों में भी उन्हीं पुरुषों के लिए वह निरावरण होने योग्य होते हैं, जिनके लिए उनके शरीर में जो मुख्य चिन्ह हैं- उनका लिंग वह सही हो।

निर्ग्रंथ लिंग को वह पूर्ण धारण करने से ही सल्लेखना पूर्ण कहलाएगी

दो चीजें बताई गई- एक तो कभी-कभी जो मस्तक होता हैं वह भी कुछ खण्डित सा, भंग सा टेढ़ा-मेढ़ा हो तो अच्छा नहीं माना जाता। सामने दिखने वाला कपाल सही होना चाहिए और जो लिंग हैं वह भी सही होना चाहिए। यह भी एक बहुत बड़ी समस्या होती है। आप भले ही कुछ न कहे लेकिन बहुतों के साथ में यह एक समस्या होती है। जब आप जिन दीक्षा लेने के योग्यता के लिए सोचेंगे तब आपको यह सोचना होगा। यह योग्यता अगर बनी रहती है तो ही वह व्यक्ति अन्तिम समय में निर्ग्रंथ रूप धारण करके सल्लेखना के योग्य होता है। ढंग से सल्लेखना वह ग्रहण कर सकता है यह यहाँ बताया जा रहा है। क्योंकि सल्लेखना भी वही सल्लेखना पूर्ण कहलाएगी जिसमें निर्ग्रंथ लिंग को वह पूर्ण धारण कर सके। अगर आपके लिंग के उपर की जो skin होती है, वह अगर सही नहीं होती है, तो भी

एक दोष माना जाता है। जो अंडकोष इत्यादि होते हैं उनकी रचना सही नहीं होती है, तो वह भी दोष माना जाता है। इसलिए आचार्य यहाँ कहते हैं कि ये सब योग्यताएँ होंगी तो ही वह पुरुष योग्य होगा। आपको इसलिए भी यह चीज जानना योग्य है कि एक ऐसा भी समाज या संप्रदाय है, जहाँ पर जन्म लेते ही उस लिंग की संरचना को बिगाड़ दिया जाता है। समझ में आ रहा है? मतलब अब वह जीव कभी भी अपने भावों में कैसा भी परिवर्तन कर ले लेकिन अब वे उसको जन्म से ही इसके अयोग्य बना देते हैं कि वह कभी भी निर्ग्रंथ लिंग को धारण न कर पाए। यह भी एक दिमाग में रखने वाली बात है। इसलिए यहाँ कहा गया कि केवल बाहरी रूप ही नहीं, सब चीज हमारी व्यवस्थित होनी चाहिए और उसकी योग्यता के होने पर ही वह बाहरी रूप से निर्ग्रंथ लिंग को धारण करने के योग्य होगा और तभी उसकी आत्मा में सम्यग्चारित्र पूरा का पूरा पालन करने में आएगा। अगर वह लज्जाशील होगा, किसी भी प्रकार से डर रहा होगा तो वह कभी भी सम्यग्चारित्र का पालन नहीं कर पाएगा। ये बातें हम आपको पहले भी पिछले दिनों में बता चुके हैं कि निर्लज्ज में, सलज्ज में और जो निर्लज्ज और सलज्ज से उपर जो निर्दोष अवस्था में हैं उसमें क्या अन्तर होता है। उसके अन्दर किसी भी प्रकार की लज्जा का भी भाव नहीं होना चाहिए जो मुनि बनता है। वह नग्न रहते हुए भी कभी भी अपने अंगों को छिपाता नहीं फिरता है। किसी भी तरीके से अगर वह अपने अंगों को छिपाने का भाव करेगा तब तो वह कभी भी सम्यग्चारित्र का ढंग से पालन ही नहीं कर पाएगा और जो नग्न होने के बाद में भी अपनी नग्नता से शरमाता है तो उसके लिए भी आचार्य कहते हैं कि इसके लिए नग्न परिषह जीतने में नहीं आ रहा है क्योंकि बाईस परिषहों में एक नग्न परिषह रखा गया है। नग्नता का मतलब ही यह है कि जब आप निरावरण हो गए तो अब आप विचार न करें, मर्यादा के साथ रहे, मर्यादा के साथ उठे-बैठे, सोच-समझ करके अपनी चेष्टाएँ करें लेकिन ऐसा कोई लज्जा का भाव अपने अन्दर न लाए जो आपके चारित्र के लिए अतिचार लगाने वाला हो क्योंकि लज्जा करना भी चारित्र हो जाएगा। एक बहुत गहरी बातें आपको बता रहा हूँ। आपके लिए भले ही अभी मुनि दीक्षा लेने का भाव नहीं बन रहा हो लेकिन आपको यह जानना जरूरी है कि हम लेंगे तो हमारे अन्दर भी क्या भाव होना चाहिए?

मन में दोष होने से ही निर्लज्ज और सलज्ज का व्यवहार चलता है

मुनि महाराज निर्लज्ज नहीं होते हैं, यह हमने पिछले दिनों में बताया है। अब यहाँ पर श्रोता नये बैठे हैं, यह बात अलग है। लेकिन मुनि महाराज निर्लज्ज नहीं होते हैं और मुनि महाराज अगर निर्लज्ज नहीं हैं तो फिर क्या लज्जा आ रही है? हम उनको क्या कहेंगे?

सलज्ज कहे तो वे सलज्ज भी नहीं होते हैं, यह भी ध्यान रखना। अब उनके साथ यह कौन सी स्थिति है कि वे निर्लज्ज भी नहीं हैं और सलज्ज भी नहीं हैं। यह हम बता चुके हैं कि निर्लज्ज और सलज्ज का व्यवहार वहाँ चलता है, जहाँ हमारे मन में दोष होता है। यह सदोष के दो भेद हैं- जो व्यक्ति के अन्दर मन में दोष होगा, शरीर में दोष होगा वह अब निर्लज्ज और सलज्ज का व्यवहार करेगा। आप को बताया था कि ऐसे बहुत से काम हैं, जो आप सबके सामने नहीं करते हो लेकिन अकेले एकांत में कर लेते हो। एकांत में आप निर्लज्ज हो जाते हो और सबके सामने आप सलज्ज हो जाते हो। यह निर्लज्जता-सलज्जता आप में घटित होगी क्योंकि आप अपने भीतर भी दोष धारण किये हो और आपके भीतर के दोषों के कारण आपके शरीर में भी वे दोष प्रकट हो जाते हैं इसलिए आपको यह व्यवहार रखना पड़ता है कि कहाँ हमें निर्लज्ज होना है और कहाँ हमें सलज्ज होना है। जहाँ कोई नहीं होता है, वहाँ पर तो हम निर्लज्ज हो जाते हैं और जिसके साथ हमें निर्लज्ज होना चाहिए, उसके साथ भी निर्लज्ज हो जाते हैं लेकिन जहाँ पर कोई होता है तो वहाँ पर एक सभ्यता की तरह हम वहाँ पर सलज्ज भी हो जाते हैं। ये दोनों चीजें उनके अन्दर होते हैं जिनके अन्दर दोष हैं। यह मनोविज्ञान समझने की कोशिश करो। जो भीतर दोष धारण करते हैं, जिनके अन्दर कामादि विकार जीतने में नहीं आते हैं, जिनके काम के भावों के कारण से जिनके शरीर में विकार आ जाते हैं वही लोग इस तरीके की सभ्यता के साथ चलते हैं कि किसके सामने हमें निर्लज्ज होना और किसके सामने हमे सलज्ज होना है। यह भेद कहाँ आता है? जब हमारे अन्दर दोष होता है। उस दोष को हम अपने सभ्यता के अनुसार जब चलाते हैं तो यह भेद आ जाता है- सलज्जता और निर्लज्जता।

लज्जा जीत लेने का मतलब है- अपने अन्दर के विकार को जीत लेना

लेकिन मुनि महाराज के लिए भीतर भी दोष नहीं है और बाहर भी दोष नहीं है। उनके शरीर में भी आपको दोष दिखाई नहीं देगा, उनकी अंतरंग के परिणामों भी निर्विकारता रहेगी इसलिए उनके लिए सलज्जता और निर्लज्जता ये शब्द ही प्रयोग नहीं होते हैं। ये शब्द प्रयोग उन्हीं लिए होंगे जो दोष सहित होंगे। जो निर्दोष हो गए उनके लिए एक निर्दोष ही शब्द आएगा, निर्विकार ही शब्द आएगा। सलज्ज और निर्लज्ज ये शब्द उनके लिए आएँगे ही नहीं। यह पहले भी बताया है, आज फिर बता रहा हूँ। नये श्रोता हैं, कई चीजें नई बार,

बार-बार बताने से और अच्छी दिमाग में जाती हैं कि अगर आपसे कोई यह कहता है कि आपके महाराजों को लज्जा क्यों नहीं आती है? समझ आ रहा है? आप कहोगे कि उन्होंने लज्जा को जीत लिया है। लज्जा को जीत लेना अलग बात है और लज्जा अपने अन्दर आ जाए तो उस लज्जा के अनुसार प्रवृत्ति करके हम लज्जाशील बने रहे यह भी हमने कहा था और यह विशेष रूप से स्त्रियों के लिए कहा था। स्त्रियों के लिए भी यह प्रश्न आ जाता है कि हमसे तो लज्जाशील होने को कहा जा रहा है और आप निर्लज्ज हो रहे हो? उसका उत्तर हमने यह दिया था कि निर्लज्ज नहीं हो रहे हैं, वह लज्जा जीत ली गई है। लज्जा जीत लेने का मतलब अपने अन्दर के विकार को जीत लेना। पुरुष अपने अन्दर के विकार को जीत करके निरावरण हो सकता है लेकिन स्त्रियाँ कभी भी अपने अन्दर के विकार को जीत करके निरावरण नहीं हो सकती। पुरुष में भी वही व्यक्ति निरावरण हो सकेगा जिसने अपने अन्दर के कामादि विकारों को जीता हो। इसलिए यह निर्दोषता की परिभाषा में आ जाता है कि जो निर्दोष हैं वे जिन लिंग हैं। उसके लिए लज्जा और निर्लज्जता इन दोनों से उपर उठने का भाव आ गया लेकिन जो निर्दोष नहीं हैं वे इन दोनों घातों में विभाजित होंगे या तो आप सलज्ज होंगे कभी या आप कभी निर्लज्ज होंगे। कोई भी क्रिया मान लो आपके लिए कही पर भी एकान्त में सिगरेट पीने का भाव आ जाता है या कोई भी व्यसन करने का भाव आ जाता है, तो आप एकान्त में तो कर लेते हो। कुछ लोग ऐसे भी सभ्य होते हैं कि नहीं होते हैं? अपने घर परिवार के सामने नहीं करते लेकिन एकान्त में कर लेते हैं। इसका मतलब क्या है? जो एकान्त में किया जा रहा है, वह निर्लज्ज हो गया और जो सबके सामने नहीं किया जा रहा है, वह सलज्ज हो गया। यह भाव किस में घटित होगा? जिसमें दोष होगा। जो अपने दोष को सम्भालेगा उसमें सलज्ज और निर्लज्जपने का व्यवहार आएगा और जो बिलकुल निश्चल, बिलकुल बालक की तरह, निर्दोष बालक की तरह होगा उसमें किसी भी प्रकार का निर्लज्ज और सलज्ज का भाव नहीं आएगा। वह निर्दोष बालक की तरह निर्विकार रहकर के कहीं पर भी रहेगा तो वह अपने लिए इन दोनों भावों से ऊपर उठा रहेगा।

मुनि महाराज के अन्दर लज्जा, निर्लज्जता से रहित निर्दोष भाव, निर्विकार भाव होते हैं

आप भी जब पहले बालक थे, छोटे थे, क्या सुन रहे हो? हाँ! जब साल-दो साल के थे तब आपको घूमने में कोई लज्जा नहीं आती थी। आप घर में नग्न भी घूमते रहते थे, पकड़ना पड़ता था आपको। आपको मतलब सबको, पकड़ना पड़ता है, माँ-पिता पकड़ते

हैं कि किसको? कुछ पकड़ करके इसको कुछ पहना दूँ। उसको पहनने का भाव नहीं आता तो जबरदस्ती पहले पहनाया जाता है, एक झबला type का होता है। धीरे-धीरे पहले झबला पहनाया जाता है। फिर बाद में वह जब बड़ा होने लग जाता है, तो अपने आप पहनने लग जाता है। उस बालक की ओर देखो जिसको पहनाया जा रहा है, पहनने की इच्छा नहीं कर रहा है और पहनने की उसको कोई जरुरत समझ में नहीं आ रही है। वह निश्चल घूम रहा है, निर्विकार घूम रहा है। मुनि महाराज उसी बालक की तरह होते हैं, जिनके अन्दर किसी भी प्रकार का विकार नहीं होता। इसलिए उनके अन्दर न लज्जा का भाव है, न निर्लज्जता का भाव है। यह कहलाता है- निर्दोष भाव, निर्विकार भाव! यह जानना जरुरी है क्योंकि हमारे शरीर के दोष अगर बाहर दिख रहे हैं तो आचार्य कहते हैं- आपके मन में भी दोष है। इसलिए यहाँ कहा जा रहा है कि अगर आप यह चाहे कि हमारा मन निर्दोष है और बाहर शरीर में दोष है तो भी आचार्य कहते हैं- यह भी काम नहीं चलेगा। अगर आपके लिए जन्म-जात कोई दोष मिला है, हो सकता है किसी के नाम कर्म के कारण से ही कोई लिंग इत्यादि में दोष होता है, तो वह मिला होता है, तो वह व्यक्ति भी जीवन भर उसी दोष के साथ रहेगा तो वह भी निर्ग्रंथ लिंग को धारण करके कभी सल्लेखना की योग्यता को प्राप्त नहीं कर पाता है।

लोगों की स्वीकारता होनी चाहिए

अब मस्तक से कहा जाता है कि जैसे कुछ खंडित हो, दबा हुआ ज्यादा हो, वह कुछ देखने में अच्छा न लगता हो, इस तरीके के भी कहीं-कहीं कुछ ऐसे देखने में आ जाते हैं। एक शब्द आया है- खण्ड-मुण्ड। हाँ! कुछ मुण्ड जो है ऐसा खण्डित सा हो, टूटा हुआ सा हो तो भी वह निर्ग्रंथ दीक्षा के साथ में संल्लेखना के योग्य नहीं होता क्योंकि उसे उस तरीके से सामने देखने में लोगों के लिए स्वीकारता का भाव नहीं आ पाता। अपने भाव में यह फर्क पड़ेगा कि वर्तमान में, पंचम काल में इतनी उत्कृष्टता भावों में या इतनी दृढ़ता भावों में नहीं हो पाती है कि लोग अगर आपसे जुगुप्सा करे मतलब लोग आपसे ग्लानि करे और आप अपने भावो को सम्भाल पाएँ। इसलिए यहाँ पर एक शब्द आता है कि लोग **दुगुंच्छा** से रहित होना चाहिए। लोक में उससे घृणा करने वाले लोग नहीं होने चाहिए, लोगों की स्वीकारता होनी चाहिए। ये जिन लिंग क्यों निष्फिक्र हो कर के

स्वीकार किया जाता है? क्यों लोग समाज में और हर जगह पर अपनी स्वीकारता देते हैं? क्योंकि लोगों के लिए इससे किसी भी प्रकार का घृणा का भाव नहीं आता। लोगों में इस प्रकार के रूप को देख कर के कोई भी निंदा का भाव नहीं आता, अगर वह व्यवस्थित होगा। इसलिए भी एक शर्त है कि वे लोग जुगुप्सा से रहित हो मतलब लोग में निंदा के योग्य न हो। क्योंकि अगर लोक में लोग निंदा करेंगे, देखेंगे, हँसेंगे तो उससे भी आपके परिणामों में बिगाड़ आने की संभावना रहेगी। सही सबकुछ होने के बावजूद भी अगर कोई उपहास करे तो फिर आप आपके इस परिणाम को जीत सकते हैं। आप अपने अन्दर उस चारित्र मोहनीय कर्म के उत्पन्न उदय से होने वाले उस नग्नता के भाव को भी आप जीत सकते हैं। इसी को जीतने का नाम कहा जाएगा- नग्न परिषह को सहन करना। यह नग्न परिषह को सहन करने के साथ में यह जिन लिंग धारण किया जाता है।

मोक्ष का मार्ग स्त्रियों के लिए बन्द नहीं हैं, बस थोड़ा सा घूम करके आ रहा है

इसलिए पिछली गाथाओं में जो प्रकरण चला था आर्यिकाओं के लिए, स्त्रियों के लिए, उनके लिए यह मना किया गया कि वे निर्ग्रंथ लिंग को धारण नहीं कर सकती हैं तो यह भी कहा गया कि चलो! कोई बात नहीं, आपके लिए सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और देश चारित्र प्राप्त करने की आपके अन्दर योग्यता है। महाव्रतों को भी उपचार से धारण करने की आपके लिए योग्यता है और उस योग्यता के कारण से आप अपने जीवन को अच्छा बना सकते हो और इस जन्म में भी अच्छे व्रतों को धारण करके आगे के लिए भी आप अपने मोक्ष मार्ग का दरवाजा हमेशा के लिए खोल सकते हो, जैसा अन्य स्त्रियों ने किया। कौन सी अन्य स्त्रियाँ? सीता, सुभद्रा, रुक्मणी, द्रौपदी आदि ये जो स्त्रियाँ हुई, जैसे इन स्त्रियों ने अपने जीवन में अपनी पर्याय को सफल किया और पर्याय को सफल करके आगे वे स्वर्ग में देव बनी और अब वे स्वर्ग में भी अपना जीवन जी रही हैं तो उसके बाद में उनके लिए मनुष्य पर्याय मिलना निश्चित हो जाता है और वह मनुष्य पर्याय में इस तरीके के वह अपने दिगंबरत्व को धारण करके अपने रत्नत्रय की पूर्ण आराधना करके वह मोक्ष की पात्र भी बन जाती हैं। मतलब यह है कि मोक्ष का मार्ग स्त्रियों के लिए बंद नहीं है, बस! थोड़ा सा क्या हो रहा है? घूम करके आ रहा है।

अपनी साधना बढ़ाओ आपके लिए मोक्ष मार्ग खुला रहेगा

वर्तमान में भी घूमना तो सभी को है। मोक्ष का मार्ग वैसे देखा जाए तो पुरुषों के लिए खुला हुआ है लेकिन मार्ग ही खुला हुआ है, मोक्ष का दरवाज़ा तो भी उनके लिए भी बंद है। मार्ग का मतलब है- मार्ग पर चलना, रत्नत्रय की पूर्णता का भाव आना तो आचार्य कह रहे हैं- रत्नत्रय की पूर्णता के लिए भी हमें बाहरी रूप से भी सजग होना चाहिए और बाहरी रूप से भी हमें बिलकुल सही और निर्विकार होना चाहिए तब हमारे भीतर सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र् का पूर्ण भाव आएगा और तभी जाकर के हम अंतरंग और बहिरंग दोनों से रत्नत्रय का पालन करनेवाले कहलाएँगे मतलब हमारा भाव लिंग हो गया- सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र और यह जो जिन रूप दिखाई दे रहा है, यह हो गया हमारा द्रव्य लिंग और इन दोनों की समायोजना होगी तभी आपके लिए मोक्ष का मार्ग बनेगा। इसलिए यह मोक्ष का मार्ग पुरुषों के लिए तो पूरा बन जाता है लेकिन स्त्रियों के लिए अधूरे रूप में बनता है। आचार्य कहते हैं- आप थोड़ी सी और अपनी साधना बढ़ाओ। आपके लिए वह मार्ग आगे फिर खुला रहेगा और आगे पूर्ण रूप से प्राप्त होगा। बशर्ते कि आपको अभी इस जन्म में अपनी जितनी योग्यता है, उसका आप पूरा का पूरा मूल्यांकन कर लो। स्त्रियों के लिए अगर अपने जीवन को अच्छा बनाने का भाव आयेगा तो उन्हें भी हमेशा इस ओर ध्यान देना चाहिए कि हम केवल सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की चर्चा से ही संतुष्ट न हो जाए। हमें भी सम्यग्चारित्र को प्राप्त करके जितनी अपनी योग्यता है, उस योग्यता को प्राप्त करके अपनी आत्मा का पूर्ण भाव प्रकट करना जितना हम कर सकते हैं। अधिकतर देखने में आता है कि लोग सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान में ही संतुष्ट हो जाते हैं। सम्यग्चारित्र की बात आती है, तो लोग तरह-तरह के हमारे सामने बहाने आ जाते हैं और तरह-तरह के हम कहने लगते हैं कि हमारे लिए चारित्र् मोहनीय कर्म का उदय चल रहा है कि हमारे लिए अभी योग्यता नहीं है, कि हमारे लिए अभी माहौल अच्छा नहीं है। ऐसी अनेक तरह की बातें सुनने में आती हैं लेकिन आप यह ध्यान रखे कि जो आपके अन्दर की योग्यता है, वह योग्यता पूर्ण विकास को तभी प्राप्त होगी जब आप जितना आपकी पर्याय की योग्य चारित्र है वह चारित्र भी आप ग्रहण करने के लिए तत्पर रहें।

मोक्ष मार्ग की परिपूर्णता चतुर्थ काल में उत्कृष्ट संहनन के साथ ही हो पाती हैं

स्त्रियों के लिए कहीं पर भी, कोई भी कमी नहीं है और कहीं पर भी कोई भी बुराई नहीं की गई है। कुछ स्त्रियाँ इस प्रकरण को सुनकर के ऐसा लगने लगा उनको कि जैसे मान लो हमारे लिए तो कहीं कुछ है ही नहीं है। समझ आ रहा है? ऐसा भी नहीं समझना चाहिए। यह

जो मोक्ष का मार्ग और इसकी परिपूर्णता का भाव बताया जा रहा है, यह परिपूर्णता तो वैसे भी चतुर्थ काल में ही हो पाती है, उत्कृष्ट संहनन के साथ ही हो पाती है। लेकिन इस पंचम काल में भी हमारे पास जितनी योग्यता है हम उतना भी कहाँ अपनी योग्यता का मूल्यांकन कर रहे हैं और उतनी भी योग्यता का विकास हम कहाँ कर पा रहे हैं? आप देखोगे कि स्त्रियाँ कितनी भी परेशान हो वे परेशान तो हो लेती हैं लेकिन आज के समय में स्त्रियाँ परेशान हो करके भी कभी भी व्रतों की ओर आगे नहीं बढ़ती हैं। क्या समझ आ रहा है? पहले हम जब स्त्रियों के चरित्र को पढ़ते हैं, उनके जीवन को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि उन्हें एक बार परेशानी आ जाए, दो बार परेशानी आ जाए, तीसरी बार परेशानी आ जाए तो उनके दिमाग ठिकाने पर आ जाते हैं और वे सोचने लग जाते हैं कि भाई! अब तो अपनी पर्याय को सम्भालना है। अब तो अपना कल्याण करना है, यह तो बहुत हो चुका है। लेकिन वर्तमान में क्या देखने को मिलता है? कष्ट हम कितने भी सहन करते चले जाएँ, सब सहन कर लेंगे मोह के कारण से घर में रह कर के अपने परिवार के लेकिन हम उस राह को नहीं पकड़ते जो राह हमारे लिए भगवान ने दी है, तीर्थंकर भगवान ने हमें जो मार्ग बताया है।

लोक अपवाद बड़ी चीज होती है

आपने सीता का नाम तो सुना ही है और सीता के साथ भी अपने जो कुछ हुआ है, उसका भी ज्ञान आपको होगा ही। आप देखोगे कि अगर सीता ने अपने जीवन में सुख भोगे हैं तो सुख से ज्यादा दुःख भी भोगे हैं और वह दुःख कहाँ-कहाँ भोगे हैं? कितने स्थानों पर भोगे हैं और कितने बार भोगे हैं? यह भी आप अगर आकलन लगाओगे तो आपके जीवन के जो दुःख हैं, उसके आगे वे कहीं भी नहीं बैठेंगे। किसके आगे? उस सीता के आगे। अपने जीवन के अंत में जब उसकी अग्निपरीक्षा ली जाती है और वह अग्निपरीक्षा भी दे देती है, तो उसके बाद में रामचंद्र जी कहते हैं- अब सीता शुद्ध हो गई, अब लोक अपवाद से रहित हो गई, अब हम इसको स्वीकार कर रहे हैं। लोक अपवाद कितनी बड़ी चीज होती है, यह आप ही देखो। इसीलिए यहाँ कहा गया है कि पुरुष के लिए भी वह लोक अपवाद वाला पुरुष नहीं होना चाहिए जो दीक्षा के योग्य हो। कोई उसके ऊपर ऐसी कोई धाराएँ नहीं लगी होनी चाहिए, कोई केस नहीं लगे होने चाहिए, यह भी बताया गया। लोक अपवाद से रहित हो और उसका शरीर भी इस योग्य हो कि उसके लिए लोक में कोई अपवाद न हो। यह लोक

अपवाद इतनी बड़ी चीज होती है कि इससे बच कर के ही निर्ग्रंथ लिंग धारण किया जाता है। सीता के लिए भी परीक्षा ली गई उसी लोक अपवाद से बचने के लिए और राम को निष्कलंक होने के लिए कि लोक में जो अपवाद हो रहा है, उसके विषय में लोक के लिए शांति मिल जाए, लोगों के लिए समझ में आ जाए कि नहीं! इसमें सीता का कोई भी दोष नहीं है। इसलिए वह अग्निपरीक्षा ली गई तो जब अनिपरीक्षा हो गई, सीता निर्दोष सिद्ध हो गई, उसके बाद में रामचंद्र जी सीता से क्या कहते हैं? अब आपको पिछली बातें भूल जाना है और अब जो है पुनः अपनी पटरानी का जो पद है, महादेवी का जो पद है, इस पद को स्वीकार करके अब अपने को राम राज्य में आराम से रहना है।

राग से संयोग बनते हैं और वहीं से दुःख प्रारम्भ हो जाते हैं

सुन रहे हो? उस समय पर सीता का दिमाग क्या था? उस समय पर उसकी भावनाएँ क्या थी? और उस समय पर उसके मन में क्या विचार आते हैं यह बहुत समझने की जरूरत है। यह बहुत अच्छे ढंग से सोचने की जानने की जरूरत है। उसके दिमाग में वह सारी reel पिछली सब घूम गई, जो-जो उसके साथ हुआ। वह कहती है कि मेरे लिए अगर कोई दुःख मिला तो मुझे वह दुःख किस कारण से मिला? अब मुझे यह समझ में आ रहा है? अभी तक मैं शास्त्र में पढ़ती थी, यह राग ही दुःख का कारण है। क्या दुःख का कारण है? राग दुःख का कारण है। इसी राग से हमारा दुःख शुरू हुआ। अगर राग है, तो कहीं न कहीं संयोग का भाव आएगा और संयोग है, बस! वहीं से दुःख प्रारंभ हो जाते हैं। इसलिए आचार्यों ने कहा **'संयोगतो दुःखमनेकभेदम् यतोष्णते जन्मवने शरीरी'** आपके अन्दर दुःखों का समूह कहाँ से प्रारंभ होता है? संयोग से प्रारंभ होता है। वह संयोग किस कारण से बनता है? भीतर के राग के कारण से बनता है। उस सीता को वे पुरानी सारी की सारी घटनाएँ याद आने लगी क्योंकि अब वह पूर्ण धर्म भाव में थी। उसके शील के प्रभाव से, उसके धर्म के प्रभाव से उसकी रक्षा हुई थी तो अब वह सोचती है कि जिनको मैं अपना स्वामी मानती थी, जिन्हें मैं अपना सर्वस्व मानती थी वही जब हमारी परीक्षा लेने बैठ गए और जब हमारी रक्षा करने के लिए कोई नहीं था तो केवल हमारे ही धर्म ने हमारी रक्षा की है, तो अब हम उसी धर्म की ही शरण में जाएँगे, जिस धर्म ने हमारी रक्षा की है। कौन रक्षा करने वाला था? जो अपना पति, अपना परमेश्वर, सब का राजा वही जब हमारे सामने हमारी परीक्षा लेने लगा तो अब हम किससे भीख माँगे? किसके सामने प्रार्थना करें कि हमारी रक्षा करो?

समझ आ रहा है? कितनी बड़ी संकट की स्थिति होगी आप समझ सकते हो और उस स्थिति में जब उसके मन में यह भाव दृढ़ता का आ गया कि मेरी रक्षा किसने की? धर्म ने की और मुझे दुःख कहाँ से मिलना शुरू हुआ, कहाँ से? जब से मैंने आपसे संयोग किया तभी से मुझे दुःख मिलना शुरू हो गया। सुन रहे हो? कुछ अनयथा मत सोचना, स्त्रियों, महिलाओं, मानो या न मानो, जहाँ से आपके लिए लगता हैं कि हमें सुख मिलना प्रारंभ हुआ हैं, वहीं से ही दुःख की भी शुरुआत हो जाती है। यह बात अलग है कि दुःख को हम avoid करते चले जाते हैं और सुख के ही भाव में हम रहते हैं कि सुख हमें मिलता जाए, सुख को हम पकड़ते चले जाएँ। लेकिन ये दोनों चीजें parallel चलती हैं। उसके दिमाग में क्या घूमता है कि मेरे अन्दर राग था। अगर मैंने पहली बार जो आपके गले में माला डाली, अगर वही संयोग अगर हम उस समय पर अपने आप को उस राग भाव से बचा लेते। अगर माला भी हमारे हाथ में आ गई, अगर माता-पिता ने पकड़ा भी दी थी तो हम अगर इतनी हिम्मत कर लेते कि उस माला को लेकर के भगवान के दरबार में चले जाते और भागते हुए भगवान के ही पास जाकर के छोड़ आते कि भगवान मैं आपकी इन पुष्पों से पूजा कर रही हूँ और **'कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहाः'** अगर यह उसी समय कर देती तो आज हमें यह दुःख देखने को नहीं मिलते।

सीता के मन की पीड़ा

शुरुआत कहाँ से हुई? उस स्थिति से शुरू हुई, उस राग भाव से शुरू हुई और वहाँ से शुरू होने के बाद में देखो! फिर वह सोचती है, जब आपको दूसरी बार! चलो! मैंने एक बार गलती कर ली मैं आपकी पत्नी बन गई। पत्नी बन गई पत्नी बनने के बाद में आपको वनवास हुआ। जब वनवास हुआ, वनवास तो आपको हुआ था, यह तो नहीं कहा गया था कि राम के साथ में सीता भी जाएगी। मैं अपनी इच्छा से आपके साथ गई। मैं कष्ट भोगने के योग्य नहीं थी लेकिन फिर भी मैने सोचा कि जब मेरा पति कष्ट भोग सकता है, तो मैं भी भोग सकती हूँ और मैं अपनी इच्छा के साथ आपके साथ गई और आपके ही राग भाव के कारण से हमने वन की शरण ले ली। धूप में, गर्मी में, बरसात में, ठंड में, हर तरीके के माहौल में हमने रहने का भाव बना लिया। आपके राग के कारण से हमने सब प्रकार के कष्ट सहने की अपने मन के अन्दर एक दृढ़ता बना ली कि मुझे भी यह कष्ट सहना है। यह दूसरी बार हमने आपके राग के साथ गलती की थी। वह अपने मन में सोच रही, उसने कहा नहीं यह बात नहीं है। लेकिन यह सब reel उसके दिमाग में घूम चुकी और उसे यह समझ में आ गया कि देखो!

दूसरी बार जब हमारे मन में राग आया तभी तो मैं आपके साथ वन में गई और वन में गई तभी तो मुझे यह कष्ट सहना पड़ा कि रावण मुझे हरण करके ले गया। अगर मैं वन में नहीं होती तो रावण कैसे ले जाता हरण करके? मैं अपने राजमहल में होती तो मुझे यह सब कष्ट क्यों सहन करने पड़ते?

चलो! मुझे रावण भी हरण करके ले गया कोई बात नहीं। मैं वहाँ भी पहुँच गई और वहाँ पहुँचने के बाद उस रावण के लंका में पहुँचकर के भी मैं चाहती तो मैं वहीं पर यह सल्लेखना व्रत धारण कर लेती, मैं वहीं पर अपने केशलोंच करके आर्यिका व्रत धारण कर लेती। लेकिन वहाँ पर भी मुझे तुम्हारे राग के कारण से ऐसा करने का भाव नहीं आया। सुन रहे हो? वहाँ पर क्या राग आ गया? मेरा पति मेरे वियोग में दुःखी हो रहा होगा। अब हमें उसे और ज्यादा दुःखी नहीं करना और मुझे विश्वास है कि मेरा पति मुझे ढूँढ रहा है, एक दिन मुझे लेने आएगा। मैं उसके लिए पुनः उसके दुःख को दूर करूँगी और यह सोच कर के मैंने वहाँ पर किसी भी प्रकार से न तो अनशन किया, न मैंने वहाँ पर सल्लेखना ली। मैं चाहती तो वहीं पर यह प्रतिज्ञा कर लेती कि मेरा संल्लेखना मरण है, मैं चारों प्रकार के आहार का त्याग करती हूँ, मुझे अभी इस पर्याय से कोई प्रयोजन नहीं है और मैं उसी समय पर अपने केशलोंच करके आर्यिका व्रत धारण कर लेती लेकिन फिर भी मैंने नहीं किया। किस कारण से? वे आएँगे, हमें लेने आएँगे। इस राग भाव के कारण से हमने वहाँ पर भी अपना परिणाम सम्भाल करके रखा और हमने वहाँ पर भी धर्म भाव करने का पूर्ण हमारे लिए भाव था, माहौल था लेकिन वहाँ पर भी हमने राग के कारण से वह नहीं कर पाया। चलो! कोई बात नहीं, वह बला भी टल गई थी, वह भी आपत्ति गुजर गई और वह सब कुछ हुआ जैसा मैंने सोचा। मेरे पति मुझे मिल गए, मैं वापस अयोध्या में आ गई और अयोध्या में आने के बाद में मैं अच्छे ढंग से रहने लगी और मेरे गर्भ में भी दो पुत्र आ गए और उसके बाद में फिर मेरे पति ने मुझे फिर घर से बाहर निकाल दिया।

कोई बात नहीं! मैं फिर से जंगल में चली गई, अकेली भी रह आयी। अपने धर्म ने, अपने धर्म के साथ मेरी वहाँ पर भी रक्षा हो गई। मुझे वहाँ पर भी अपना भाई मिल गया, पुत्रों का पालन करने के लिए स्थान मिल गया, मेरे पुत्र बड़े हो गये, सब उनको भी मैंने पढ़ा-लिखा करके अच्छा सब प्रकार की विद्याओं में निष्णात बना दिया। वापस जब मेरे साथ यह हुआ कि मुझे लगा मुझे फिर से उस राजमहल में बुलाया जा रहा है, अयोध्या के राजा मुझे फिर से अपनाने के लिये बुला रहे हैं तो मैंने फिर से एक बार सोच लिया चलो! कोई बात नहीं,

पति तो आखिर अपने ही हैं, अभी तलाक तो हुआ ही नहीं था। नहीं समझ आ रहा है? पहले तो ऐसा कुछ होता ही नहीं था, जो आज होने लगा है और अगर होता तो सीता तो कभी ऐसा तलाक ले लेती? उसे तो तलाक लेना ही नहीं था। उसके लिए तो यही भाव आया कि अगर आज भी वे हमको बुला रहे हैं तो चलो! हम आज भी उनके लिए तैयार हैं और वह वहाँ पहुँचती है लेकिन वहाँ जा करके देखती है कि माहौल ही बिलकुल अलग है। मैं तो सोच रही थी कि चलो! मुझे बुलाया गया है, राजमहल में फिर से रखा जाएगा और यहाँ पर आकर के वह फिर से गर्मी खा रहे हैं। मैं तुझे देखना नहीं चाहता, तू यहाँ से चली। अगर तू अग्नि परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाएगी, लोक अपवाद से रहित हो जाएगी तो मैं तुझे स्वीकार करूँगा अन्यथा तुझे यहाँ से मैं स्वीकार करनेवाला नहीं हूँ। समझो! कितनी बड़ी जिल्लत उसने उस समय पर झेली होगी चौथी बार भी और उसके बाद उसने पति के भाव में आकर के कि चलो! तुम्हारे लिए लोक अपवाद से रहित तुम्हारा जीवन बने इसलिए तुम्हारे लिए, मैं अग्निपरीक्षा देने के लिए भी तैयार हूँ और उसने अग्निपरीक्षा दी।

सीता का संकल्प- धर्म की शरण में जाकर के आर्यिका के व्रत ही धारण करूँगी

अब जब अग्निपरीक्षा देने के बाद चौथी बार उसने इस राग का परिणाम भोगा, मैं आपको बता रहा हूँ, यह राग का परिणाम देखो कितना-कितना भोगना पड़ता है? आप कितना भोगते हो? आप उसकी counting करना। अब मैं तो वही उसी की बता सकता हूँ कि जो general हो। मैं अगर आपका उदाहरण दे करके आप को बताने लगूँ तो आप भी हमारे ऊपर case कर दोगे कि महाराज! यह आप को क्या आ गया हमारे बोलने का? इसलिए मैं आपको बता रहा हूँ कि देखो! इतने बड़े-बड़े कार्य होने के बावजूद भी उस स्त्री ने, अंत-अंत में अपने आप को सम्भाला और फिर जब राम ने उसकी स्वीकारता दी तब वह कहती है- नहीं! अब हमें इस राज्य की जरूरत नहीं और अब हमने देख लिया कि एक राग के कारण से हमारे लिए कितना दुःख मिला? कितना बंधन मिला? अब हमें इस बंधन की स्वीकारता नहीं है। इसलिए अब मैंने प्रण कर लिया है कि इस अग्निपरीक्षा के बाद मेरी रक्षा धर्म ने की है, तो मैं अब धर्म की शरण में जाकर के आर्यिका के व्रत ही धारण करूँगी और कोई काम नहीं करूँगी।

सम्यग्दर्शन की रक्षा सम्यग्चारित्र से होती है, व्रतों के माध्यम से होती है

इतना बड़ा उसके अन्दर ज्ञान था तभी आचार्य उस सीता का नाम इन प्रकरणों में लेते हैं, जिसके माध्यम से वह आर्यिका बनने के बाद में सोलहवे स्वर्ग में गई और अभी भी वह स्वर्ग में ही हैं और स्वर्ग से उतरने के बाद में वह मनुष्य पर्याय को धारण करेगी और अपने अलग-अलग तरीके से उसके लिए तरह तरह की उसको सब चीजें मिलेगी, वैभव-संपन्न हर तरीके का भाव मिलेगा। लेकिन कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक व्यक्ति अपने जीवन का उद्धार करने के लिए इन व्रतों की शरण में नहीं आता, सम्यग्चारित्र का पालन करने का भाव मन में नहीं आता तब तक उसके लिए आगे कोई भी मोक्ष का रास्ता है, मोक्ष का मार्ग है, तो सुदृढ़ रूप से बना हुआ है, यह कभी भी ग्रहण करने में नहीं आ सकता। सम्यग्दर्शन के भाव से आपका भाव चल तो जाएगा लेकिन उस सम्यग्दर्शन की रक्षा भी सम्यग्चारित्र से होती है, व्रतों के माध्यम से होती है क्योंकि वह सम्यग्दर्शन भी है कि नहीं इस बात की परीक्षा भी आपका सम्यग्चारित्र ही दिलाएगा। क्योंकि जब तक आप कुछ अर्पित नहीं करोगे, जब तक आप कुछ sacrifice नहीं करोगे तब तक आपके लिए कैसे समझ आएगा कि आपके अन्दर धर्म है? यह भी एक बहुत बड़ा sacrifice है कि नहीं। धर्म के लिए सबकुछ छोड़ देना, किस धर्म के लिए? कोई बाहर का धर्म नहीं है, अपने ही आत्म-धर्म के लिए। जिसे यह विश्वास है कि हमारी पर्याय केवल इतनी ही नहीं है, पिछली भी थी और आगे भी होगी और जो हमें यह कष्ट मिल रहा है, वह पिछली पर्याय के कर्मों के कारण से मिल रहा है। आगे हमें जो कुछ भी सुख मिलेगा तो इस पर्याय में किये गए अच्छे कार्यों के कारण से मिलेगा तो उस व्यक्ति के लिए अपने चरित्र को अच्छा बनाने का भाव आएगा ही, क्यों नहीं आएगा? इसलिए स्त्रियों के बारे में कहीं पर भी आप यह मत समझना कि स्त्रियों की केवल आचार्यों ने निंदा ही की है, प्रशंसा भी की है। सुन रहे हो? दस गाथाओं में अगर आप को लगा हो निंदा की है, तो आज आपके लिए ग्यारवीं गाथा में आचार्यों ने उसमें नाम लिख करके कहा है कि देखो! कितनी महान महान स्त्रियाँ हुई हैं कि तीर्थंकर के माँ को भी दुनियाँ में से सब से ज्यादा पूज्य दृष्टि से देखा जाता है, यह स्त्री पर्याय के कारण ही ऐसा हुआ है। क्या समझ आ रहा है? ऐसी सती स्त्रियों के नाम, ये तो बड़े आदर के साथ लिये ही जाते हैं। जो अपनी कुल की मर्यादाओं के साथ में चलती हैं, अपनी चरित्र के साथ में चलती हैं, उन स्त्रियों की प्रशंसा भी की है और जहाँ आपके लिए यह कहा जाता है, किसी भी प्रकार से कि आपको अपने धर्म का निर्वाह करने

के लिए तो तैयार रहना है लेकिन जो आपका शरीर गत धर्म है, जो भी आपके अपने पर्याय गत धर्म है, उसमें किसी भी प्रकार से आपको अपनी स्वच्छंदता नहीं अपनाना। उसमें भी आपको मर्यादित तरीके से ही अपना धर्म अपनाना है। यह भी आपके लिए कोई भी रोक नहीं है। यह भी आपके धर्म का पालन करने के लिए ही बताया गया है।

स्त्री पर्याय की विशेषता सुननी हो तो आपको मूकमाटी पढ़नी पड़ेगी

हम अपने धर्म को कैसे अच्छे ढंग से पालन करें? इसके लिए आचार्यों ने बहुत अच्छी व्यवस्थाएँ दी हैं और कहीं पर भी अगर आपको यह सुनने को मिलता है कि जैन आचार्यों ने स्त्रियों के बारे में ऐसा लिखा, वैसा लिखा, स्त्रियों के शरीर में ऐसा होता है, वैसा होता है तो यह उनकी वास्तविकता है और इस वास्तविकता को बताकर के भी पुरुष को स्त्री से विरक्त कराने का भी एक भाव रहता है। क्योंकि मोक्ष का सही मार्गी कौन है? वह कौन है? पूर्ण रूप से सही मार्गी कौन है? वह पुरुष होता है, जो मोक्ष के मार्ग पर चल रहा होता है। उससे विरक्त कराने के लिए, स्त्री के प्रति अनासक्ति भाव लाने के लिए भी स्त्री के स्वरूप के बारे में बताया जाता है लेकिन आप यह नहीं समझना कि स्त्री का स्वरूप हमेशा निंदित तौर पर ही बताया जाता है। वर्तमान में आचार्य महाराज ने स्त्रियों के गुणों की बहुत अच्छी अच्छी व्याख्याएँ की हैं। आचार्य महाराज ने स्त्रियों के अन्दर जो छुपे हुए अच्छे गुण हैं उनको प्रकट करने के लिए अपनी मुकमाटी में बहुत अच्छे अच्छे भाव लिखे हैं, जो पहले कभी सुनने में नहीं आए। क्या सुन रहे हो? कहीं स्त्रियाँ कहती हैं कि महाराज! थोड़ी हमारे गुणवत्ता भी आप बताया करो, जिसके माध्यम से हमें लगे कि हमारी स्त्री पर्याय भी बहुत कुछ काम की है। हमने कहा भाई! अब आपकी स्त्री पर्याय की गुणवत्ता जितनी प्रवचनसार में आचार्य कुन्दकुन्द देव बता सकते हैं, आचार्य जयसेन महाराज टीका करके बता सकते हैं, उतनी ही हम बता सकते हैं। अब इससे ज्यादा अगर आपको स्त्री पर्याय की विशेषता सुननी हो तो आपको मुकमाटी पढ़नी पड़ेगी। मैं सोच रहा था कि इन स्त्रियों को बताया जाए कि देखो! आचार्य महाराज ने स्त्रियों के गुणों के बारे में कितनी अच्छी-अच्छी बातें लिखी। कुछ मुकमाटी की मैं पंक्तियाँ पढ़ने को तैयार हो रहा हूँ।

"स्त्री जाति की कई विशेषताएँ हैं, जो आदर्श रूप हैं पुरुष के सम्मुख"।।

सुन रहे हो पुरुषों, अब थोड़ी मुख्य-गौणता के भाव में रहना -

प्रति पल परतंत्र होकर भी पाप की, पालड़ी भारी नहीं पड़ती पल भर भी।

क्या कह रहे हैं?-

पाप की पालड़ी भारी नहीं पड़ती पल भर भी, इनमें पापभीरुता पलती रहती है।

अन्यथा स्त्रियों का नाम भीरु क्यों पड़ा?

देखो! स्त्रियों का एक नाम है- भीरु। आचार्य कुन्दकुन्द देव पिछली गाथा में लिख कर के आए हैं कि स्त्रियों के अन्दर भय रहता है। यह एक सोच हो सकती है कि भय रहता है, तो किससे रहता है? एक तो डरपोकपना पड़ा रहना, हमेशा डरते रहना, भयभीत रहना यह भी स्त्रियों का एक स्वभाव होता है। आचार्य महाराज यहाँ पर कह रहे हैं कि स्त्रियों का नाम भीरु इसलिए पड़ा, भयभीत वे रहती हैं इसलिए क्योंकि वे पाप से डरती हैं इसलिए सबसे ज्यादा वे पुण्य करती हैं। पाप से जो डरे उसका नाम क्या है? भीरु! पापभीरु! पाप से डरना।

प्रायः पुरुषों से बातें होकर ही, कुपथ पर चलना पड़ता हैं स्त्रियों को परंतु..

पुरुषों से बातें होकर के ही, स्त्रियों को चलना पड़ता हैं कुपथ पर

कुपथ जानते हो? मतलब कई बार ऐसा सुनने में आता है, स्त्रियों के लिए भी कुछ काम ऐसे करने पड़ते हैं जो उनकी इच्छा में नहीं होते हैं तो भी पुरुषों के कारण ऐसा करना पड़ता है। बता दूँ! एक-आद उदाहरण दे दूँ क्या? पुरुषों के सामने ही दे दूँ? कई बार कुछ स्त्रियों के लिए ऐसा देखने सुनने में आया वे बिलकुल simple रहना चाहती हैं। उन्हें कोई शौक नहीं है कि मैं lipstick लगाऊँ, उन्हें कोई शौक नहीं है कि मैं तरह-तरह के powder लगाऊँ और तरह-तरह के वस्त्र पहनकर के बाजार में घुमूँ लेकिन उनका पति उन्हें बात करता है कि नहीं! तुम्हें ऐसे ही सज-धज कर हमारे साथ चलना होगा। कुछ बताओ तो सच्चाई है कि नहीं है? अब ताली कौन बजाएगा? पुरुष बजाएगा कि स्त्री बजाएगी? अगर उसे अपनी पार्टी में कहीं पर ले जाना है, किसी function में ले जाना है, तो वह pressure डालता है कि नहीं! तुझे यही प्रकार की साड़ी पहननी है, तुझे इसी प्रकार का, makeup करना है, तुझे ऐसे ही चीजें पहनकर हमारे साथ चलना है। कोई क्या कहेगा, इसकी पत्नी कैसी है? महिलाएँ @बताती हैं कि jeans top भी पहनाने लगे हैं, आजकल के पुरुष और वे इस भेष में पार्टियों में ले जाते हैं और वहाँ पर नाचते हैं और साथ में सबके सामने नचवाते हैं, ऐसा भी देखने में, सुनने में आने लगा है। आप समझो कि यह ही भाव है, जो आचार्य

महाराज यहाँ लिख रहे हैं, कुपथ पर ले जाने का। दूसरों के सामने, समूह के बीच में, किसी भी प्रकार के अर्ध-वस्त्रों में या किसी भी प्रकार के गंदे भावों के साथ में रहना और उसके लिए प्रेरित करना यह पुरुषों के माध्यम से स्त्रियों के लिए हो रहा है।

कुपथ क्या और सुपथ क्या? सही रास्ता क्या और गलत रास्ता क्या?

स्त्रियाँ अगर कुपथ पर आ गई हैं तो उसमें बहुत बड़ा कारण यह आदमी है, इनकी गंदी मानसिकताएँ हैं। मैं इस बात को कह सकता हूँ और इस बात को समझ कर के आपको यह ध्यान में रखना है कि हमें preferance अगर देना है, तो उसकी शालीनता को ही देखना है। वह धर्म के अगर मार्ग पर चल रही है, वह अगर सद्चरित्र का पालन करने के लिए उत्सुक होती है तो पुरुषों को उसे बिगाड़ने के लिए उसे pressure नहीं डालना चाहिए, यह बात भी मैं पुरुषों से कह सकता हूँ। क्योंकि यह अगर दबाव आता है तभी कई बार इस प्रकार की बातें हो जाती हैं और बिगड़ने के भाव आ जाते हैं और बिगड़ते-बिगड़ते जब वह ज्यादा बिगड़ जाती है, तो फिर आप उसके लिए और घर से बाहर निकालना, तलाक देना, गालियाँ देना यह सब करना भी स्त्रियों को आज भी झेलना पड़ता है। समाज कितनी ही सभ्य हो गई हो लेकिन आज भी बहुत सी स्त्रियाँ पुरुष के pressure में उसी की अनुसार आज भी चल रही हैं और उनको चलना पड़ता है। यही चीज यहाँ आचार्य महाराज लिख रहे हैं कि यह कुपथ पर ले जाने का भाव भी अगर उनके अन्दर आता है, तो यह अपने मन से कम आता है, उन्हें पुरुषों के माध्यम से ज्यादा करना पड़ता है, तो

कुपथ सुपथ की परख करने में, प्रतिष्ठा पाई है स्त्री समाज ने"।

यह अच्छा पथ है, यह बुरा पथ है। अगर स्त्री समाज आज सुन रही है, तो यह भी वह समझे कि उनके अन्दर इतना विवेक पहले था और आज भी है और आगे भी रहना चाहिए कि उन्हें इतना विवेक होना चाहिए कि कुपथ क्या और सुपथ क्या? सही रास्ता क्या और गलत रास्ता क्या? यह पहले स्त्री के अंदर रहता था।

"इनकी आँखें हैं करुणा की कारिका, शत्रुता छू नहीं सकती उन्हें।
मिलनसारी मित्रता, घुलती मिलती रहती हैं इनमें
ये ही कारण हैं, इनका सार्थक नाम हैं नारी
यानि न अरी नारी अथवा ये अरी नहीं हैं सो नारी।

अरी मतलब शत्रु कहलाता है, जिनका कोई शत्रु नहीं होता। न अरी मतलब शत्रु नहीं जिनका कोई, इसलिए इनको क्या बोलते हैं? नारी। यह दूसरी व्याख्या हो गई। अलग-अलग शब्दों के माध्यम से आचार्य महाराज ने व्याख्या की है, तो हमे भी आज के प्रसंग मिल गया कि हम भी थोड़ा सा मूकमाटी के अनुसार थोड़ा सा पढ़ ले और सुना दे। नारी का मतलब जिसके लिए जिसका कोई शत्रु नहीं हो, हर किसी को वह अपने प्रेम भाव और करुणा भाव से देखने की क्षमता रखती है, उसका नाम होता है- नारी और उसके आगे कहते हैं, उसका एक नाम है- महिला। क्या नाम है? सुनो क्यों कहते है?

"जो मह यानि मंगलमय माहौल महोत्सव

जीवन में लाती है महिला कहलाती हैं वह"।।

महिला क्या कहलाती है? जो मह मतलब होता है- महोत्सव, मंगलमय माहौल जीवन में लाती है, वह महिला कहलाती है।

"जो निराधार हुआ, निरालंब आधार का भूखा,
जीवन के प्रति उदासीन हतोत्साहित हुआ
उस पुरुष में महि यानि धरती, धरती माने धारणा जननी के प्रति
अपूर्व आस्था जगाती हैं और पुरुष को रास्ता बताती हैं
सही सही गंतव्य का महिला कहलाती है वह"।

महि मतलब धरती। धरती का मतलब धैर्य। कभी-कभी पुरुष का धैर्य जब टूटता है, तो महिला उसके धैर्य को बढ़ाती है और उसे सही रास्ते पर लाती है, इसलिए भी उसका नाम महिला है। इतना ही नहीं और सुनो, सुनना है? आज तो कहोगे हाँ! सुनना है-

"जो संग्रहिणी व्याधि से ग्रसित हुआ हैं जिसकी संयम की जठराग्नि मंद पड़ी है।

परिग्रह संग्रह से पीड़ित पुरुष को महि यानि मठा महिरी पिलाती है।

महिला कहलाती हैं वह"।

क्या समझ आया? महि मतलब तीसरा अर्थ महि का क्या होता है? महि मतलब होती है- मठा महिरी, तो जो महि बनाकर के पिलाती है इसलिए वह कहलाती है- महिला, जिसके माध्यम से उसकी जठराग्नि अच्छी हो जाती है और फिर वह संयम के पालन में अपने भाव को लगा देता है। इसलिए वह महिला कहलाती है। जो अबला अब सुनो! एक उसका

नाम क्या है? अबला। आचार्यों ने तो पहले यह कहा है कि जो दुर्बल हो, उसका नाम अबला होता है लेकिन यहाँ आचार्य महाराज कह रहे हैं -

"जो अब यानी अबगम मानी ज्ञानज्योति जलती हैं

तिमिर तामसता मिटाकर के जीवन को जागृत करती है, अबला कहलाती है, वह।

अथवा जो पुरुष चित्त की वृत्ति को विगत की दशाओं से

और अनागत की आशाओं से पूरी तरह हटाकर

अब यानि आगत वर्तमान में लाती हैं, अबला कहलाती है वह"।

अब मतलब वर्तमान में जो ले आती है और पिछले भावों से हटाकर के जो उसे एक वर्तमान की भावों में लाकर स्थित कर देती हैं इसलिए भी वे अबला कहलाती हैं।

"बला यानि समस्या, संकट हैं"

अब इसका, अबला का एक और अर्थ क्या हो रहा है? बला मतलब जैसे बोलते हो, बला आ गई, स्त्री को बला मत समझो। वह आपकी बला को टालने वाली है इसलिए इसका नाम अबला है। यहाँ कहा जा रहा है-

"बला यानि समस्या संकट हैं, न बला सो अबला माने समस्या शून्य समाधान"

स्त्री का मतलब क्या है? गले उतर रही पुरुषों के बात कि नहीं? ये तो सोच रहे भाई! यह तो बला है और यहाँ कहा जा रहा है- यह अबला है। देखो! अनेकांत दर्शन के माध्यम से कम से कम अपने भावों को दोनों रूप में तो बनाकर के रखो। एक ही रूप बनाकर के रखोगे तो फिर आप अनेकांत दर्शन के ज्ञाता कैसे कहलाओगे? एक भी बार ताली नहीं बजाई, अब कैसे बजाओगे ताली? ताली तो आपको बजानी है।

"समस्या शून्य समाधान अबला के अभाव में

सकल पुरुष भी निर्बल बनता है,

समस्त संसार हो फिर समस्या सबूत

सिद्ध होता हैं इसलिए स्त्रियों का

ये अबला नाम सार्थक है”

मतलब कई बार स्त्रियों के लिए बल देने का भाव पुरुषों को आता है और पुरुषों के लिए भी जब वह कई प्रकार से अपने लिए असमर्थ पाते हैं तो स्त्रियाँ उनकी सहायता करती हैं। जैसे कैकेयी ने दशरथ की सहायता की थी, बहुत बलवान स्त्री थी। ऐसी अन्य भी स्त्रियाँ होती हैं। इसी तरीके से एक नाम हैं- उसका कुमारी। क्या बोलते हैं?-

“कु यानि पृथ्वी, मा यानि लक्ष्मी

और री माने देनेवाली

इससे कुल मिलाकर

भाव निकलता है कि ये धरा, संपदा, संपन्ना

तब तक रहेगी जब तक यहाँ कुमारी रहेगी

यही कारण है कि संतों ने इन्हें

प्राथमिक मंगल माना है

लौकिक सब मंगलों में”

इसलिए कुमारी कन्या को मंगल कार्यों में सबसे आगे रखा जाता है और कई मंगल कार्य कुमारी कन्याओं से कराए जाते हैं और विवाहित सौभाग्यवती स्त्रियों से कराए जाते हैं। जब भी कोई मंगल कार्य प्रारम्भ होता है, ये सब जानते हैं। इसलिए स्त्रियाँ मंगल का प्रतीक हैं। पुरुष को तो कई मंगल में रखा ही गया वैसे देखा जाए तो। नाम पहले सौभाग्यवती स्त्री

का लिया जाता है, उसके साथ पुरुष आ जाए बात अलग है लेकिन नाम तो पहले महिला का ही आता है, तो यह भी पूर्व आचार्यों की परंपरा रही है कि मंगलता का भाव स्त्रियों में रहता है, पुरुष में नहीं होता है।

"धर्म अर्थ और काम पुरुषार्थों से गृहस्थ जीवन शोभा पाता है

इन पुरुषार्थों के समय प्रायः पुरुष ही पाप का पात्र होता है

वह पाप पुण्य में परिवर्तित हो इसी हेतु स्त्रियाँ प्रयत्न शीला रहती है सदा

पुरुष की वासना संयत हो और पुरुष की उपासना संयत हो

यानि काम पुरुषार्थ निर्दोष हो बस इसी प्रयोजनवश वह गर्भ धारण करती हैं ..

संग्रह वृत्ती और अपव्यय रोख से पुरुष को बचाती है सदा

अर्जित अर्थ का समुचित वितरण करके

दान, पूजा, सेवा आदि सत् कर्मों को गृहस्थ धर्मों को सहयोग दे

पुरुष से कम कर, पुरुष से करा कर

धर्म परंपरा की रक्षा करती हैं यूँ स्त्री शब्द ही स्वयं गुनगुना रहा है कि

अब स्त्री शब्द की व्याख्या है

स यानि समशील संयम है, त्र यानि तीन अर्थ हैं-

धर्म अर्थ और काम पुरुषार्थ में पुरुष को कुशल संयत बनाती हैं

सो स्त्री कहलाती है

एक स्त्री नाम है- सुता -

सुख चाहने वाले सुनो! सुता शब्द स्वयं सुना रहा हैं कि

सु यानि सुहावनी अच्छाइयाँ और ता प्रत्यय वह

भाव धर्म संसार के अर्थ में होता है

यानि सुख सुविधाओं का स्त्रोत सो सुता कहलाती हैं

यहीं कहती हैं श्रुत सूक्तियाँ।

अब इसका एक नाम है- दुहिता

दो हित जिसमें नहीं धो

वह दुहिता कहलाती है।

क्या नाम है? दुहिता, जिसे आप अपनी बोलते हो न दोहिती तो उसी के लिए
अपना हित स्वयं ही कर लेती हैं,

पतित से पती का जीवन भी हित से सहित होता हैं

जिससे वह दुहिता कहलाती है

उभय कुल मंगलवर्धीनी, उभय लोक सुख सर्जिनि

स्व-पर हित संपादिका कहीं रहकर किसी तरह भी

हित का दोहन करती रहती सो दुहिता कहलाती है।

हमें समझना है, मातृ शब्द का महत्व भी

प्रमाण का अर्थ होता है- ज्ञान

प्रमेय यानि ज्ञेय और

प्रमातृ को ज्ञाता कहते हैं संत

प्रमातृ को ज्ञाता कहते हैं संत

जानने की शक्ति वह

मातृ तत्व के सिवाय अन्य कही भी

उपलब्ध नहीं होती है।

प्रमातृ मतलब होता है- प्रकृष्ट रूप से जानने वाला उसको कहते हैं- प्रमातृ! यहाँ कह रहे हैं कि जो माता होती है, वही सबसे अच्छे ढंग से हर चीज को जानने वाली होती है।

यही कारण है कि यहाँ कोई पिता पितामह, पुरुष नहीं है, जो सबकी आधारशिला हो जो सबकी जननी मातृ, मातृ तत्व हैं, मातृ तत्त्व कि अनुपलब्धि में

ज्ञेय ज्ञायक संबंध ठप्प

ऐसी स्थिति में तुम ही बताओ

सुख शांति मुक्ति वह किसे मिलेगी?

क्यों मिलेगी? किस व्यत्

इसलिए इस जीवन में उसी माता का

मान सम्मान हो उसी का,

जयजय गान हो.. धन्य धन्य !!

सदियों सदुपदेश देती आ रही है, पुरुष समाज को यह

अनंग के संग से अंगारित होने वाली सुनो जरा सुनो तो

स्वीकार करती हूँ कि मैं अंगना हूँ।

इसका एक और नाम क्या है? अंगना। बहुत अच्छी व्याख्या है-

परंतु, मात्र अंग न हूँ

अंग मतलब क्या होता है? शरीर। वह कह रही है कि मैं अंगना इस शब्द से ही कह रही हूँ कि मैं केवल अंग मतलब शरीर मात्र नहीं हूँ और भी कुछ हूँ मैं-

अंग के अंदर भी कुछ झाँकने का प्रयास करो

अंग के सिवा भी कुछ माँगने का प्रयास करो

जो देना चाहती हूँ लेना चाहते हो तुम

सो चिरंतन शाश्वत है, सो निरंजन भास्वत है

भार रहित आभार, आभा का भार मानो तुम

सो मतलब वह, उस ओर वह दृष्टि ले जाती है कि मैं वह हूँ, जिसे हम कहते हैं- **सोहम् सोहम् सोहम्** वह चेतना उसमें भी है, जो चेतना आप के अन्दर है। जिसे आप कहते हैं- वह मैं सोहम् वही चेतना उसके अन्दर भी है- **सोहम् सोहम् सोहम्।**

समझ आ रहा है? बोलो! महावीर भगवान की जय।